BAJY - 201/बी०ए०जे०वाई०- 201

जातक शास्त्र एवं फलादेश के सिद्धान्त

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,

तीनपानी बाई पास रोड, ट्रान्सपोर्ट नगर के पास, हल्द्वानी - 263139

फोन नं. 05946 - 261122, 261123

टॉल फ्री नं. 18001804025

फैक्स नं. 05946-264232, ई-मेल info@uou.ac.in

http://uou.ac.in

पाठयक्रम समिति

प्रोफे0 एच0पी0 शुक्ल
निदेशक, मानविकी विद्याशाखा
उ0मु0वि0वि0, हल्द्वानी

डॉ0 देवेश कुमार मिश्र
सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग
उ0मु0वि0वि0, हल्द्वानी

डॉ0 संगीता वाजपेयी
अकादमिक एसोसिएट , संस्कृत विभाग
उ0मु0वि0वि0, हल्द्वानी

प्रोफे0 देवीप्रसाद त्रिपाठी
ज्योतिष विभाग
श्री ला0ब0शा0सं0वि0, नई दिल्ली

प्रोफे0 वासुदेव शर्मा
अध्यक्ष, ज्योतिष विभाग
रा0सं0सं0 , भोपाल परिसर

डॉ0 नन्दन कुमार तिवारी
अकादमिक एसोसिएट , ज्योतिष विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी

पाठ्यक्रम सम्पादन एवं संयोजन

डॉ0 नन्दन कुमार तिवारी
अकादमिक एसोसिएट , ज्योतिष विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी

इकाई लेखन	खण्ड	इकाई संख्या
डॉ0 नन्दन कुमार तिवारी अकादमिक एसोसिएट , ज्योतिष विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी	1	1,2,3,4
डॉ0 नन्दन कुमार तिवारी अकादमिक एसोसिएट , ज्योतिष विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी	2	1,2,3,4,5
डॉ0 नन्दन कुमार तिवारी अकादमिक एसोसिएट , ज्योतिष विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी	3	1,2,3,4,5
डॉ0 शुभास्मिता मिश्रा सहायक आचार्या , ज्योतिष विभाग, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, जयपुर परिसर	4	1,2,3,4,5,6

प्रकाशन वर्ष : 2014

ISBN No. - 978-93-84632-79-3

प्रकाशक : उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी

मुद्रक : उत्तरायण प्रकाशन , हल्द्वानी, नैनीताल - उत्तराखण्ड

अनुक्रम

बी.ए.ज्योतिष

द्वितीय वर्ष

प्रथम पत्र

जातक शास्त्र एवं फलादेश के सिद्धान्त

खण्ड - 1

जातक स्कन्ध

इकाई – 1 जातक शास्त्र का परिचय

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 जातक शास्त्र का परिचय

1.3.1 जातक शास्त्र की परिभाषा व स्वरूप

1.3.2 जातक शास्त्र के भेद

बोध प्रश्न

1.4 सारांशः

1.5 पारिभाषिक शब्दावली

1.6 बोधप्रश्नों के उत्तर

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1.8 सहायक पाठ्यसामग्री

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना -

प्रस्तुत इकाई प्रथम खण्ड के **'जातक शास्त्र के परिचय' नामक** शीर्षक से संबंधित है। **जातक शास्त्र** त्रिस्कन्ध ज्योतिष में होरा या फलित स्कन्ध के अन्तर्गत आता है।

ग्रहनक्षत्रादि के प्रभाव से व्यक्तिगत जीवन की शुभाशुभ घटना का अध्ययन जिस स्कन्ध में किया जाता है, उसे **जातक या होरा शास्त्र** कहते है।

इससे पूर्व की इकाईयों में आपने ज्योतिष शास्त्र क्या हैं, तथा उसके सिद्धान्त, स्कन्धादि विषयों का ज्ञान कर लिया है। यहाँ हम इस इकाई में जातक शास्त्र सम्बन्धित विषयों का अध्ययन विस्तार पूर्वक करेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप -

- जातक शास्त्र को परिभाषित करने में समर्थ हो सकेंगे।
- जातक शास्त्र के महत्त्व को समझा सकेंगे।
- जातक शास्त्र के विभेद का निरूपण करने में समर्थ होंगे।
- जातक शास्त्र का स्वरूप वर्णन करने में समर्थ होंगे।
- जातक शास्त्र के सम्बन्ध को निरूपित करने में समर्थ होंगे।

1.3 जातक शास्त्र का परिचय

भारतीय ज्योतिष शास्त्र को तीन स्कन्धों में बॉटा गया है – सिद्धान्त, संहिता व होरा। जिस स्कन्ध में होरा (जातक) , ताजिक, मुहूर्त, प्रश्नादि का विचार कर व्यष्टिपरक या व्यक्तिगत फलादेश बताया जाता है, उसे **जातक या होरा शास्त्र** कहते है। सामान्यत: होरा शब्द का अर्थ होता है – काल अर्थात् काल नियामक होरा शब्द है। एक दिन – रात 24 घंटे का होता है। इसमें 24 काल होरा होती है। इसके आधार पर ही भारतीय वार गणना सिद्ध होती है।

स्पष्ट है कि ढाई घड़ी की एक होरा होती है । ये होरायें अहोरात्र में होती हैं इसलिये अहोरात्र शब्द के आदि के अ अक्षर और अन्त के त्र अक्षर का लोप करने से अहोरात्र शब्द से होरा शब्द निष्पन्न होता है। **सारावली** नामक ग्रन्थ में लिखा है कि –

आद्यन्तवर्णलोपाद् होराशास्त्रं भवत्यहोरात्रात्।
तत्प्रतिबद्ध: सर्वे ग्रहभगणाश्चिन्त्यते यस्मात्।।

होरेति शास्त्रसंज्ञा लग्नस्य तथार्द्धराशेश्च ।।

वृहज्जातक में भी लिखा है –

होरेत्यहोरात्रविकल्पमेके

वाञ्छन्ति पूर्वापरवर्णलोपात् ।

कर्मार्जितं पूर्वभवे सदादि

यत् तस्य पंक्तिं समभिव्यनक्ति ।।

अर्थ स्पष्ट हैं कि चौबीस होराओं में 1 अहोरात्र और अहोरात्र से होरा शब्द का निर्माण होता है । यह अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है । अथवा विद्वदवर्ग शुभाशुभ कर्मफल सूचक शास्त्र को **होरा** कहते है, अथवा होरा यह लग्न की संज्ञा है या लग्न के आधे भाग की संज्ञा को होरा कहते है । इससे भी यह सिद्ध होता है कि बारह लग्न दिन – रात्रि में पूर्ण होते है, और उन लग्नों के आधार पर समस्त प्राणियों के शुभाशुभ जाने जाते हैं, अर्थात् प्राणियों की जन्मकालीन ग्रह संस्था या तिथि नक्षत्रादिकों द्वारा उनके जीवन में आने वाले सुख – दु:खादि का निर्णय जिस शास्त्र से होता है उसे **होरा शास्त्र या जातक शास्त्र** कहते है । इसलिये अहोरात्र शब्द से ही होरा शब्द निष्पन्न होता है । अहोरात्र का दूसरा नाम होरा होता है । अहोरात्र के पूर्व वर्ण 'अ' और अन्त्यवर्ण 'त्र' के लोप होने से बीच के होरा ये दो अक्षर शेष रह जाते है । होरा **लग्न** को भी कहते है । यह होरा मनुष्य के पूर्व जन्मार्जित शुभाशुभ कर्मफल को प्रकाशित करता है ।

ज्योतिष के ग्रन्थों में भी होरा शब्द का लक्षण इस प्रकार से किया गया है – **पितामह – नारद-वसिष्ठ कश्यपादि सुनिर्मितं ज्योतिश्शास्त्रैकस्कन्धरूपं जन्मनानाविधफलादेशफलकं वेदचक्षुरूपं द्विजानामध्ययनीयं शास्त्रं होराशब्दवाच्यम्** । अथवा जो कि संसार में प्रसिद्ध जातक शास्त्र है वही होरा शास्त्र है अथवा होरा यह शब्द भाग्य विचार का पर्यायवाची है । कल्याण वर्मा ने सारावली नामक ग्रन्थ में कहा है –

जातकमिति प्रसिद्धं यल्लोके तदिह कीर्त्यते होरा ।

अथवा दैवविमर्शनपर्याय: स्वल्वयं शब्द: ।।

ब्रह्मा जी जीव की उत्पत्ति के समय में उसके मस्तक पर जो पूर्व जन्मार्जित शुभाशुभ कर्म होता है उसे अंकित कर देते है । उस कर्मपंक्ति का ज्ञान इस होरा शास्त्र से जैसे अन्धकार में रखी हुई वस्तु का भान दीपक से होता है उसी प्रकार इससे होता है । जातक सारदीप में कहा है –

या ब्रह्मणा विलिखिता नरभालपट्टे

प्राग्जन्मकर्मसदसत्फलपाकशस्ति: ।

होरा प्रकाशयति तामिह वर्णपंक्ति

दीपो यथा निशि घटादिकमन्धकारे ।।

होरा लक्षण –

पितामह – नारद- वसिष्ठ – कश्यपादिसुनिर्मितं ज्योतिश्शास्त्रैकस्कन्धरूपं

जन्मनानाविधफलादेशफलकं वेदचक्षुरूपं द्विजानामध्ययनीयं शास्त्रं होरा शब्दवाच्यम् ।

पितामह नारद वसिष्ठ कश्यपादि ऋषियों द्वारा निर्मित ज्योतिष शास्त्र का एक स्कन्ध रूप जन्मांग के अनेक प्रकार के फलों से युक्त वेद का नेत्र स्वरूप व ब्राह्मणों के पढ़ने योग्य शास्त्र होरा नामक शब्द है।

जातक शास्त्र की प्रशंसा जातकरत्नमाला ग्रन्थ के अनुसार –

पाटी- कुट्टक बीजमन्दिरपदारूढ़ोऽपि ये प्रौढधी:
सिद्धान्तोक्तसहस्रयुक्तिचटुलो नो वेत्यसत्सत्फले ।
होरातन्त्रमनन्तयुक्तिविहितं दैवज्ञवृन्दे तथा
राज्ञां सत्सदसि प्रगल्भगणको हास्यं परं गच्छति ।।

जो परम बुद्धिमान् पाटी – कुट्टक- बीजादि गणित का ज्ञाता व सिद्धान्त ग्रन्थोक्त सहस्रों युक्तियों का ज्ञाता होकर भी, अनन्त युक्तियों से युक्त होराशास्त्र में कथित शुभ व अशुभ फल को नहीं जानता है वह ज्योतिर्विदों के समुदाय में एवं राजा की सभा में प्रौढ़ ज्योतिर्विद भी हास्य का पात्र होता है, ऐसा जातक रत्नमाला में कहा है –

जातक शास्त्र के प्रयोजन का ज्ञान –

होराशास्त्रप्रयोजनमुक्तं सारावल्याम्
अर्थार्जने सहाय: पुरूषाणामापदर्णवे पोत: ।
यात्रो समये मन्त्री जातकमपहाय नास्त्यपर: ।।

होराशास्त्र की आवश्यकता का वर्णन आचार्य कल्याण वर्मा ने इस प्रकार सारावली में किया है - मनुष्यों को धन अर्जित करने में यह होराशास्त्र सहायक होता है अर्थात् शुभ दशा का ज्ञान होने पर लाभ होता है। विपत्ति रूप समुद्र में नौका वा जहाज का कार्य करता है एवं यात्रा के समय में मन्त्री अर्थात् उत्तम सलाहकार होराशास्त्र को छोड़कर अन्य कोई नहीं हो सकता है।

वराहमिहिर ने भी स्वग्रन्थ लघुजातक में कहा है –

यदुपचितमन्यजन्मनि शुभाशुभं तस्य कर्मण: पंक्ति: ।
व्यञ्जयति शास्त्रमेतत्तमसि द्रव्याणि दीप इव ।।

प्राणी पूर्वजन्म में जो शुभाशुभ अर्जित करता है उस शुभाशुभ का ज्ञान **होरा** शास्त्र के द्वारा ही किया जाता है। जिस प्रकार अन्धकार में रखी हुई वस्तुओं का ज्ञान दीपक से होता है।

1.3.1 जातक शास्त्र की परिभाषा व स्वरूप –

ग्रहनक्षत्रादि के प्रभाव से व्यक्तिगत जीवन की शुभाशुभ घटना का अध्ययन जिस स्कन्ध में हो, उसे **होरा** कहते है।

मानवों के जन्मकालीन ग्रहस्थिति या तिथि – नक्षत्रादि द्वारा उनके जीवन में घटित होने वाले अतीत, भविष्य तथा वर्तमान के सुख – दु:खादिकों का ज्यौतिष की जिस शाखा द्वारा निर्धारण किया जाता है, उसे होरा शास्त्र या जातक शास्त्र के नाम से जाना जाता है । अरबी भाषा से अनूदित ताजिक शास्त्र भी इसी के अन्तर्गत आता है । इस होरा तथा मुहूर्त्त आदि का संयुक्त अभिधान फलित ज्योतिष है । इस भाग का सम्प्रति उपलब्ध सर्वप्राचीन ग्रन्थ वराहमिहिरप्रणीत वृहज्जातक है । इस होरा या जातक शास्त्र की प्रक्रिया शुद्ध वैज्ञानिक है । किस लग्न में उत्पन्न मनुष्य के क्या लक्षण होंगे, उसके शरीर का विचार कुण्डली के किस स्थान से किया जायेगा, इत्यादि का निर्धारण इस शास्त्र में किया गया है । उदाहरणार्थ जातक की पत्नी से सम्बन्धित समस्त विचार सप्तम स्थान से एवं राजा से सम्बन्ध रखने वाले अधिकांश बातों का विचार दशम स्थान से करना चाहिए । लग्नकुण्डली में होने वाले सभी बारहों स्थानों के नाम निर्धारित कर दिये गये हैं और वे हैं – तनु, धन, सहज, सुहृत, सुत, रिपु, जाया, मृत्यु, धर्म, कर्म, आय, व्यय । मनुष्य के बारे में फलादेश अधिकांशत: इस लग्नकुण्डली द्वारा ही किया जाता है । कभी- कभी राशिकुण्डली द्वारा भी फलादेश किया जाता है । लग्नकुण्डली से राशिकुण्डली में अन्तर यह है कि लग्नकुण्डली में प्रथम स्थान में जन्मकालीन लग्न की राशि का अंक लिखा जाता हैं, जबकि राशिकुण्डली में जन्मराशि लिखी रहती है । शेष बातें दोनों में ही समान होती है ।

नारद और वसिष्ठ के पश्चात फलित ज्यौतिष के क्षेत्र में महर्षि का पद प्राप्त करने वाले पराशर ही हुए है । इस प्रकार भारतीय ज्यौतिष के प्रवर्तकों में महर्षि पराशर अग्रगण्य है – यह नि:सन्दिग्ध है । इसीलिए कहा भी गया है – कलौ पाराशर: स्मृत: ।।

1.3.2 जातक के भेद –

ताजिक, मुहूर्त्त, प्रश्न, जातक एवं शकुन ये जातक स्कन्ध के भेद है । ताजिक खण्ड में ताजिक नीलकण्ठी, हायन रत्न आदि । मुहूर्त्त खण्ड में मुहूर्त्त चिन्तामणि, मुहूर्त्त गणपति, मुहूर्त्तमार्तण्ड, वृहद्दैवज्ञरंजन आदि एवं प्रश्नखण्ड में षटपंचाशिका, आर्या सप्तति, प्रश्नविद्या, प्रश्न शिरोमणि, जातक स्कन्ध में लघुजातक, वृहज्जातक, जातकालंकार, जातकभरणम् , जातकपारिजात, एवं शकुन में प्रश्न शकुन, शकुन विद्या आदि ग्रन्थ विशिष्ट रूप में है ।

जातक स्कन्ध के अन्तर्गत राशिशील विवेक, नक्षत्रगुण विचार, द्वादशभाव फल विचार, दशवर्ग चक्र निर्माण, दशान्तर्दशा विचार, ग्रहावस्था विचार, अष्टवर्ग व गोचर विचार, सुदर्शन चक्र विचार, द्वादश लग्न विचार, ग्रहभाव फल विवेक, विविधियोग, ताजिक प्रकरण, संस्कार प्रकरण, विवाह संस्कार विचार, वास्तु प्रकरण, यात्रा प्रकरण, मुहूर्त्त परिशेष प्रकरण, प्रश्न प्रकरण आदि विषयों का अध्ययन किया जाता है । यद्यपि जातक स्कन्ध का अत्यन्त विस्तृत क्षेत्र है, तथापि यहॉ हम जातक स्कन्ध के महत्वपूर्ण विषयों का उल्लेख करते है ।

ज्योतिष शास्त्र के तीनों स्कन्धों का लक्षण – जिस स्कन्ध या विभाग में त्रुटि से लेकर प्रलय काल तक की गई गणना हो , सौर, सावन, नाक्षत्रादि मासादि कालमानों का प्रभेद बतलाया गया हो, ग्रह संचार का विस्तार से विवेचन किया गया हो तथा गणित क्रिया को उपपत्ति द्वारा समझाया गया हो, पृथवी, नक्षत्रों व ग्रहों की स्थिति का वर्णन हो तथा ग्रहसाधनादि में उपयोगी यन्त्रों व उपकरणों का विवरण प्रस्तुत किया गया हो, वह **सिद्धान्त** कहलाता है। इसी का दूसरा नाम **तन्त्र** भी है। जिसमें भूलोक, अन्तरिक्ष, ग्रह, नक्षत्र ब्रह्माण्ड आदि की गति, स्थिति एवं तत्तत् लोकों में रहने वाले प्राणियों की क्रिया विशेष द्वारा समस्त लोकों का समष्टिगत फल बतलाया गया हो, उसे संहिता कहते है। वराहमिहिर ने कहा है कि जिसमें समस्त ज्योतिष विषयों का सर्वांग वर्णन व उनका प्रभाव निरूपित हो, वह **संहिता** है - **तत्कात्स्न्योर्पनयस्य नाम मुनिभि: संकीर्त्यते संहिता।**

जातक शास्त्र को जानने वाले दैवज्ञ या ज्योतिषी के लक्षण व दोष -

आचार्य वराहमिहिर ने अपने ग्रन्थ वृहद्संहिता के सम्वत्सर अध्याय में ज्योतिषी को कैसा होना चाहिए स्पष्ट किया है - दर्शनीय, नम्र, सत्यवादी, परच्छिद्रान्वेषण विरत, राग द्वेष रहित, दृढपुष्ट शरीर श्रेष्ठ शुभलक्षण सम्पन्न, हाथ, पैर, नाखून, ऑख कान दॅात मस्तकशुभ लक्षण सम्पन्न गम्भीर उदात्त विचारों से पूर्ण ऐसे दैवज्ञ से किया गया भविष्य विचार सही एवं शुभ होता है। पुनश्च समाज एवं सभा में सुन्दर वक्ता, प्रतिभा सम्पन्न देश काल की गतिविधि से पूर्ण परिचित, से शुभ निर्णय प्रतिद्वन्दियों में विजयी, चेष्टाओं का ज्ञाता दुर्व्यसनों से रहित वेद शास्त्रों का ज्ञानी तथा उनके अनुष्ठानिक उपयोगों में निष्णात एवं आस्थावान, मारण, मोहन, उच्चाटन, विद्वेषण, वशीकरण स्तम्भन आदि विद्याओं का ज्ञाता, व्रतोपवास, देवपूजा, श्रौत स्मार्त कर्मानुष्ठानरत्त, समाज में प्रभावोत्पादक, प्राकृतिक अशुभ उत्पात, भूमिकम्प,ऑधी तूफान आदि अनिष्ट समय का ज्ञाता तथा इनसे समाज को मुक्त करने की सद्विद्याओं का मर्मज्ञ होते हुए ग्रहणादि, संहिता होरा शास्त्र में मर्मज्ञ ज्यौतिषी से ही समाज एवं राष्ट्र का कल्याण हो सकता है।

बोध प्रश्न : -

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें -

1. जातक शास्त्र को .... शास्त्र भी कहते है।
2. सामान्यत: होरा शब्द का अर्थ .... है।
3. ग्रहनक्षत्रादि के प्रभाव से व्यक्तिगत जीवन की शुभाशुभ घटना का अध्ययन जिस स्कन्ध में किया जाता है, उसे .... कहते है।
4. 1 होरा .... के बराबर होता है।
5. वृहज्जातक के रचयिता .... है।

इसी क्रम में **दैवज्ञों के लक्षण** भी आचार्य वराह ने बताए है। ग्रह गणित के पौलिश – रोमक, वशिष्ठ, सौर एवं पैतामह ग्रन्थों में प्रतिपादित युग – वर्ष, अयन, ऋतु , मास, पक्ष, अहोरात्र,प्रहर, मुहूर्त्त, घटी, पल प्राण, त्रुटि के भी सूक्ष्म अवयात्मक समय का ज्ञाता अनुसन्धाता के साथ भगण, राशि, अंश, कला, विकला, प्रतिविकलात्मक क्षेत्र विभागों का सूक्ष्मातिसूक्ष्म ज्ञाता जो दैवज्ञ है वही भविष्य ज्ञान के आदेश में सफल हो सकता है। ज्ञातव्य है वराहमिहिर स्वयं ग्रहगणित के समकालीन प्रचलित सिद्धान्तों में निष्णात थे तत्पश्चात उन्होंने संहिता एवं जातक शास्त्र पर ग्रन्थ लिखे थे। आचार्य वराहमिहिर के पूर्वापर वर्तमान समीप कालों में भी ज्योतिर्विद्या के दुरूपयोग की जानकारी आचार्य को थी। इसलिए दैवज्ञ के लक्षण लिखने में वराहमिहिर की लेखनी पुनः चली। सौर, सावन, चान्द्र, नाक्षत्र मानों का तथा क्षयाधिमासों का गणित एवं उसकी उत्पत्ति क्यों और कैसे ? इत्यादि ज्ञान के साथ प्रभवादि सम्वत्सरों का गणित द्वारा क्रम साधन, सिद्धान्त ग्रन्थों में सुविशदेन वर्णित सौरादि मानों का भेद, अयनारम्भ, अयनान्त, समण्डल प्रवेश, दृग्वृत्तान्तर्गत नतान्शोन्तांशादि ज्ञान, छाया तथा जलयंत्रों से दृग्गणितैक्यता स्थापित कर सूक्ष्मपञ्चाङ्ग निर्माण, सूर्यादि ग्रहों के मन्द शीघ्र धन ऋण फल, उच्च नीचादि राशि ज्ञान, ग्रहोच्चादि गति ज्ञान कुशलता, प्रत्येक ग्रह का विमण्डल, उस ग्रह की भ्रमण कक्षा का योजनादि मान ज्ञान, प्रत्येक देश नगर का अन्य देश नगर से अन्तरित और देशान्तरित ज्ञान, भूभ्रमण विचार, नक्षत्र कक्षाओं से नक्षत्रों का उदय अस्त ज्ञान, अक्षांश, लम्बांश, द्युज्याचापांश, चरखण्ड, राशियों का क्षितिज में आरम्भादि अन्त समय ज्ञान साधन, छाया वेध, घटी पल क्षेत्रमिति, त्रिकोणमिति, रेखागणित, अंकगणित, और बीजगणित में सुन्दर सुबुद्ध पटु दैवज्ञ से ही ज्योतिष शास्त्र का सदुपयोग लोकहिताय और ऐहिकामुष्मिक हिताय होता है।

तपे हुए चमकीले सोने की तरह परमत, स्वमत से सिद्ध सिद्धान्त द्वारा परिष्कृत सदबुद्धि सम्पन्न को ही **ज्योतिर्विद** कहा जाता है। शास्त्र के सही अर्थ से वंचित बुद्धि किसी भी प्रश्न का समीचीन उत्तर देने में असमर्थ और शिष्य उपशिष्यों से रहित व्यक्ति को दैवज्ञ कैसे कहा जायेगा ? अतएव उन्होंने मूर्खो का उपहास करते हुए कहा है कि –

ग्रन्थ का आशय न समझकर उसका स्वकल्पित विरूद्ध अर्थकर्ता मूर्ख, ब्रह्म समीप गमनशीला वेश्या द्वारा की गई ब्रह्म स्तुति की तरह दैवज्ञ की बुद्धि उपहासाय होती है।

दैववित या दैवज्ञ, भूत भविष्य वर्तमान कालगति का ज्ञाता विद्वान आचारनिष्ठा शास्त्र ज्ञान से परिपूर्ण विद्वान मनुष्य द्वारा, छाया यन्त्र , जलयन्त्र कपाल फलक, तुरीयादि काल बोधक यन्त्रों द्वारा कान्ति क्षितिज वृत्त सम्पातगत ग्रह राशि वृत्त प्रदेशीय लग्न बिन्दु का सम्यक ज्ञान किया जा सकता है, और जिसके बुद्धि में फलित ज्योतिष का परिपक्व ज्ञान बैठा है ऐसे विशेषण विशिष्ट विद्वान की वाणी कभी भी अफलवती नही होती।

जिस प्रकार समुद्र में तैरता हुआ प्राणी हवा के वेग से प्रेरित होकर ही समुद्र को पार पाने में समर्थ हो सकता है, परन्तु कालपुरूष संज्ञा से विभूषित ज्योतिषशास्त्र महासमुद्र को ऋषि मुनियों के अतिरिक्त मनुष्य तो मन से भी पार करने में समर्थ नहीं है। भविष्य कथन में समर्थ, होरा शास्त्र में, राशियों के स्वरूपों में, होरा द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश, राशियों के बलाबल परिग्रह, ग्रहों के दिग्बल स्थान बल, काल बल, चेष्टाबल, गर्भाधान, जन्मकाल शीघ्रमरण, आयुर्दाय, दशा, अन्तर्दशा, अष्टकवर्ग, राजयोग, चन्द्रयोग, द्विग्रहयोग , नाभसयोग फल का कथन, आश्रय, भाव, दृष्टि, निर्याण, पूर्वजन्म, इसका विचार तात्कालिक प्रश्नों पर शुभ अशुभ विचार, लग्न के आश्रित शुभ अशुभ सूचक कारण, उपनयन, चूड़ाकरण,विवाह एवं गृहप्रवेश कर्मों के ज्ञान, इन सभी विषयों के जो विचार यहॉ समाहित हैं, उन सभी का परिपक्व ज्ञान दैवज्ञ को होना चाहिये।

यात्रा, तिथि, दिन,करण, नक्षत्र, मुहूर्त्त, लग्न, योग, अंग स्फुरण स्वप्न , विजय, राजाओं के विजय निमित्त स्नान, ग्रहों के यज्ञ, गणयाग, अग्निलिंग , हाथी घोड़े की चेष्टा, सेनाओं एवं राजपुरूषों के बोलने से उनकी चेष्टा, वायु मेघ वृष्टि के लक्षण, संधि विग्रह यान आसन द्वैधीभाव, संश्रय से सम्बन्धी ग्रहों के सिद्धि असिद्धि का ज्ञान, साम, वायु, दण्ड एवं भेद इन उपायों की सिद्धि असिद्धि का ज्ञान, मंगल, अमंगल, शकुन, सेनाओं की निवास भूमि, अग्नि का वर्ण, मन्त्री, चर, दूत, वनवासियों का कालानुसार प्रयोग, शत्रु के किले का लाभ इन सभी बातों का विवरण इस स्कन्ध में होता है।

ऐसे भगणों से युक्त एवं लोक में विस्तृत होरा शास्त्र जिस दैवज्ञ के हृदय में संचित एवं बुद्धि में अंकित होता है, उसका फलादेश कभी निष्प्रभावी नहीं होता है।

जातक शास्त्र का इकाई ग्रन्थ के रूप में वराहमिहिरकृत वृहज्जातक का नाम आता है। वस्तुत: वराह मिहिर का वृहज्जातक ग्रन्थ फलित ज्यौतिष का उपजीव्य ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ में 28 अध्याय है, जिसमें राशिप्रभेद से लेकर उपसंहाराध्याय तक जातक स्कन्ध से जुड़े समस्त बिन्दुओं का क्रमश: विवेचन किया गया है। अत: इस इकाई के पाठक को चाहिए कि यदि वह विस्तृत रूप से जातक स्कन्ध के विषयों को समझना चाहता है तो इस ग्रन्थ का अवलोकन भी अवश्य करे, या दूसरे शब्दों में सहायक ग्रन्थ के रूप में यह काम आ सकता है।

ज्योतिष शास्त्र का ज्ञान प्राप्त के लिए पाठक व अध्यापक दोनों के लिए यह मान दण्ड स्थापित किया गया है –

जितेन्द्रियाय विदुषे चिरकालनिवासिने।
आत्मज्ञानविदे सूत प्रकाश्यं शास्त्रमुत्तमम्।।

अर्थात् जितेन्द्रिय, जिज्ञासु , बुद्धिमान, विद्वान, लम्बे समय तक धैर्य रखने वाले, एवं विनीत,

आध्यात्मिक वृत्ति वाले शिष्य को ही ज्योतिष शास्त्र सिखाना चाहिए।

इसके विपरीत ईर्ष्यालु, कुटिल मनोभावों वाले, अविश्वसनीय, जल्दबाज, दुष्ट चित्त वाले व्यक्ति को शिष्य नहीं बनाना चाहिये।

1.4 सारांशः –

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि इस जगत में मानव मात्र को अपने एवं अपने से जुड़े तत्वों का भविष्य को जानने की उत्सुकता होती है। भविष्य ज्ञान करने के लिए वेद पुरूष के 6 अंगों में **ज्यौतिष शास्त्र** वेद पुरूष का चक्षुस्थानीय नेत्र ही विशेष अंग है। ज्योतिष शास्त्र के जातक स्कन्ध के ज्ञानाभाव में हम भविष्य ज्ञान प्राप्त करने में सफल नही हो सकते। भारतीय ज्योतिष शास्त्र को तीन स्कन्धों में बॉटा गया है – सिद्धान्त, संहिता व होरा। जिस स्कन्ध में होरा (जातक) , ताजिक, मुहूर्त्त, प्रश्नादि का विचार कर व्यष्टिपरक या व्यक्तिगत फलादेश बताया जाता है, उसे **जातक या होरा शास्त्र** कहते है। सामान्यत: होरा शब्द का अर्थ होता है – काल अर्थात् काल नियामक होरा शब्द है। एक दिन – रात 24 घंटे का होता है। इसमें 24 काल होरा होती है। इसके आधार पर ही भारतीय वार गणना सिद्ध होती है। स्पष्ट है कि ढाई घड़ी की एक होरा होती है । ये होरायें अहोरात्र में होती हैं इसलिये अहोरात्र शब्द के आदि के अ अक्षर और अन्त के त्र अक्षर का लोप करने से अहोरात्र शब्द से होरा शब्द निष्पन्न होता है।

1.5 पारिभाषिक शब्दावली

होरा – फलित शास्त्र, समय

अहोरात्र – दिन और रात,

जातक शास्त्र - व्यक्तिगत फलादेश करने वाला शास्त्र

काल – समय

जितेन्द्रिय – जिसने अपनी इन्द्रियों पर विजय प्राप्त कर ली हो।

भगण – राशियों का समूह। अर्थात् 12 राशियों का चक्र

1.6 बोध प्रश्नों के उत्तर –

1. होरा
2. काल
3. जातक शास्त्र
4. ढाई घटी
5. वराहमिहिर

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –

1. होरारत्नम् - चौखम्भा प्रकाशन
2. होराशास्त्रम् - चौखम्भा प्रकाशन
3. वृहज्जातक - चौखम्भा प्रकाशन
4. लघुजातक - चौखम्भा प्रकाशन
5. सारावली - चौखम्भा प्रकाशन

1.8 सहायक पाठ्यसामग्री

जातक पारिजात

जातक पद्धति

फलित संग्रह

ज्योतिष सर्वस्व

फलदीपिका

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न -

1. जातक शास्त्र का परिचय देते हुए उसके स्वरूप एवं महत्वों पर प्रकाश डालियें।
2. जातक के भेदादि का निरूपण करते हुए दैवज्ञ के लक्षण को विस्तार पूर्वक लिखिये।

इकाई – 2 राशिशील

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 राशि का परिचय

2.3.1 राशि की परिभाषा

2.3.2 राशि के स्वरूप एवं विभिन्न संज्ञायें

बोध प्रश्न

2.4 सारांशः

2.5 पारिभाषिक शब्दावली

2.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.8 सहायक पाठ्यसामग्री

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना -

प्रस्तुत इकाई प्रथम खण्ड के इकाई दो **'राशिशील'** नामक शीर्षक से संबंधित है। राशि के पर्याय है – समूह, धन आदि। जातक स्कन्ध के अध्ययन में सर्वप्रथम राशि का ज्ञान आचार्यों के द्वारा कहा गया है।

नक्षत्रों के समूह को **'राशि'** कहते है। कालपुरूष के शरीर में उसके अंगो के विभाजन के आधार पर 12 राशियों का निरूपण किया गया है। मेष से लेकर मीन पर्यन्त 12 राशियॉ होती है।

इससे पूर्व की इकाईयों में आपने जातक शास्त्र क्या हैं ? उसका सैद्धान्तिक स्वरूप क्या है ? इसका अध्ययन कर चुके है। यहॉ हम इस इकाई में जातक शास्त्र के राशिशील से सम्बन्धित विषयों का अध्ययन विस्तार पूर्वक करेंगे।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप-

1. राशि को परिभाषित करने में समर्थ हो सकेंगे।
2. राशि के महत्त्व को समझा सकेंगे।
3. राशि सिद्धान्त - निरूपण करने में समर्थ होंगे।
4. राशि के स्वरूप वर्णन करने में समर्थ होंगे।
5. राशि के सम्बन्ध को निरूपित करने में समर्थ होंगे।

2.3 राशि का परिचय

कालाङ्गानि वराङ्गमाननमुरो हृत्क्रोडवासेभृतो।
वस्तिर्व्यञ्जनमूरूजानुयुगले जङ्घे ततोऽङ्घ्रिद्वयम्।
मेषाश्विप्रथमानवर्क्षचरणाश्चक्रस्थिता राशयो
राशिक्षेत्रगृहर्क्षभानि भवनं चैकार्थसम्प्रत्यया: ।।

नक्षत्राणां समूह: **'राशि:'** कथ्यते। मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक,धनु मकर, कुम्भ,मीन ये बारह राशियॉ है। राशियों के भी विभिन्न स्वभाव, शील, गुण व धर्म माने गए है, जिनका विचार फलादेश में आवश्यक है।

ये बारह राशियॉ आकाश में दीर्घ वृत्ताकार मार्ग या क्रान्तिवृत्त या सूर्य के भ्रमण मार्ग पर स्थित है। ये वलयाकार प्रति क्षण पूर्वी क्षितिज पर उदित होती रहती है। जो उदय लग्न माना जाता है। जन्म

लग्न में जो राशि पापग्रह से दृष्ट हो तो जिस अंग का वह प्रतिनिधित्व करती हो, उसी अंग से जातक निर्बल होता है तथा जो राशि शुभयुक्त दृष्ट हो तो वही अंग पुष्ट होता है।

सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के 27 नक्षत्रों की 12 राशियों व लग्नों का मानचित्र एक वृहद्विराट पुरूष रूप में बताकर प्रत्येक पुरूष के नख से शिर की चोटी तक काल पुरूष के हाथ पैर मुख कान आदि का स्पष्टीकरण इस प्रकार है – जिनसे होरा शास्त्र द्वारा भविष्य ज्ञान किया जाता है ।

अश्विनी नक्षत्र के चार पाद + भरणी के 4 पाद +कृत्तिका का 1 पाद तक ब्रह्माण्उ के नक्षत्र गोल में मेष आकार थी एक राशि का प्रदेश भू पृष्ठ से भी तलिकावेध से देखा गया है। अत: नक्षत्र वृत्त का 12 वॉ विभाग $360^0/ 12 = 30^0 = 1$ राशि का मान कहा गया है। इस प्रकार मेषाकद 12 राशियों एवं 27 नक्षत्रों में सवा दो नक्षत्रात्मक क्षेत्र की 360 / 30 = 12 राशियों के नाम शास्त्रान्तर में प्रसिद्ध हुए है।

इन्हीं 12 राशियों का एक महान विराट स्वरूप काल पुरूष है , जिसकी मेष राशि – मस्तक, वृष राशि – मुख, मिथुन राशि – वक्ष स्थल, कर्क राशि – हृदय, सिंह राशि – उदर, कन्या राशि – कमर , तुला राशि – वस्ति, वृश्चिक राशि – लिंग या योनि, धनुराशि – पैरों की सन्ध, मकर – पैरों की गांठ, कुम्भ – दोनों जॉघ और मीन राशि – काल पुरूष की दोनों पाद स्थानीय होती है। राशि = क्षेत्र, गृह शब्द से एकार्थ और ऋक्ष = नक्षत्र, ये भी एकार्थ सूचक है।

2.3.1 राशि परिभाषा

नक्षत्रों के समूह को राशि कहते है। आकश में अनेक तारों का समूह हमें दिखलाई पड़ता है। उन्हीं तारों के समूह को ज्योतिष शास्त्र के प्राचीन आचार्यों ने देखा कि वह तारों का समूह में आकाश में एक आकृति का निर्माण कर रही है। उन्हीं आकृतियों के आधार पर आचार्यों ने उन्हें राशि का नाम दिया। राशियों की कुल संख्या 12 है। राशि शब्द का शाब्दिक अर्थ धन होता है। भचक्र में 30^0 के बराबर एक राशि का मान होता है।

2.3.2 राशि का स्वरूप एवं विभिन्न संज्ञायें

मेष, वृष, कर्क, सिंह, वृश्चिक, कुम्भ, राशियॉ आकाश में स्व लोकस्वरूपानुसार ही आकार बनाती हुई प्रतीत होती है। मेष भेड़े के समान, वृष बैल के समान, कर्क केकड़ावत् , सिंह शेर की तरह, वृश्चिक बिच्छू जैसी ही दिखती है। शेष राशियों के स्वरूप में कुछ भेद है। मिथुन वीणाधारी स्त्री व गदाधारी पुरूष के जोड़े के समान, कुम्भ राशि खाली घड़ा कन्धों पर लिए हुए पुरूष के समान, मीन राशि दो मछलियों के समान जिनके मुख व पूच्छ विपरीत दिशा में स्थित है। धनु राशि का पूर्वार्ध धनुषधारी पुरूष के समान व पिछला हिस्सा घोड़े के समान दिखता है। मकर राशि हिरण

के मुख वाले मगर के समान व तुला राशि तराजू को उठाते हुए लड़की के समान दिखती है। इन सभी राशियों के निवासस्थान वही हैं, जो इन प्राणियों के संसार में देखे जाते है। उदाहरणार्थ सिंह वनचारी, वृष ग्रामचारी आदि।

राशि स्वामी विचार -

मेष व वृश्चिक राशि का स्वामी मंगल, वृष तुला का स्वामी शुक्र, मिथुन व कन्या का स्वामी बुध, कर्क का चन्द्रमा , सिंह का सूर्य, धनु एवं मीन का गुरू, तथा मकर व कुम्भ का शनि।

शीर्षोदयादि एवं निशाबली विचार – मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, व कुम्भ शीर्षोदय राशियॉ है मेष, वृष, कर्क, धनु, मकर, पृष्ठोदय राशियॉ है। शीर्षोदय राशियॉ सिर की ओर से उदित होती है, तथा पृष्ठोदय पूॅछ की ओर से। मीन राशि उभयोदयी अर्थात् दोनों ओर से उदित होती है।

मेष, वृष, मिथुन, धनु व मकर राशियॉ रात्रिबली हैं तथा सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक व कुम्भ दिनबली राशियॉ है। मीन सन्ध्या बली है। पृष्ठोदय राशियों में प्रश्न हो तो विफलता व कष्ट एवं शीर्षोदय राशियों में प्रश्न हो तो सफलता व मनोरथ सिद्धि होती है, यह मूल नियम है।

राशियों में द्विपदादि भेद – मिथुन, कन्या, तुला, धनु का पूर्वार्ध व कुम्भ ये राशियॉ द्विपद अर्थात् नर राशियॉं हैं, क्योंकि इनके स्वरूप में मनुष्याकृति दिखती है। मेष, वृष, सिंह, धनु का उत्तरार्ध व मकर का पूर्वार्ध ये राशियॉ चतुष्पद हैं क्योंकि ये पशु आकृति जैसी है। शेष कर्क, मीन, मकर का उत्तरार्ध ये जलचर राशियॉ हैं, तथा वृश्चिक कीट राशि है

दिग्बल ज्ञान – सभी द्विपद राशियॉ लग्न या पूर्व दिशा में, चतुष्पद राशियॉ दशम या दक्षिण दिशा में, वृश्चिक राशि सप्तम भाव या पश्चिम दिशा में व जलचर राशियॉं उत्तर दिशा में चतुर्थ भाव में बली होती है, अर्थात् उक्त स्थानों पर इन्हें पूर्ण दिग्बल मिलता है।

अथवा केन्द्र भावों में जलचर राशियों को छोड़कर कीट राशि सन्ध्या समय में द्विपद राशियॉं दिन में व चतुष्पद राशियॉं रात्रि में बली होती है।

चर – स्थिर द्विस्वभावादि निर्णय – मेषादि बारह राशियॉं क्रमश: चर, स्थिर, व द्विस्वभाव होती है। मेष, कर्क, तुला, मकर चर राशियॉं, वृष, सिंह वृश्चिक, कुम्भ स्थिर राशियॉ व मिथुन, कन्या, धनु मीन द्विस्वभाव राशियॉ है।

मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु, कुम्भ ये विषम राशियॉ या पुरूष राशियॉ हैं। शेष सम या स्त्री है। पुरूष राशियों में उत्पन्न व्यक्ति दबंग एवं स्त्री राशि में उत्पन्न जातक मृदु स्वभाव के होते हैं। इसी प्रकार चर राशियों में चंचल स्वभाव, स्थिर राशियों में स्थिर स्वभाव व द्विस्वभाव राशियों में पैदा हुआ व्यक्ति मिश्रित स्वभाव का होता है।

राशियों का दिशापतित्व - मेष, सिंह, धनु पूर्व दिशा की, वृष, कन्या, मकर दक्षिण दिशा की

मिथुन, तुला, कुम्भ पश्चिम दिशा की व कर्क, वृश्चिक, मीन उत्तर दिशा की स्वामी है।
इस दिशा विभाग से प्रश्न – समय में प्रश्न विषय की दिशा का निश्चय होता है। जिस दिशा में यात्रा करनी हो, उसी दिशा के लग्न में यात्रा का प्रारम्भ करें तो सफलता मिलती है।

निर्बीज व सबीज राशि – कर्क, वृश्चिक का उत्तरार्ध, मकर, कुम्भ, मीन ये राशियॉं सबीज अर्थात् बहुसन्तति या अंकुरयुक्त हैं। मिथुन, सिंह, कन्या, धनु ये बॉझ राशियॉं हैं। मेष, वृष व तुला का पूर्वार्ध कम सन्तान राशियॉं है। तुला का उत्तरार्ध व वृश्चिक का पूर्वार्ध निर्बीज अर्थात् उत्पत्ति क्षमता से रहित हैं।

सबीज राशियों में बहुसन्तति , वृद्धि व सौभाग्य तथा निर्बीज राशि या लग्न में असफलता व कार्यनाश या सन्तानोपादन में अक्षमता रहती है।

पुण्य, पुष्कर व आधान राशि – मेष, वृष मिथुन आदि बारह राशियॉं क्रमश: पुण्य, पुष्कर, व आधान राशियॉं हैं। अर्थात् सभी चर राशियॉं पुण्य, स्थिर राशियॉं पुष्कर व द्विस्वभाव राशियॉं आधान राशि है।

राशियों का पुष्करांश – मेष, सिंह, धनु में इक्कीसवां अंश, वृष, कन्या, मकर में चौदहवॉं, मिथुन, तुला, कुम्भ में चौबीसवॉं, कर्क, वृश्चिक, मीन में सातवॉं अंश पुष्करांश हैं। ये शुभ है। मेष, सिंह, धनु में सातवॉं व नौवॉं वृष, मकर, कन्या में तीसरा व पॉचवा नवांश, मिथुन, तुला कुम्भ में छठा व आठवॉं कर्क, वृश्चिक व मीन में पहला व तीसरा पुष्कर नवांश हैं। ये निन्दित नवांश माने जाते है। इनमें कार्यारम्भ व जन्म या गर्भाधानादि कष्टप्रद होता है। यदि उक्त स्थिति में वर्गोत्तम नवांश पड़ं तो शुभ माना जाता है।

राशियों का तत्व व वश्य – मेषादि त्रिकोण राशियॉं 1,5,9 अग्नितत्व, 2,6,10 पृथ्वी तत्व 3,7,11 वायुतत्व 4,8,12 जलतत्व राशियॉं हैं।

अग्नि तत्व व वायु तत्व में, पृथ्वी तत्व व जल तत्व में परस्पर मित्रता है। अन्यत्र शत्रुता मानी जायेगी। सभी राशियॉं मनुष्य राशियों के वश में हैं तथ वृश्चिक को छोड़कर सभी राशियॉं सिंह के वश में हैं। स्वामी – सेवक, वर – कन्यादि मिलान में इसका विचार किया जाता है। दोनों के तत्वों में मित्रता व वश्य होना अच्छा है।

राशियों की धातु व सजलता - सभी चर राशियॉं धातु राशि, स्थिर राशियॉं मूल राशि व द्विस्वभाव राशियॉं जीव राशि हैं। मूक प्रश्नादि में इनका उपयोग होता है। सभी धातु व भौतिक पदार्थ सोने से लेकर मिट्टी तक धातुवर्ग में, सभी वनस्पतियॉं मूलवर्ग में, सभी प्राणी जीववर्ग में आते है।

कर्क, तुला, वृश्चिक, मकर, कुम्भ, मीन ये सजल अर्थात् गीली राशियॉ हैं। शेष सिंह, कन्या, धनु, मेष, मिथुन शुष्क या निर्जल राशियॉ हैं। किसी के मत में वृश्चिक भी शुष्क वर्ग में ही गिनी जाती है। वर्षा प्रश्न या शरीर में मद, चर्बी, रक्तादि का न्यूनाधिक्य निर्णय करने में इसका उपयोग होता है।

अन्ध राशि निर्णय - मेष, वृष, सिंह आधी रात में मिथुन कर्क, कन्या दोपहर में तुला वृश्चिक पूर्वान्ह अर्थात् दोपहर से पहले दिन में व धनु, मकर दोपहर बाद दिन में अन्ध राशियॉ कहलाती हैं। धनु मकर सुबह व शाम सन्ध्या समय में पंगु कहलाती है।

इनके स्वभावानुसार ही शरीर विकृति या कार्य देखा जाता है। अन्ध राशि में लग्नेश व कार्येश कार्यनाशक होता है। जिस अंग का प्रतिनिधि अन्ध राशि में हो उसी अंग में विकार होगा।

राशियों का मान – मेष, वृष, कुम्भ, मीन ह्रस्व , मिथुन कर्क, धनु, मकर सम सिंह, कन्या, तुला वृश्चिक दीर्घ राशियॉ हैं। जिन अंगों में जो राशि जन्म समय में पड़े वही अंग दीर्घ, मध्य या ह्रस्व होता है। दीर्घ अर्थात् अधिक विकसित या बड़ा व ह्रस्व छोटा या कम विकसित।

राशियों का प्लव (झुकाव) – राशीश की दिशा में प्रश्न समय में प्लव होता है। अर्थात् प्रश्न या जन्म समय में जो लग्न हों उसका स्वामी जिस दिशा का अधिपति हों, वही दिशा प्लव है। प्लव दिशा में यात्रा, चढ़ाई, रोजगार आदि में विशेष सफलता मिलती है।

राशि सन्धि व गण्डान्त - कर्क, वृश्चिक व मीन राशियों का अन्तिम अंश 'राशि सन्धि' कहलाता है। इसे ही विद्वानों ने गण्डान्त कहा है। गण्डान्त में उत्पन्न जातक कुल, माता व पिता के लिए घातक होता है। वह प्राय: जीवित नहीं रहता, यदि जीवित रहे तो बहुत धनी होता है।

राशियों का बल – राशियों का कालबल व दिग्बल पहले बता चुके हैं। इसके अतिरिक्त अपने स्वामी से दुष्ट या युत, अपने स्वामी के मित्र ग्रहों से दृष्ट हो तो वह राशि बलवान होती है।

जो राशि किसी भी ग्रह से युक्त या दृष्ट न हो तो अपने दिग्बल, कालबल या निसर्गबल के आधार पर बली या निर्बल होती है। केन्द्रगत राशि सर्वबली, पणफर में उससे कम व आपोक्लिम में उससे कम बली होती है। सौम्य राशि शुभ ग्रह युक्त, क्रूर राशि क्रूर ग्रह से युक्त बलवान होती है।

अथवा जो राशि किसी भी शुभ ग्रह से या अपने स्वामी से युत या दृष्ट हो या जो राशि शुभ भावों में हो अथवा जो राशि उच्च गत ग्रह से दृष्ट हो वह बलवान होती है। जो राशि पूर्वोक्त प्रकार से सर्वथा दृष्टि या योग से रहित हो वह निर्बल, मिश्रित ग्रहों से युत या दृष्ट हो वह अल्पबली होती है।

जैमिनीय मत से ग्रहरहित राशि से ग्रह युक्त राशि, ग्रह युक्त राशि से अधिक ग्रह युक्त राशि बलवान होती है।

यदि कई राशियों में समान संख्या वाले ग्रह हों तो जिसमें उच्चगत, मूल त्रिकोण या निज राशि गत ग्रह हो वह बली मानी जाएगी।

यदि तब भी निर्णय न हो तो राशियों का निसर्ग बल देखना चाहिए। चर, स्थिर व द्विस्वभाव राशियॉ क्रमश: उत्तरो त्तर अधिक बली हैं।

विषम राशियों को उससे अगले व पिछले भाव में स्थित ग्रह का भी बल मिलता है अथवा जिस राशि में अधिक बल वाला ग्रह स्थित हो वह बली है। अथवा राशीश के बल से राशि की बलवत्ता जाननी चाहिए।

राशियों की दृष्टि – जिस प्रकार ग्रहों की दृष्टि होती है, उसी प्रकार राशियों की भी दृष्टि मानी जाती है। सभी चर राशियॉ अपने से द्वितीय भाव गत, स्थिर राशि को छोड़कर शेष तीनों चर राशियों व इनमें स्थित ग्रहों को देखती हैं।

सभी द्विस्वभाव राशियॉ अपने अतिरिक्त सभी द्विस्वभाव राशियों व इनमें स्थित ग्रहों को देखती हैं। यह पूर्ण दृष्टि है। अन्य एकपादादि दृष्टि का विचार जैमिनी मत में नहीं होता है।

राशियों में वर्ग परिज्ञान - राशि या लग्न, होरा, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश व त्रिशांश ये षडवर्ग कहलाते हैं।

इनमें यदि सप्तमांश भी मिला दे तो ये ही सप्तवर्ग कहलाते हैं।

बोध प्रश्न - 1

निम्नलिखित में सही विकल्पों को चुनिये –

1. नक्षत्रों के समूह को कहते है।
   क. योग ख. करण ग. राशि घ. ग्रह
2. राशियों की संख्या है।
   क. 10 ख. 11 ग. 12 घ. 9
3. कर्क राशि का अधिपति है।
   क. सूर्य ख. मंगल ग. शनि घ.चन्द्रमा

1. तुला राशि है –
   क. चर संज्ञक ख. स्थिर संज्ञक ग. द्विस्वभाव संज्ञक घ. कोई नही
2. मेषादि राशियों में पॉचवी राशि किस तत्व की है।
   क. वायु तत्व ख. जल तत्व ग. अग्नि तत्व घ. कोई नही

इन सातों में दशमांश, षोडशांश व षष्ट्यंश मिलाने से दशवर्ग बन जाते हैं। इनमें मुख्यता सप्तवर्गों को प्राप्त है, कुछ विशेष बातें षष्टयंश से भी देखी जाती हैं। यहॉ क्रमश: इनका विवेचन प्रस्तुत है –

1. **होरा** – राशि के आधे भाग को होरा कहते हैं। इनमें सभी सम राशियों में $0^0 – 15^0$ तक चन्द्रमा की होरा व पश्चात् सूर्य की होरा होती है।
   विषम राशियों में $0^0 – 15^0$ तक पहली होरा सूर्य की व पश्चात् चन्द्रमा की होरा होती है। सूर्य व चन्द्र होरा को क्रमश: सिंह व कर्क राशि से दिखाने की प्रथा है। प्रथम होरा देव होरा व द्वितीय होरा पितृ होरा कहलाती है।

होरा चक्र

अंश	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
0^0 – 15^0	5	4	5	4	5	4	5	4	5	4	5	4
16^0 - 30^0	4	5	4	5	4	5	4	5	4	5	4	5

2. **द्रेष्काण** – राशि के तीसरे भाग का नाम द्रेष्काण है। एक द्रेष्काण 10^0 का होता है। अत: प्रत्येक राशि में क्रमश: त्रिकोण राशियों के तीन द्रेष्काण होते हैं। 1, 5, 9 त्रिकोण भाव या राशि है।

द्रेष्काण चक्र

अंश	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	स्वामी
10^0	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	नारद
20^0	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	अगस्त्य
30^0	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	दुर्वासा

3.**सप्तमांश** – राशि का सातवॉ भाग सप्तमांश कहलाता है। अत: 4^0 17’ 8’ के लगभग एक सप्तमांश होता है। विषम राशि में उसी राशि से व सम राशि में हो तो सातवीं राशि से सप्तमांश गिने जाते हैं।

सप्तमांश चक्र

अंश	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	स्वामी
4^0.17.8	1	8	3	10	5	12	7	2	9	4	11	6	क्षार
8. 34.17	2	9	4	11	6	1	8	3	10	5	12	7	क्षीर
12.51.25	3	10	5	12	7	2	9	4	11	6	1	8	दधि
17.8.35	4	11	6	13	8	3	10	5	12	7	2	9	घृत

21.25.43	5	12	7	14	9	4	11	6	1	8	3	10	इक्षु
25.42.51	6	1	8	15	10	5	12	7	2	9	4	11	मद्य
30.0.0	7	2	9	16	11	6	1	8	3	10	5	12	शुद्धोद क

4. **नवमांश -** राशि के नवम भाग को नवमांश कहते हैं। इसका मान 3^0 20' होता है। अर्थात् एक नवमांश 3 अंश 20 कला का होता है। इसमें प्रत्येक चर राशि में उसी राशि से, स्थिर राशि में नवीं राशि से और द्विस्वभाव राशि में पॉचवी राशि से गणना होती है।

नवमांश चक्र

अंश	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	स्वामी
3^0.20	1	10	7	4	1	10	7	4	1	10	7	4	देव
6^0.40	2	11	8	5	2	11	8	5	2	11	8	5	नर
10^0.00	3	12	9	6	3	12	9	6	3	12	9	6	राक्षस
13^0.20	4	1	10	7	4	1	10	7	4	1	10	7	देव
16^0.40	5	2	11	8	5	2	11	8	5	2	11	8	नर
20^0.00	6	3	12	9	6	3	12	9	6	3	12	9	राक्षस
23^0.20	7	4	1	10	7	4	1	10	7	4	1	10	देव
26^0.40	8	5	2	11	8	5	2	11	8	5	2	11	नर
30^0.00	9	6	3	12	9	6	3	12	9	6	3	12	राक्षस

5. **द्वादशांश** – राशि का बारहवॉं भाग द्वादशांश कहलाता है। अत: एक द्वादशांश का मान 2^0 – 30' होता है। इसकी गणना का प्रकार बड़ा सरल है। जिस राशि में द्वादशांश देखना हो, उसी राशि से गणना आरम्भ करना चाहिए।

द्वादशांश चक्र

अंश	**मेष**	**वृष**	**मिथुन**	**कर्क**	**सिंह**	**कन्या**	**तुला**	**वृश्चिक**	**धनु**	**मकर**	**कुम्भ**	**मीन**	**स्वामी**
2^0.30	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	गणेश
5^0.00	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	नासत्य
7^0.30	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	यम
10^0.00	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	सर्प
12^0.30	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	गणेश
15^0.00	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	नासत्य
17^0.30	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	यम
20^0.00	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	सर्प
22^0.30	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	गणेश
25^0.30	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	नासत्य
27^0.30	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	यम

30^0.00	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	सर्प

त्रिशांश - राशि का तीसवें भाग को त्रिशांश कहते है। वास्तव में विषम राशियों में 5,5,8,7,5 अंशों के क्रमश: मंगल, शनि, गुरू, बुध व शुक्र के त्रिशांश होते है।
सम राशियों में 5,7,8,5,5 अंशों में अर्थात् विपरीत क्रम से शुक्र, बुध, गुरू, शनि, मंगल के त्रिशांश होते है।

त्रिशांश चक्र

अंश	विषम राशि	स्वामी		सम राशि	अंश
	मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु कुम्भ			वृष, कर्क , कन्या, वृश्चिक, मकर, मीन	
5^0	मंगल	अग्नि	मेघ	शुक्र	5^0
10^0	शनि	वायु	कुबेर	बुध	12^0
18^0	गुरू	इन्द्र	इन्द्र	गुरू	20^0
25^0	बुध	कुबेर	वायु	शनि	25^0
30^0	शुक्र	मेघ	अग्नि	मंगल	30^0

7.षष्ट्यंश विचार – यह राशि का साठवां हिस्सा होता है। अत: एक षष्ट्यंश आधे अंश या 30’ कला के बराबर होता है। जिस राशि में षष्टयंश देखना हो उसी राशि से गणना करनी चाहिए। षष्टयंश जानने के लिए लग्न या ग्रह के स्पष्ट राश्यादि में से केवल अंश कला विकल को 2 से गुणा करें। गुणित अंश में एक जोड़े। इसमें 12 से भाग देने पर जो शेष बचे, जन्म लग्न से उतनी राशि आगे षष्टयंश लग्न होगा।

उदाहरणार्थ – लग्न स्पष्ट 2. 20^0.23. 15 है। इसमें से राशि को छोड़कर 20^0.23.15 × 2 = 40^0.46.36 हुआ। 40^0 + 1 = 41 वॉ षष्टयंश लग्न में है। 41/ 12 = शेष 5 है। लग्न में मिथुन राशि से पॉच आगे गणना करने से प्राप्त तुला राशि षष्ट्यंश लग्न में लिखी जायेगी। इसके स्वामी के अनुसार इसकी क्रूर या शुभ संज्ञा होती है।

षष्टयंश चक्र

विषम राशि देवतांश	संख्या	मे.	वृ.	मि	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.	अंश	सम राशि देवतांश
घोर	1	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	0-30	इन्दुरेखा
राक्षस	2	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	1-0	भ्रमण
देव	3	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	1-30	पयोधि
कुबेर	4	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	2-0	सुधा
यक्ष	5	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	2-30	अति शीतल

किन्नर	6	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	3-0	क्रूर
भ्रष्ट	7	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	3-30	शुभाकर
कुलघ्न	8	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	4-0	निर्मल
गरल	9	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	4-30	दण्डायुध
अग्नि	10	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	5-00	कालाग्नि
माया	11	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	5-30	प्रवीण
प्रेतपुरीष	12	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	6-0	इन्दुमुख
अपाम्पति	13	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	6-30	दंष्ट्राकराल
देवगणेश	14	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	7-0	शीतल
काल	15	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	7-30	मृदु

अहिभाग	16	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	8-0	सौम्य
अमृत	17	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	8-30	कालरूप
चन्द्र	18	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	9-0	पातक
मृदंश	19	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	9-30	वंशक्षय
कोमल	20	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	10-0	कुलनाश
हेरम्य	21	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	10-30	विषप्रदग्ध
विष्णु	22	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	11-0	पूर्णचन्द्र
ब्रह्मा	23	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11-30	अमृत
महेश्वर	24	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12-0	सुधा
देव	25	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	12-30	कण्टक
आर्द्र	26	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	13-00	यम
कलिनाश	27	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	13-30	घोर
क्षितीश्वर	28	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	14-0	दावाग्नि
कमलाकर	29	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	14-30	काल
मान्दी	30	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	15-0	मृत्युकर

मृत्युकर	31	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	15-30	मान्दी
काल	32	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	16-0	कमलाकर
दावाग्नि	33	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	16-30	क्षितीश्वर
घोर	34	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	17-00	कलिनाश
यम	35	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	17-30	आर्द्र
कण्टक	36	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	18-00	देव
सुधा	37	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	18-30	महेश्वर
अमृत	38	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	19-00	ब्रह्मा
पूर्णचन्द्र	39	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	19-30	विष्णु
विषप्रदग्ध	40	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	20-00	हेरम्ब
कुलनाश	41	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	20-30	कोमल
वंशक्षय	42	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	21-00	मृदंश
पातक	43	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	21-30	चन्द्र
कालरूप	44	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	22-00	अमृत
सौम्य	45	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	22-30	अहिभाग

मृदु	46	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	23-0	काल
शीतल	47	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	23-30	देवगणेश
द्रंष्ट्राकराल	48	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	24 -0	अपाम्पति
इन्दुमुख	49	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	24-30	प्रेतपुरीष
प्रवीण	50	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	25 - 0	माया
कालाग्नि	51	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	25-30	अग्नि
दण्डायुध	52	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	26 - 0	गरल
निर्मल	53	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	26-30	कुलघ्न
शुभाकर	54	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	27 - 0	भ्रष्ट
क्रूर	55	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	27-30	किन्नर
अतिशीतल	56	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	28-00	यक्ष
सुधा	57	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	28-30	कुबेर

पयोधि	58	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	29-00	देव
भ्रमण	59	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	29-30	राक्षस
इन्दुरेखा	60	12	13	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	30-00	घोर

सम राशि में ये ही स्वामी उल्टे क्रम से होते हैं। अर्थात् इन्दुलेखा, भ्रमण आदि क्रम से गिनकर साठवें अंश का स्वामी घोर होगा। इन्दुलेखा सम राशि में 0^0 – 30' तक व भ्रमण 30' – 1^0 तक होगा। इसी प्रकार घोरांश 29^0, 30' – 30^0 तक होगा।

विषम राशियों में निम्न षष्ट्यंश क्रूर होते हैं –

1,2,7,8,9,10,12,15,16,30,31,32,33,34,35,36,40,41,42,43,44,48,51,52,55,59

सम राशियों में अशुभ षष्ट्यंश इस प्रकार हैं –

2,6,9,10,13,17,18,19,20,21,25,26,27,28,29,30,31,45,46,49,51,52,53,54,59,60।

दशमांश व षोडशांश - राशि का दसवां भाग दशमांश होगा। सम राशियों में नवीं राशि से व विषम में उसी राशि से गणना होती है। राशि का सोलहवॉं भाग षोडशांश कहलाता है। अत: 1^0. 52. 30 का एक षोडशांश होता है। चर राशियों में मेष से , स्थिर राशियों में सिंह से द्विस्वभाव राशियों में धनु से गणना होती है।

दशमांश चक्र

राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
3^0	1	10	3	12	5	2	7	4	9	6	11	8
6^0	2	11	4	1	6	3	8	5	10	7	12	9
9^0	3	12	5	2	7	4	9	6	11	8	1	10
12^0	4	1	6	3	8	5	10	7	12	9	2	11
15^0	5	2	7	4	9	6	11	8	1	10	3	12
18^0	6	3	8	5	10	7	12	9	2	11	4	1
21^0	7	4	9	6	11	8	1	10	3	12	5	2
24^0	8	5	10	7	12	9	2	11	4	1	6	3
27^0	9	6	11	8	1	10	3	12	5	2	7	4
30^0	10	7	12	9	2	11	4	1	6	3	8	5

षोडशांश चक्र

चर	स्थिर	द्विस्वभाव	अंश
1	5	9	1.52.30
2	6	10	3.45.0
3	7	11	5.37.30

4	8	12	7.30.0
5	9	1	9.22.30
6	10	2	11.15.0
7	11	3	13.7.30
8	12	4	15.0.0
9	1	5	16.52.30
10	2	6	18.45.0
11	3	7	20.37.30
12	4	8	22.30.00
1	5	9	24.22.30
2	6	10	26.15.00
3	7	11	28.7.30
4	8	12	30.0.0

विविध द्रेष्काण – कर्क राशि में दूसरा व तीसरा, वृश्चिक में प्रथम व तृतीय व मीन का तृतीय द्रेष्काण **सर्पद्रेष्काण** कहलाता है । मिथुन व तुला का दूसरा और सिंह व कुम्भ का पहला पक्षिद्रेष्काण है।

मकर का पहला निगडद्रेष्काण है। वृश्चिक का द्वितीय द्रेष्काण पाश है। कर्क व मीन का पहला, कन्या व मीन का मध्य, वृष व मिथुन का अन्तिम द्रेष्काण जलधरद्रेष्काण कहलाता है।

सामान्यत: शुभ ग्रहों के द्रेष्काण जलद्रेष्काण व पाप ग्रहों के द्रेष्काण अग्निद्रेष्काण कहलाते हैं। शुभ द्रेष्काणों में पाप ग्रह या पाप द्रेष्काणों में शुभ ग्रह रहने से वे मिश्र द्रेष्काण हो जाते है। जन्म लग्न से बाईसवॉं द्रेष्काण खर द्रेष्काण कहलाता है।

वर्गोत्तम नवांश – जिस राशि का लग्न हो, उसी राशि का यदि नवमांश लग्न भी हो तो वह वर्गोत्तम नवांश कहलाता है। चर राशियों में पहला नवमांश, स्थिर राशियों में पांचवॉं, द्विस्वभाव राशियों में अन्तिम नवांश वर्गोत्तम होता है।

वर्गोत्तम लग्न में जन्म बहुत शुभ है तथा वर्गोत्तमी ग्रह भी अपने स्वभावानुसार बली होने से शुभ फल देता है। बलवान राशि का नवांश भी अधिक बली व निर्बल राशि का नवांश निर्बल होता है।

चन्द्रमा के पुष्करांश – जन्म समय में या मुहूर्त में चन्द्रमा यदि निम्नलिखित राशि के निर्दिष्ट अंश में हो तो पुष्करांश गत कहलाता है। यह अत्यन्त शुभ होता है।

मेष - 21^0, वृष – 14^0, मिथुन – 18^0 , कर्क - 21^0, सिंह – 14^0, कन्या – 18^0 , तुला - 21^0, वृश्चिक – 14^0, धनु – 18^0 , मकर - 21^0, कुम्भ – 14^0, मीन – 18^0।

चन्द्रमा के मारणांश - जन्म समय में व मुहूर्त्तादि प्रसंगों में निम्नांकित राशि अंशों में चन्द्रमा मृत्युभाग में होकर अशुभ होता है।

मेष - 20^0 या 8^0 वृष – 25^0, मिथुन – 22^0 , कर्क - 22^0, सिंह – 21^0, कन्या – 1^0 , तुला - 4^0, वृश्चिक – 23^0, धनु – 18^0 , मकर - 20^0, कुम्भ – 20^0, मीन – 10^0।

द्वादश भाव – लग्न, धन , भ्रातृ, मित्र, विद्या, शत्रु, स्त्री, मृत्यु, भाग्य, धर्म, आय व व्यय ये बारह भाव लग्न से क्रमशः होते है। इन्हें व्यवहार में प्रथम, द्वितीय, तृतीयादि भाव भी कहते है।

भावों की विविध संज्ञा – 1, 4,7,10 भावों को केन्द्र कहते हैं व 5, 9 भावों का नाम त्रिकोण है। लग्न को केन्द्रत्व त्रिकोणत्व दोनों दोनों प्राप्त है। 6,8,12 भाव का नाम **त्रिक्** स्थान है।

2,5,8,11 भावों को **पणफर** व 3,6,9,12 भावों को **आपोक्लिम** कहते है। 4,8 भावों का नाम **चतुरस्र** है। 3,6,10,11 भावों को **उपचय** या वृद्धि स्थान कहते है।

3,8 आयु भाव एवं 2,7 भावों का नाम मारक भाव है। इनके अधिपति क्रमशः आयुः पति व मारकेश कहलाते हैं।

नवम स्थान को त्रित्रिकोण या शुभ भी कहते हैं तथा षष्ठ स्थान का नाम षट्कोण है । नवम स्थान को **त्रित्रिकोण** या शुभ भी कहते है तथा षष्ठ स्थान का नाम **षट्कोण** है।

अदृश्य चक्रार्ध व दृश्य चक्रार्ध – सप्तम भाव मध्य से आगे लग्न मध्य तक का भाग दृश्य चक्रार्ध या उदितभाग या वामभाग कहलाता है। लग्न स्पष्ट से लेकर सप्तम भाव स्पष्ट तक अदृश्य चक्रार्ध या दक्षिण भाग या अनुदित भाग कहलाता है। दशम भाव स्पष्ट से आगे चतुर्थ भाव स्पष्ट तक पूर्वार्ध एवं चतुर्थ से दशम भाव स्पष्ट तक का भाग उत्तरार्ध कहलाता है।

भावों का कारकत्व – जिस भाव से जो – जो विचार किया जाता है वह वस्तु या बातें उन भावों का कारकत्व कहलाता है।

1. **लग्न भाव** – शरीर, शरीरांग, सुख, दुःख, बुढ़ापा, ज्ञान, जन्म - स्थान, कीर्ति, स्वप्न, बल, गौरव, राज्य, नम्रता, स्वभाव, आयु, शान्ति, अवस्था, व्यक्तित्व, स्वाभिमान, कार्य, चोट, निशान, अपमान, त्वचा, वर्ण, त्यागादि का विचार किया जाता है।
2. **धन भाव** – वित्त, संचित धन, बचत, परिवार, कुटुम्ब, ऑख, वाणी, मुख, विद्या, वाचालता, भाषण कला, भोजन का स्वाद, क्रय – विक्रय, दान, धनप्राप्ति का प्रयत्न, आस्तिकता, परिवार का उत्तरदायित्व, नाखून, चलने का ढंग, झूठ बोलना, नाक, जीभ, कपड़े, भोग- विलास, मित्र, नौकर, मृत्यु, विचारधारा, प्रसन्नता, धन – धान्य व विनयशीलता , वैराग्य, बदनामी, विद्या, यात्राएँ, मन की स्थिरता, आदि का विचार होता है
3. **तृतीय या सहज भाव** – भाई, पराक्रम, अनिष्ट, पुरूषार्थ, परिश्रम, कान, मुँह, टॉगें, भुजा,

चित्त की वेचैनी, स्वर्ग, पर सन्ताप, स्वप्न, बहादुरी, मित्र, यात्रा, गला, कुभोजन, धन का बंटवारा, आभूषण, गुण, अभिरूचियॉ , लाभ, शरीर की बढ़ोत्तरी , कुल का स्तर, नौकर, सहयोगी, वाहन, छोटी यात्राएँ महान कार्य, पिता की मृत्यु, छाती, मामा आदि का विचार इस भाव से किया जाता है।

4. **चतुर्थ या सुख स्थान –** सुख, सम्पत्ति, वाहन, माता, मित्र वर्ग, प्रसिद्धि, मकान, यात्राएँ, बन्धु - बान्धव, मनोरथ, राजा, खजाना, श्वसुर, पशुधन, प्रेम – प्रसंग, बाह्य सुख, पिता का व्यवसाय, भोजन, निद्रा, सुख, सिंहासन, कन्धे, यश, जन – सम्पर्क, झूठे आरोप, गड़ा धन, गृह त्याग, चोरी गई वस्तु की दिशा का स्थान, धान्य सम्पदा आदि का विचार होता है।
5. **पंचम भाव** – विद्या, बुद्धि , प्रबन्ध कुशलता, मन्त्रणा शक्ति, गूढ़ तान्त्रिक क्रियाएँ, सन्तान, शिल्प, कला – कौशल, महान् कार्य, पैतृक धन, दूरदर्शिता, रहस्य, नम्रता, लगन, समालोचना शक्ति, धन कमाने का ढंग, परम्परा से प्राप्त मन्त्री पद, गर्भ, पेट, भोजन की मात्रा, लेखन शक्ति आदि का विचार होता है।
6. **षष्ठ या शत्रु भाव –** शत्रु, रोग, मामा, युद्ध, सृजन, पागलपन, फुंसी – फोड़े, कंजूसी, परिश्रम, ऋण, गर्मी, जख्म, नेत्ररोग, विषपान, निन्दा, चोरी, विपत्ति, भाइयों से झगड़ा , अंग – भंग, नाभि, कमर, मूत्ररोग, भिक्षावृत्ति आदि का विचार होता है।
7. **सप्तम भाव –** पत्नी, दाम्पत्य सुख, दैनिक आय, मृत्यु, व्यभिचार, काम शक्ति, स्त्री से शत्रुता, रास्ता भटकना, पौष्टिक भोजन, पान खाना, सुगन्ध प्रयोग, सजने की प्रवृत्ति, भूल, कपड़े प्राप्त करना, वीर्य, पवित्रता, गुप्तांग, दत्तक पुत्र, अन्य देश, अन्य स्त्री से उत्पन्न पुत्रादि व बाबा का विचार सप्तम भाव से होता है।
8. **अष्टम् भाव** – आयु, मृत्यु का कारण, मृत्यु प्रकार, शवगति, गड़ा धन, वैराग्य, सुख, कष्ट, झगड़ा, मुसीबत, गुप्तरोग, पत्नी का शारीरिक कष्ट, नाश, ऋण, राजकोप, पाप, शरीर कटना, शल्य चिकित्सा, क्रूर कार्य, जीवनरक्षा, मरणोपरान्त गति, गढ़ विजय, चोरी की आदत, वेतन, सूदखोरी, आलस्य आदि अष्टम भाव से देखे जाते है।
9. **नवम भाव** – दान, धर्म, त्याग, बलिदान, तीर्थयात्रा, तपस्या, गुरूभक्ति, चिकित्सा, मन की शुद्धि, ऐश्वर्य, पुत्र, पुत्री, पैतृक धन, राज्याभिषेक, जॉघ, सभी प्रकार की सफलता आदि का विचार नवम भाव से किया जाता है।
10. **दशम भाव –** राज्य, आज्ञा, मान – सम्मान, प्रतिष्ठा, राज्यप्राप्ति, राजपद, सवारी, यश, धन रखना, वृद्धजन, कार्य- विस्तार, औषधि, कमर, सफलता, ख्याति, गौरव, नियन्त्रण, प्रशासन,

आज्ञा, कृषि, रोजगार, खानदान, संन्यास, आकाश, वायुमार्ग की यात्रा, घुटना, आदि का विचार होता है।

11. **एकादश भाव** – लाभ, असफलता, सब प्रकार की उपलब्धि, बड़ा भाई, गुलामी, आमदनी, विद्या, धन कमाने की शक्ति, घुटने, पदवी, सुखलाभ, धननाश, प्रेमिका की भेंट, मंत्रीपद, ससुर से लाभ, भाग्योदय, मनोरथ सिद्धि, आशा, कान, माता की आयु, निपुणता, कन्याएँ, पुत्रवधू,, चाचा आदि का विचार इस भाव से किया जाता है।
12. **द्वादश भाव** – सब प्रकार की हानि, नेत्र, धननाश, धन का निवेश, भोग, निद्रा, विस्तर का सुख, विवाह में विलम्ब, पदयात्रा, कर्ज, मोक्ष, जन – विरोध, अंग- भंग, अधिकार नाश, पदावनति, कैद, बन्धन, शरीर हानि, क्रोध, अन्य देश में बसना, पत्नी का नाश, गरीबी, कष्ट, शरीर विकार आदि का विचार द्वादश भाव से होता है।

बोध प्रश्न – 2

1. भावों की संख्या .... है।
2. पणफर संज्ञक राशियॉ .... है।
3. राशि के नवम भाग को .... कहते है।
4. षष्टयंश का अर्थ .... है।
5. राशि के आधे भाग को .... कहते है।

ग्रहों का कारकत्व -

ग्रहों से विभिन्न बातें देखी जाती हैं। ग्रह सदैव नित्य रूप से किसी पदार्थ विशेष का व भाव विशेष का प्रतिनिधित्व करते हैं। यह स्थिति सभी कुण्डलियों में सदा समान ही रहती है। अत: इसे ग्रहों का स्थिर कारकत्व कहते हैं।

भावों के स्थिर कारक – प्रथम भाव का सूर्य, द्वितीय स्थान का गुरू, तृतीय स्थान का मंगल, चौथे स्थान का बुध व चन्द्र, पंचम भाव का गुरू, षष्ठ स्थान का शनि व मंगल, सप्तम स्थान का शुक्र, अष्टम स्थान का शनि, नवम भाव का गुरू व सूर्य, दशम भाव के सूर्य, बुध, गुरू, व शनि, एकादश भाव का वृहस्पति व द्वादश भाव का शनि स्थिर कारक है।

इसके अतिरिक्त सूर्य से पिता का, चन्द्रमा से माता, मंगल से भाई, साले तथा बहन का, बुध से मित्रों, मामा, मामी आदि का, गुरू से दादा, दादी, शुक्र से पति या पत्नी व शनि से पुत्र का विचार किया जाता है। रात्रि में जन्म हो तो चन्द्र व शनि को माता – पिता कहा है।

ग्रहों का चर कारकत्व – जिस ग्रह के सबसे अधिक अंश हों वह आत्मकारक, उससे कम अंश

वाला अमात्यकारक, उससे कम अंशों वाला भ्रातृकारक, उससे कम अंशों वाला मातृकारक, उससे कम अंशों वाला पुत्रकारक, उससे कम अंशों वाला ज्ञातिकारक व सबसे कम अंशों वाला स्त्रीकारक होता है। यह मत जैमिनी पद्धति से है।

यदि दो ग्रहों के अंश समान हों तो राहु को सम्मिलित किया जाता है। यदि तीन ग्रहों के अंश समान हों तो रिक्त स्थानों की पूर्ति पूर्वोक्त स्थिर कारकों में से करनी चाहिए। आत्मकारक सर्वतोभावेन व्यक्ति पर अपना प्रभुत्व रखता है।

ग्रहों का विस्तृत कारकत्व -

1. **सूर्य** – आत्मा, शक्ति, तीक्ष्णता, बल, प्रभाव, गर्मी, अग्नितत्व, धैर्य, राजाश्रय, कटुता, आक्रामकता, वृद्धावस्था, पशुधन, भूमि, पिता, अभिरूचि, ज्ञान, हड्डी, प्रताप, पाचन शक्ति, उत्साह, वन प्रदेश, ऑख, वनभ्रमण, राजा, यात्रा, व्यवहार, पित्त, नेत्ररोग, शरीर, लकड़ी, मन की पवित्रता, शासन, रोगनाश, सौराष्ट्र देश, सिर के रोग, गंजापन, लाल कपड़ा, पत्थर, प्रदर्शन की भावना, नदी का किनारा, मूॅग, लाल चन्दन, कॉटेदार झाड़ियॉं, उन, पर्वतीय प्रदेश, सोना, तॉंबा, शस्त्र प्रयोग, विषदान, दवाई, समुद्र पार की यात्राएँ, समस्याओं का समाधान, गूढ़ मन्त्रणा आदि का कारक है।
2. **चन्द्रमा** – कविता, फूल, खाने के पदार्थ, मणि, चॉदी, शंख, मोती आदि समुद्रोत्पन्न पदार्थ, नमकीन पानी, वस्त्राभूषण, स्त्री, घी, तेल, तिल, नींद, बुद्धि, रोग, आलस्य, कफ, प्लीहा, मनोभाव, हृदय, पाप – पुण्य, खटाई, सुख, जलीय पदार्थ, चॉदी, गन्ना, गेहूॅं, सर्दी से बुखार, यात्रा, कूऑ आदि स्थान, टी0बी0, सफेद रंग, बेल्ट, तगड़ी, कॉसा, नमक, मन, मनोबल, शरद ऋतु, मुहूर्त्त, मुखशोभा, पेट, शहद, हँसी – मजाक, परिहास कुशलता, तेज चाल, चंचलता, दही, यश, रोजगार लाभ, कन्धे की बीमारियॉं, राजसी चिन्ह, खून की शुद्धता, शरीर विकास, चमकीली चीजें मखमली कोमल कपड़े आदि का कारक है।
3. **मंगल** – शूरता, वीरता, पराक्रम, आक्रामकता, युद्ध, शस्त्र उठाना, वीर्य हानि, चोरी, शत्रु, लाल रंग, उद्यानपति होना, शोर, पशुधन, राजयोग, क्रोध, मूर्खता, विदेशयात्रा, धीरज, पालक पिता आदि, अग्नि, मौखिक कलह, चित्त, गर्मी, घाव, राजसेवा, रोग, प्रसिद्धि, अंगक्षति, कटुरस, युवावस्था, मिट्टी के पदार्थ, रूकावट, मांस – भक्षण, दोष – दर्शन, शत्रु पर विजय, तीखा भोजन, सोना धातु, गम्भीरता, पुरूषत्व, शील, मूत्र के रोग, जला हुआ प्रदेश, सूखे वन, धन, खून, काम, क्रोध, सेनापतित्व, वृक्ष, भाई, वन विभाग का अधिकारी, ठेकेदारी, कृषि भूमि, दण्डाधिकारी, सॉप, घर, वाहन – सुख, खून बहना, पारा, बेहोशी आदि का कारक है।

4. **बुध** – बुद्धि, विद्या, घोड़ा, खजाना, गणित, वाक्कला, सेवा, लेखन, नया वस्त्र, दु:स्वप्न, नपुंसकता, खाल, गीलापन, वैराग्य, सुन्दर भवन, डॉक्टर, गला, गान विद्या, भिक्षु, तिर्यग् दृष्टि, हँसोड़पन, नम्रता, नृत्य, मन का संयम, नाभि, गोत्र वृद्धि, आन्ध्रप्रदेश की भाषा, विष्णु की भक्ति, शूद्र, पक्षी, बहन, भाषा का चमत्कार, नगरद्वार, धूल, गुप्तांग, व्याकरण, पुराण, साहित्य व वेदान्त विद्या, जौहरी, विद्वता, मामा, मन्त्र, तंत्र, आयुर्वेद, मन्त्रित्व, जुड़वापन, वनस्पति आदि का कारक बुध है।
5. **गुरू** – शुभ कर्म, धर्म, गौरव, महत्व, पोषण, शिक्षा, गर्भाधान, नगर, राष्ट्र, वाहन, आसन, पद, सिंहासन, अन्न, गृह- सुख, पुत्र, अध्यापन, कर्तव्य बोध, संचित धन, मीमांसा शास्त्र, दही, बड़ा शरीर, प्रताप, यश, तर्क, ज्योतिष, पुत्र, फौज, उदर रोग, दादा, बड़े मकान, बड़ा भाई, राजा क्रोध, रत्नों का व्यापार, स्वास्थ्य, परोपकार, राजकीय सम्मान, तपस्या, दान, गुरूभक्ति, मध्यम श्रेणी का कपड़ा, गृहसुख, धारणात्मक बुद्धि, सभा चतुरता, बर्तन, सुख, कफ, सुन्दर वाहन आदि का अधिपति वृहस्पति है।
6. **शुक्र** - हीरा, मणि, विवाह, प्रेम प्रसंग, दाम्पत्य सुख, आमदनी, स्त्री, मैथुन सुख व शक्ति, खटाई, फूल, यश, जवानी, सुन्दरता, काव्य रचना, वाहन, चॉदी, खुजली, राजसी स्वभाव, सौन्दर्य प्रसाधन का व्यवसाय, गाना, बजाना, आमोद – प्रमोद आदि, तैराकी, विचित्र कविता, रसिकता, भाग्य, सौन्दर्य, आकर्षक, व्यक्तित्व, ऐश्वर्य, कम खाना, वसन्त ऋतु, वीर्य, जल – क्रीड़ा, नाटक, अभिनय, आसक्ति, राजकीय मुद्रा, कमजोरी, काले बाल, रहस्य की बातें आदि का कारक शुक्र है
7. **शनि** – जड़ता, आलस्य, रूकावट, चमड़ा, कष्ट, दु:ख, विपत्ति, विरोध, मृत्यु, दासी, गधा, खच्चर, चांडाल, हीनांग, वनचर, डरावने लोग, स्वामी, आयु, नपुंसकता, पक्षी, दासता, अधार्मिक कार्य, झूठ बोलना, वात रोग, बुढ़ापा, नसें, पैर, परिश्रम, मजदूरी, अवैध सन्तति, गन्दे व बुरे पदार्थ व विचार, लंगड़ापन, राख, लोहा, काले धान्य, कृषिजीवी, शस्त्रागार, जाति वहिष्कार, सीसा, शक्ति का दुरूपयोग, तुर्क, पुराना तेल, लकड़ी, तामासी गुण, व्यर्थ घूमना, डर, अटपटे बाल, बकरा, भैंस, सार्वभौम सत्ता, कुत्ता, चोरी, कठोर हृदयता, मूर्ख नौकर व दीक्षा का कारक शनि है।
8. **राहु** – छत्र, चॅवर, राज्य, संग्रह, कुतर्क, मर्मच्छेदी वचन, शूद्र, पाप, स्त्री, सुसज्जित वाहन, अधार्मिक मनुष्य, गंगा – स्नान, तीर्थ यात्रा, झूठ, भ्रम, मायाचार, कपट, रात की हवाएँ, रेंगने वाले कीड़े – मकोड़े, गुप्त बातें, मृत्यु का समय, वायु का तेज दर्द, सॉस की बीमारी, दुर्गापूजा, पशुओं से मैथुन, उर्दू आदि भाषाएँ, कठोर भाषण, अचानक फल देना आदि का

कारक राहु है।

9. **केतु** – मोक्ष, शिवोपासना, डॉक्टरी, कुत्ता, मुर्गा, ऐश्वर्य, टी0बी0 पीड़ा, ज्वर, ताप, वायु विकार, स्नेह, सम्पत्ति का हस्तान्तरण, पत्थर की चोट, कॉटा, ब्रह्मज्ञान, ऑख का दर्द, अज्ञानता, भाग्य, मौनव्रत, वैराग्य, भूख, उदरशूल, सींगों वाले पशु, ध्वज, शूद्रों की सभा, बन्धन की आज्ञा को रोकना, जमानत आदि का कारक केतु है।

बलवान् कारक से उससे सम्बन्धित पदार्थों की प्राप्ति होती है। यदि भावेश भाव पदार्थ का कारक या स्वयं भाव तीनों ही निर्बल या पीड़ित हों तो उस भाव से सम्बन्धित फल की प्राप्ति नहीं होती है। साधारणत: जो ग्रह जिस भाव का कारक हो उसी स्थान में बैठकर प्राय: भाव की हानि करता है। शनि इसका अपवाद है। अर्थात् अष्टम भाव में शनि आयु नाशक न होकर आयु को प्रदान करता है। भाव, भावेश व कारक ये तीनों बली हों तो भाव का पूरा फल, दो ही बली होने से थोड़ा कम अर्थात् 2/3 फल होता है। तथा एक बली होने से 1/3 फल ही प्राप्त होता है।

अन्य प्रकार से कारकत्व – जन्म लग्न या चन्द्र से 1,4,7,10 भावों में जितने ग्रह स्वोच्च व मूल त्रिकोण व स्वराशि में स्थित हों तो वे परस्पर कारक होते हैं, तथा एक दूसरे को बल प्रदान कर शुभप्रद होते है। इनमें भी दशम भावगत ग्रह विशेषतया कारक अर्थात् फलकारक होता है।

अथवा कहीं भी स्वोच्च, मूलत्रिकोण या स्वराशि में स्थित ग्रह या स्वोच्चादि नवांशगत ग्रह भी कारक अर्थात् शुभ फल देने वाले होते हैं। अथवा केन्द्र स्थानों में किसी भी राशि में स्थित ग्रह कारक होते हैं।

इस प्रकार कारक ग्रहों की अधिकता होने से जातक साधारण कुलोत्पन्न होकर भी प्रधानता पाता है, तब राजकुल आदि में पैदा होने पर तो विशिष्ट प्रधानता पाता ही है।

कारकों की फल प्राप्ति – सभी कारक ग्रह अपने से सम्बन्धित या समस्त या कुछ शुभ फल यथावसर इन वर्षों में या इसके उपरान्त देते हैं –

सूर्य – 22 वर्ष , मंगल – 28 वर्ष, बुध – 32 वर्ष, गुरू – 16 वर्ष, शुक्र – 25 वर्ष, शनि – 36 वर्ष, राहु केतु के 42 वर्ष भाग्योदय वर्ष होते हैं।

2.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि नक्षत्राणां समूह: **'राशि:'** कथ्यते। मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक,धनु मकर, कुम्भ,मीन ये बारह राशियॉ है। राशियों के भी विभिन्न स्वभाव, शील, गुण व धर्म माने गए है, जिनका विचार फलादेश में आवश्यक है। ये बारह राशियॉ आकाश में दीर्घ वृत्ताकार मार्ग या क्रान्तिवृत्त या सूर्य के भ्रमण मार्ग पर स्थित है। ये वलयाकार प्रति क्षण पूर्वी क्षितिज पर उदित होती रहती है। जो उदय लग्न माना जाता है। जन्म लग्न

में जो राशि पापग्रह से दृष्ट हो तो जिस अंग का वह प्रतिनिधित्व करती हो, उसी अंग से जातक निर्बल होता है तथा जो राशि शुभयुक्त दृष्ट हो तो वही अंग पुष्ट होता है। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के 27 नक्षत्रों की 12 राशियों व लग्नों का मानचित्र एक वृहद्विराट पुरूष रूप में बताकर प्रत्येक पुरूष के नख से शिर की चोटी तक काल पुरूष के हाथ पैर मुख कान आदि का स्पष्टीकरण इस प्रकार है – जिनसे होरा शास्त्र द्वारा भविष्य ज्ञान किया जाता है । अश्विनी नक्षत्र के चार पाद + भरणी के 4 पाद +कृत्तिका का 1 पाद तक ब्रह्माण्उ के नक्षत्र गोल में मेष आकार थी एक राशि का प्रदेश भू पृष्ठ से भी तलिकावेध से देखा गया है। अत: नक्षत्र वृत्त का 12 वॉ विभाग $360^0/ 12 = 30^0 = 1$ राशि का मान कहा गया है। इस प्रकार मेषाकद 12 राशियों एवं 27 नक्षत्रों में सवा दो नक्षत्रात्मक क्षेत्र की 360 / 30 = 12 राशियों के नाम शास्त्रान्तर में प्रसिद्ध हुए है।

2.5 पारिभाषिक शब्दावली

राशि – नक्षत्रों के समूह को राशि कहते है।

नक्षत्र – न क्षरतीति नक्षत्रम्।

कुलोत्पन्न - कुल में उत्पन्न

स्वराशि – अपनी राशि

शिवोपासना – शिव की उपासना

षष्टयंश – साठवॉं अंश

त्रिकोण – 5,9

केन्द्र – 1,4,7,10

2.6 बोधप्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न - 1 के उत्तर –

1. ग

2. ग

3. घ

4. क

5. ग

बोध प्रश्न – 2 के उत्तर -

1. 12

2. 2,5,8,11,

3. नवमांश

4. साठवॉं हिस्सा

5. होरा

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. ज्योतिष सर्वस्व
2. वृहज्जातक
3. वृहत्पराशर होरा शास्त्र
4. सारावली
5. वृहत्संहिता

2.8 सहायक पाठ्यसामग्री

जातक पारिजात

जातक पद्धति

वृहदवकहड़ाचक्रम्

लघुजातक

सुगम ज्योतिष प्रवेशिका

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न -

1. राशि से आप क्या समझते है ? षडवर्ग का उल्लेख करते हुए राशियों के विभिन्न अवयवों का विस्तार से वर्णन करें।
2. राशि एवं भावों में सम्बन्ध स्थापित करते हुये विस्तारपूर्वक उल्लेख कीजिये।

इकाई – 3 भाव विचार

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना -

प्रस्तुत इकाई प्रथम खण्ड के इकाई तीन '**भाव विचार**' शीर्षक से संबंधित है। **भाव विचार** जातक शास्त्र का एक महत्वपूर्ण अंग है।

ज्योतिष शास्त्र में भाव से तात्पर्य जन्मांग चक्र में स्थित द्वादश भाव से हैं, जिसका अवलोकन कर हम जातक शास्त्र के अन्तर्गत व्यक्तिगत वा समष्टिगत फलादेशादि कार्य करते है।

इससे पूर्व की इकाईयों में आपने जातक शास्त्र क्या हैं ? इस विषय से परिचित हो चुके है। यहॅा हम इस इकाई में जातक शास्त्र के भाव विचार सम्बन्धित विषयों का अध्ययन विस्तार पूर्वक करेंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप-

1. भावों को परिभाषित करने में समर्थ हो सकेंगे।
2. द्वादश भाव के महत्त्व को समझा सकेंगे।
3. कुण्डली में भावों के सिद्धान्त के निरूपण करने में समर्थ होंगे।
4. भावों के स्वरूप वर्णन करने में समर्थ होंगे।
5. कुण्डली में भावों के सम्बन्ध को निरूपित करने में समर्थ होंगे।

3.3 भावों का परिचय

आकाशस्थ क्रान्तिवृत्त के 360^0 अंशों के 12 विभाग करने से 360/12 = 30 अंश के कोण का मान एक राशि का मान होता है। उन्हीं 12 विभागों को जातक शास्त्र में द्वादश भावों के नाम से जानते है। जन्मांग चक्र में इन्हीं 12 भावों से अलग- अलग तथ्यों का विचार फलादेशादि कर्म में किया जाता है। कुण्डली निर्माण प्रक्रिया में भी द्वादश भाव साधन किया जाता है। फलादेशादि कार्य के लिये भावों का ज्ञान होना परमावश्यक है।

3.3.1 द्वादश भावों का विभिन्न स्वरूप

आचार्य वराहमिहिर ने स्वग्रन्थ वृहज्जातकम् में कहा है –

होरादयस्तनुकुटुम्बसहोत्थबन्धु
पुत्रारिपत्निमरणानि शुभास्पदाया:।
रि:फाख्यमित्युपचयान्यरिकर्मलाभ

दुश्चिक्यसंज्ञितगृहाणि न नित्यमेके ।।

जन्मांग चक्र में क्रमशः लग्नादि द्वादश भावों के क्रमशः लग्न का नाम तनु, धन भाव का नाम कुटुम्ब, तृतीय भाव का नाम सहोत्थ, चतुर्थ भाव का सहज, पंचम भाव का बन्धु, षष्ठ भाव का नाम अरि अर्थात् शत्रु, सप्तम भाव का नाम पत्नी, अष्टम भाव का नाम मरण, नवम भाव का नाम भाग्य (शुभ), दशम भाव का नाम कर्म (आस्पद), एकादश भाव का नाम आय (लाभ), द्वादश भाव का नाम रिष्फ संज्ञायें कही गई है।

प्रत्येक भाव के नाम के पर्यायवाची शब्द से भी उस भाव का बोध करना चाहिये। जैसे तनु के स्थान पर शरीर, अंग, उदय आदि।

भावों की संज्ञा –

भाव	प्रथम	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ	पंचम	षष्ठ	सप्तम	अष्टम	नवम	दशम	एकादश	द्वादश
संज्ञा	तनु	कुटुम्ब	सहोत्थ	बन्धु	पुत्र	अरि	पत्नी	मरण	शुभ	आस्पद	आय	रिष्फ

द्वादश भावों के पर्यायवाची नाम –

कल्पस्वविक्रमगृहप्रतिभाक्षतानि
चित्तोत्थरन्ध्रगुरूमानभवव्ययानि ।
लग्नाच्चतुर्थनिधने चतुरस्रसंज्ञे
द्यूनं च सप्तमगृहं दशमर्क्षमाज्ञा ।।

तन्वादि द्वादश भावों की क्रमशः कल्प - स्व – विक्रम- गृह – प्रतिभा – क्षत – चितोत्थ – रन्ध्र – गुरू – मान – भव और व्यय संज्ञायें होती है। जैसे लग्न की कल्प, द्वितीय की स्व, तृतीय की विक्रम आदि। लग्न से चतुर्थ और अष्टम भाव की चतुरस्र, सप्तम भाव की द्यून तथा दशम भाव की ख और आज्ञा संज्ञा है।

भावों का नामान्तर

भाव	प्रथम	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ	पंचम	षष्ठ	सप्तम	अष्टम	नवम	दशम	एकादश	द्वादश
संज्ञा	कल्प	स्व	विक्रम	गृह	प्रतिभा	क्षत	चित्तोत्थ	रन्ध्र	गुरू	मान	भव	व्यय

चतुरस्रादि संज्ञा -

भाव		**संज्ञा**
चतुर्थ , अष्टम्	–	चतुरस्र
सप्तम	–	द्यून
दशम	-	ख, आज्ञा

कण्टकादि संज्ञा –

कण्टककेन्द्रचतुष्टयसंज्ञा: सप्तमलग्नचतुर्थखभावात्।
तेषु यथाभिहितेषु बलाढया: कीटनराम्बुचरा: पशवश्च ।।

सप्तम – लग्न - चतुर्थ – दशम भावों की कण्टक केन्द्र और चतुष्टय संज्ञायें हैं। इनमें क्रमश: कीट – मनुष्य जलचर और पशु राशियॉ बलवान होती है। जैसे कीट (वृश्चिक – मीन – कर्क) सप्तम में, मनुष्य (मिथुन – कन्या – तुला – धनु पूर्वार्द्ध) लग्न में, जलचर (कर्क – मीन – मकर उत्तरार्द्ध) चतुर्थ में और चतुष्पद (मेष – सिंह – वृष – धनु उत्तरार्द्ध मकर पूर्वार्द्ध) दशम भाव में बलवान होती है।

पणफरादि संज्ञा –

केन्द्रात् परं पणफरं परतश्च सर्व
मापोक्लिमं हिबुकमम्बु सुखं च वेश्म।
जामित्रमस्तभवनं सुतभं त्रिकोणं
मेषूरणं दशममत्र च कर्म विद्यात् ।।

केन्द्रस्थान से आगे द्वितीय – पंचम- अष्टम – एकादश भावों की पणफर संज्ञा और पणफर से आगे तृतीय षष्ठ नवम द्वादश की आपोक्लिम संज्ञा है। चतुर्थ भाव की हिबुक – अम्बु – सुख और वेश्म संज्ञा है। सप्तम भाव की जामित्र और अस्त संज्ञा पंचम भाव की त्रिकोण और दशम भाव की मेषूरण संज्ञा है।

कालपुरूष के अंगों में द्वादशभाव का निर्माण कर उनमें द्वादश राशियों की स्थापना की गई है। जैसा कि लघुजातक में वराहमिहिर ने प्रतिपादित किया है –

शीर्षमुखबाहुहृदयोदराणि कटि बस्ति गुह्य संज्ञानि।
उरू जानू जंघे चरणाविति राशयोऽजाद्या: ।।
कालनरस्यावयवान पुरूषाणां चिन्त्येत्प्रसवकाले।
सदऽसदग्रह संयोगाद् पुष्टा: सोपद्रवास्ते च ।।

वृहत्पराशरहोराशास्त्र में भी महर्षि पराशर ने राशिस्वरूपाध्याय में कहा है –

शीर्षानने तथा बाहू हृत्क्रोडकटिबस्तय:।
गुह्योरूयुगे जानुयुग्मे वै जङ्घके तथा ।।
चरणौ द्वौ तथा मेषात् ज्ञेया: शीर्षादय: क्रमात् ।।

अर्थात् कालपुरूष के अंग में मेषादि राशियॉ क्रम से स्थित हैं यथा मेष – मस्तक, वृष – मुख, मिथुन

– बाहु, कर्क – हृदय, सिंह – उदर, कन्या – कटि, तुला – वस्ति, वृश्चिक – लिंग, धनु – जङ्घा, मकर – घुटना, कुम्भ - घुटना से अधोभाग, और मीन – पाद है।

चरस्थिरद्विस्वभावा: क्रूराक्रूरौ नरस्त्रियौ।
पित्तानिलत्रिधात्वैक्यश्लेष्मिकाश्च क्रियादय: ।।

मेषादि द्वादश राशियॉ क्रम से चर – स्थिर- द्विस्वभाव, चर – स्थिर- द्विस्वभाव , चर – स्थिर- द्विस्वभाव, चर – स्थिर- द्विस्वभाव हैं। इनमें से मेषादि 6 विषम राशियॉ क्रूरसंज्ञक हैं तथा वृषादि 6 सम राशियॉ अक्रूरसंज्ञक हैं। जो क्रूरसंज्ञक राशियॉ हैं, वे पुरूष संज्ञक हैं और जो अक्रूरसंज्ञक राशियॉं हैं, वे स्त्रीसंज्ञक हैं। मेषादि द्वादश राशियॉ क्रम से पित्त, वात, त्रिधातु, कफ, पित्त, वात, त्रिधातु,

राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
चरादि	चर	स्थिर	द्विस्वभाव	चर	स्थिर	द्विस्वभाव	चर	स्थिर	द्विस्वभाव	चर	स्थिर	द्विस्वभाव
क्रूराक्रूर	क्रूर	अक्रूर	क्रूर	अक्रू	क्रूर	अक्रू	क्रूर	अक्रू	क्रूर	अक्रू	क्रूर	अक्रू
पु./स्त्री	पु.	स्त्री	पु.	स्त्री	पु.	स्त्री	पु.	स्त्री	पु.	स्त्री	पु.	स्त्री
प्रकृति	पित्त	वात	त्रिधातु	कफ	पित्त	वात	त्रिधातु	कफ	पित्त	वात	त्रिधातु	कफ

कफ, पित्त, वात, त्रिधातु कफ प्राकृतिक हैं।

भाव लग्न साधन के बारे में बताते हुये महर्षि पराशर जी कहते है –

अथाहं सम्प्रवक्ष्यामि तवाग्रे द्विजसत्तम।
भाव होरा घटी संज्ञलग्नानीति पृथक् पृथक्।
सूर्योदयं समारभ्य घटिकानां तु पञ्चकम्।
प्रयाति जन्मपर्यन्तं भावलग्नं तदेव हि।
इष्टं घटयादिकं भक्तया पञ्चभिर्भादिजं फलम्।
योज्यमौदयिके सूर्ये भावलग्नं स्फुटं च तत् ।।

हे द्विजप्रवर मैत्रेय। अब मैं आपके समक्ष भाव लग्न, होरा लग्न और घटी लग्न को अलग – अलग कहता हूॅ। सूर्योदय से जन्मकाल तक प्रत्येक 5 – 5 घटी के हिसाब से एक – एक लग्न का प्रमाण होता है और वह भावलग्न होता है। अतएव अपने इष्टकाल में 5 से भाग देने पर जो राश्यादि लब्धि हो उसे उदयकालिक स्पष्टसूर्य में योग करने से राश्यादि स्पष्ट भावलग्न होता है।

उदाहरण – जन्मेष्ट काल 5।25 में 5 का भाग दिया तो 1।5।0।0 राश्यादि हुये, इसको उदयकालिक स्पष्ट सूर्य 3/20/4/25 में जोडने से 4/25/4/25 भावलग्न हुआ।

3.3.2 भावों का कारकत्व

जिस भाव से जो – जो विचार किया जाता है वह वस्तु या बातें उन भावों का कारकत्व कहलाता है

1. **लग्न भाव** – शरीर, शरीरांग, सुख, दु:ख, बुढ़ापा, ज्ञान, जन्म - स्थान, कीर्ति, स्वप्न, बल, गौरव, राज्य, नम्रता, स्वभाव, आयु, शान्ति, अवस्था, व्यक्तित्व, स्वाभिमान, कार्य, चोट, निशान, अपमान, त्वचा, वर्ण, त्यागादि का विचार किया जाता है।
2. **धन भाव** – वित्त, संचित धन, बचत, परिवार, कुटुम्ब, ऑख, वाणी, मुख, विद्या, वाचालता, भाषण कला, भोजन का स्वाद, क्रय – विक्रय, दान, धनप्राप्ति का प्रयत्न, आस्तिकता, परिवार का उत्तरदायित्व, नाखून, चलने का ढंग, झूठ बोलना, नाक, जीभ, कपड़े, भोग- विलास, मित्र, नौकर, मृत्यु, विचारधारा, प्रसन्नता, धन – धान्य व विनयशीलता , वैराग्य, बदनामी, विद्या, यात्राऍं, मन की स्थिरता, आदि का विचार होता है
3. **तृतीय या सहज भाव** – भाई, पराक्रम, अनिष्ट, पुरूषार्थ, परिश्रम, कान, मुँह, टॉगें, भुजा, चित्त की वेचैनी, स्वर्ग, पर सन्ताप, स्वप्न, बहादुरी, मित्र, यात्रा, गला, कुभोजन, धन का बंटवारा, आभूषण, गुण, अभिरूचियॉ , लाभ, शरीर की बढ़ोत्तरी , कुल का स्तर, नौकर, सहयोगी, वाहन, छोटी यात्राऍं महान कार्य, पिता की मृत्यु, छाती, मामा आदि का विचार इस भाव से किया जाता है।
4. **चतुर्थ या सुख स्थान** – सुख, सम्पत्ति, वाहन, माता, मित्र वर्ग, प्रसिद्धि, मकान, यात्राऍं, बन्धु - बान्धव, मनोरथ, राजा, खजाना, श्वसुर, पशुधन, प्रेम – प्रसंग, बाह्य सुख, पिता का व्यवसाय, भोजन, निद्रा, सुख, सिंहासन, कन्धे, यश, जन – सम्पर्क, झूठे आरोप, गड़ा धन, गृह त्याग, चोरी गई वस्तु की दिशा का स्थान, धान्य सम्पदा आदि का विचार होता है।
5. **पंचम भाव** – विद्या, बुद्धि , प्रबन्ध कुशलता, मन्त्रणा शक्ति, गूढ़ तान्त्रिक क्रियाऍं, सन्तान, शिल्प, कला – कौशल, महान् कार्य, पैतृक धन, दूरदर्शिता, रहस्य, नम्रता, लगन, समालोचना शक्ति, धन कमाने का ढंग, परम्परा से प्राप्त मन्त्री पद, गर्भ, पेट, भोजन की मात्रा, लेखन शक्ति आदि का विचार होता है।
6. **षष्ठ या शत्रु भाव** – शत्रु, रोग, मामा, युद्ध, सृजन, पागलपन, फुंसी – फोड़े, कंजूसी, परिश्रम, ऋण, गर्मी, जख्म, नेत्ररोग, विषपान, निन्दा, चोरी, विपत्ति, भाइयों से झगड़ा , अंग – भंग, नाभि, कमर, मूत्ररोग, भिक्षावृत्ति आदि का विचार होता है।

7. **सप्तम भाव** – पत्नी, दाम्पत्य सुख, दैनिक आय, मृत्यु, व्यभिचार, काम शक्ति, स्त्री से शत्रुता, रास्ता भटकना, पौष्टिक भोजन, पान खाना, सुगन्ध प्रयोग, सजने की प्रवृत्ति, भूल, कपड़े प्राप्त करना, वीर्य, पवित्रता, गुप्तांग, दत्तक पुत्र, अन्य देश, अन्य स्त्री से उत्पन्न पुत्रादि व बाबा का विचार सप्तम भाव से होता है।
8. **अष्टम् भाव** – आयु, मृत्यु का कारण, मृत्यु प्रकार, शवगति, गड़ा धन, वैराग्य, सुख, कष्ट, झगड़ा, मुसीबत, गुप्तरोग, पत्नी का शारीरिक कष्ट, नाश, ऋण, राजकोप, पाप, शरीर कटना, शल्य चिकित्सा, क्रूर कार्य, जीवनरक्षा, मरणोपरान्त गति, गढ़ विजय, चोरी की आदत, वेतन, सूदखोरी, आलस्य आदि अष्टम भाव से देखे जाते है।
9. **नवम भाव** – दान, धर्म, त्याग, बलिदान, तीर्थयात्रा, तपस्या, गुरूभक्ति, चिकित्सा, मन की शुद्धि, ऐश्वर्य, पुत्र, पुत्री, पैतृक धन, राज्याभिषेक, जॉघ, सभी प्रकार की सफलता आदि का विचार नवम भाव से किया जाता है।
10. **दशम भाव** – राज्य, आज्ञा, मान – सम्मान, प्रतिष्ठा, राज्यप्राप्ति, राजपद, सवारी, यश, धन रखना, वृद्धजन, कार्य- विस्तार, औषधि, कमर, सफलता, ख्याति, गौरव, नियन्त्रण, प्रशासन, आज्ञा, कृषि, रोजगार, खानदान, संन्यास, आकाश, वायुमार्ग की यात्रा, घुटना, आदि का विचार होता है।
11. **एकादश भाव** – लाभ, असफलता, सब प्रकार की उपलब्धि, बड़ा भाई, गुलामी, आमदनी, विद्या, धन कमाने की शक्ति, घुटने, पदवी, सुखलाभ, धननाश, प्रेमिका की भेंट, मंत्रीपद, ससुर से लाभ, भाग्योदय, मनोरथ सिद्धि, आशा, कान, माता की आयु, निपुणता, कन्याएँ, पुत्रवधू,, चाचा आदि का विचार इस भाव से किया जाता है।
12. **द्वादश भाव** – सब प्रकार की हानि, नेत्र, धननाश, धन का निवेश, भोग, निद्रा, विस्तर का सुख, विवाह में विलम्ब, पदयात्रा, कर्ज, मोक्ष, जन – विरोध, अंग- भंग, अधिकार नाश, पदावनति, कैद, बन्धन, शरीर हानि, क्रोध, अन्य देश में बसना, पत्नी का नाश, गरीबी, कष्ट, शरीर विकार आदि का विचार द्वादश भाव से होता है

बोध प्रश्न : –

निम्नलिखित प्रश्नों का एकशब्देन उत्तर दीजिये –

क. भाव कितने प्रकार के होते है।

ख. एक भाव कितने अंश का होता है ।

ग. तुला राशि चर, स्थिर और द्विस्वभाव में क्या है।

घ. पणफर से तात्पर्य है।

ङ. सूर्योदय से जन्मकाल तक प्रत्येक 5 – 5 घटी के हिसाब से एक – एक लग्न का प्रमाण होता है और वह लग्न होता है।

राशियों का स्वरूप -

मेष राशि स्वरूप –

रक्तवर्णो वृहद्गात्रश्चतुश्पाद्रात्रिविक्रमी।
पूर्ववासी नृपज्ञातिः शैलचारी रजोगुणी।
पृष्ठोदयी पावकी च मेषराशिः कुजाधिपः।

रक्त वर्ण, लम्बा शरीर, चतुष्पाद, रात्रि में बली, पूर्व में रहने वाला, क्षत्रिय जाति, पर्वत पर विचरण करने वाला, रजोगुणी, पृष्ठोदयी एवं अग्नितत्वात्मक – इस प्रकार का मेष राशि का स्वरूप है। इसका अधिपति भौम होता है।

वृष राशि स्वरूप -

श्वेतः शुक्राधिपो दीर्घश्चतुष्पाच्छर्वरी बली।
याम्येद् ग्राम्यो वणिग्भूमिरजः पृष्ठोदयी वृषः।

वृष राशि श्वेत वर्ण, दीर्घ शरीर, चतुष्पाद, रात्रिबली, दक्षिण दिशा का निवासी, ग्राम में घूमने वाला, वैश्य जाति, भूमि तत्व, रजोगुणी, और पृष्ठोदयी होता है। इसका स्वामी शुक्र होता है।

मिथुन राशि स्वरूप –

शीर्षोदयी नृमिथुनं सगदं च सवीणकम्।
प्रत्यग्वायुर्द्विपाद्रात्रिबली ग्रामव्रजोऽनिली।
समगात्रो हरिद्वर्णो मिथुनाख्यो बुधाधिपः।

मिथुन राशि शीर्षोदयी, गदा और वीणायुक्त पुरूष – स्त्री की जोडी, पश्चिम दिशा का निवासी, वायु तत्व, द्विपदी, रात्रिबली, ग्राम में रहने वाला, वायुप्राकृतिक, समान शरीर वाला और हरित वर्ण का होता है। इसका अधिपति बुध होता है।

कर्क राशि स्वरूप –

पाटलो वनचारी च ब्राह्मणो निशि वीर्यवान्।
बहुपादचरः स्थौल्यतनुः सत्वगुणी जली।

पृष्ठोदयी कर्कराशिर्मृगांकाधिपतिः स्मृतः ।।

कर्क राशि का स्वरूप पाटल वर्ण, वनचारी, विप्रवर्ण, रात्रि में बली, अधिक पैर वाला, स्थूल शरीर, सत्वगुणी, जल तत्व वाला एवं पृष्ठोदयी कहा गया है। इसका अधिपति चन्द्रमा होता है।

सिंह राशि स्वरूप –

सिंह सूर्याधिपः सत्वी चतुष्पात् क्षत्रियो वनी ।

शीर्षोदयी बृहद्गात्रः पाण्डुः पूर्वेड् द्युवीर्यवान् ।।

सिंह राशि का स्वरूप सत्वगुणी, चतुष्पाद, क्षत्रिय, वनचारी, शीर्षोदयी, दीर्घशरीर, पीला वर्ण, पूर्व दिशा का अधिपति और दिवाबली होता है। इसका स्वामी सूर्य होता है।

कन्या राशि स्वरूप –

पार्वतीयाथ कन्याख्या राशिर्दिनबलान्विता ।

शीर्षोदया च मध्यांगा द्विपद्याम्यचरा च सा ।।

स सस्यदहना वैश्या चित्रवर्णा प्रभिञ्जनि ।

कुमारी तमसा युक्ता बालभावा बुधाधिपा ।।

पर्वत पर घूमने वाला, दिवाबली, शीर्षोदयी, मध्यम शरीर वाला, द्विपदी, दक्षिण में रहने वाला, अन्नसहित अग्नि हाथ में रखने वाला, वैश्य जाति, अनेक वर्ण वायु तत्व, कुमारी एवं तमोगुणी – ऐसा कन्या राशि का स्वरूप कहा गया है। इसका अधिपति बुध होता है।

तुला राशि स्वरूप –

शीर्षोदयी द्युवीर्याढयस्तुलः कृष्णो रजोगुणी ।

पश्चिमो भूचरो घाती शूद्रो मध्यतनुद्विपात् ।।

शीर्षोदयी, दिवाबली, कृष्ण वर्ण, रजोगुणी, पश्चिम में रहने वाला, भूमि में विचरण करने वाला, हिंसक, शूद्र जाति एवं मध्यम शरीर वाला – ऐसा तुला राशि का स्वरूप कहा गया है, इस राशि का स्वामी शुक्र होता है।

वृश्चिक राशि स्वरूप –

स्वल्पाङ्गो बहुपाद् ब्राह्मणो बिली ।

सौम्यस्थो दिनवीर्याढयः पिशङ्गो जलभूवहः ।।

रोमस्वाढयोऽतितीक्ष्णाग्रो बृश्चिकश्च कुजाधिपः ।

स्वल्प शरीर वाला, बहुपाद, विप्र जाति, क्षिद्र में रहने वाला, उत्तर दिशा में विचरण करने वाला, दिवाबली, पिशङ्ग वर्ण, जल तत्व, भूमि तत्व, अधिक रोमयुक्त, तीक्ष्ण अग्रिम भाग वाला एवं स्वामी मंगल – ऐसा वृश्चिक राशि का स्वरूप कहा गया है।

धनु राशि स्वरूप –

पृष्ठोदयी त्वथ धनुर्गुरूस्वामी च सात्विकः ।

पिंगलो निशिवीर्याढयः पावकः क्षत्रियो द्विपात् ।।

आदावन्ते चतुष्पादः समगात्रो धनुर्धरः ।

पूर्वस्थो वसुधाचारी तेजस्वी ब्रह्मणा कृतः ।।

पृष्ठोदयी, सत्वगुणी, पिङ्गल वर्ण, रात्रि में बली, अग्नि तत्व, क्षत्रिय, पूर्वार्द्ध(15 अंश) में द्विपाद, उत्तरार्द्ध (16 - 30 अंश) में चतुष्पाद, सम शरीर, धनुष धारण करने वाला, पूर्व दिशा में रहने वाला, भूमिचारी, तेजस्वी और गुरू स्वामी वाला धनुराशि होता है ।

मकर राशि स्वरूप –

मन्दाधिपस्तमी भौमी याम्येट् च निशि वीर्यवान् ।

पृष्ठोदयी वृहद्गात्रः कर्बूरो वनभूचरः ।।

आदौ चतुष्पदोऽन्ते तु विपदो जलगो मतः ।

तमोगुणी, भूतत्व, दक्षिण दिशा में रहने वाला, रात्रिबली, पृष्ठोदयी, दीर्घ शरीर, चित्र वर्ण, वन एवं भूचारी, पूर्वार्द्ध में चतुष्पाद, उत्तरार्द्ध में पैर से हीन, जलचर और स्वामी शनि – ऐसा मकर राशि का स्वरूप कहा गया है ।

कुम्भ राशि स्वरूप –

कुम्भः कुम्भी नरो बभ्रुर्वर्णो मध्यतनुर्द्विपात् ।

द्युवीर्यो जलमध्यस्थो वातशीर्षोदयी तमः ।

शूद्रः पश्चिमदेशस्य स्वामी दैवाकरिः स्मृतः ।।

घडा धारण किया हुआ पुरूष, भूरा वर्ण, मध्यम शरीर वाला, पैर से हीन, दिवाबली, जलचारी, वायु तत्व, शीर्षोदयी, तमोगुणी, शूद्र जाति, पश्चिम दिशाधिप और स्वामी शनि – ऐसा कुम्भ राशि का स्वरूप कहा गया है ।

मीन राशि स्वरूप –

जली सत्वगुणाढयश्च स्वस्थो जलचरो द्विजः ।।

अपदो मध्यदेही च सौम्यस्थो ह्युभयोदयी ।

सुराचार्यधिपश्चेति राशीनां गदिता गुणाः ।

त्रिंशद्भागात्मकानां च स्थूलसूक्ष्मफलाय च ।।

मुख – पुच्छ मिले हुये दो मछली, दिन में बली, जलतत्व, सत्व गुणयुक्त, स्वस्थ, जलचारी, विप्र जाति, पादहीन, मध्यम शरीर, उत्तर दिशाधिप, उभयोदयी एवं स्वामी गुरू – ऐसा मीन राशि का स्वरूपा कहा गया है । इस प्रकार 30 अंशात्मक राशियों का स्वरूप स्थूल तथा सूक्ष्म फलादेश हेतु कहा गया है ।

होरालग्न साधन –

तथा सार्ध द्विघटिकामितादर्कोदयाद् द्विज ।

प्रयाति लग्नं तन्नाम होरालग्नं प्रचक्षते ।।
इष्टघट्यादिकं द्विघ्न पञ्चाप्तं भादिकं च यत् ।
योज्यमौदयिके भानौ होरालग्नं स्फुटं हि तत् ।।

सूर्योदय से जन्मेष्ट काल तक प्रति ढाई घटी में एक – एक होरालग्न का प्रमाण होता है, अतएव अपने इष्टकाल कोद दो से गुणाकर 5 का भाग देने पर जो राश्यादि लब्धि हो, उसे उदयकालिक सूर्य में योग कर देने से स्पष्ट होरालग्न होता है।

उदाहरण – जन्मेष्ट काल 5/25 को 2 से गुणा किया तो 10/50 हुआ, इसमें 5 का भाग दिया तो 2/10/0/0 राश्यादि हुये, इसे उदयकालिक सूर्य 3/20/4/25 में योग किया तो 6/0/4/25 हुआ और यही होरालग्न हुआ।

घटीलग्न साधन –

कथयामि घटीलग्नं श्रृणु त्वं द्विजसत्तम् ।
सूर्योदयात् समारभ्य जन्मकालावधि क्रमात् ।।
एकैकघटिकामानात् लग्नं यद्याति भादिकम् ।
तदेव घटीतुल्या: कथितं नारदादिभि: ।
राशयस्तु घटीतुल्या: पलार्थप्रमितांशका: ।
यौज्यमौदयिके भानौ घटीलग्नं स्फुटं हि तत् ।
क्रमादेषां च लग्नानां भावकोष्ठं पृथग् लिखेत् ।
ये ग्रहा यत्र भे तत्र स्थाप्या राशिलग्नवत् ।।

सूर्योदय से एक – एक घटी के प्रमाण से जो लग्न व्यतीत होता है, उसे घटीलग्न कहा जाता है। अतएव इष्टघटी को राशि एवं इष्ट पल को 2 का भाग देकर अंशादि जानना चाहिये , पूर्वोक्त राशि और अंशादि को उदयकालिक स्पष्ट सूर्य में जोडने से घटीलग्न होता है। भाव, होरा, घटी – इन तीनो लग्नों को पृथक् – पृथक् कुण्डली बनाकर जिस – जिस राशि में जो जो ग्रह हों तत् तत् राशि में ग्रहन्यास कर फल कहना चाहिये।

उदाहरण – जन्मेष्ट काल 5। 25, घटी रा. 5 एवं पल 25। 2 से भाग दिया तो 12।30।0 अंशादि हुआ अत: राश्यादि 5।12।30।0 हुये, इसे उदयकालिक सूर्य 3।20।4।25 में युत किया तो 9।2।34।25 हुआ यह घटी लग्न हुआ।

उक्ता लग्नादि भावानां दीप्तांशास्तिथिसम्मिता: ।
तस्माद् भावात्पुर: पृष्ठे तिथ्यंशैस्तत्फलं स्मृतम् ।
लग्नात्तिथ्यंशत: पूर्वं भावारम्भ: प्रजायते ।
तिथ्यंशै: परतस्तस्य पूर्ति: सन्धी च तौ स्मृतौ ।

भावारम्भो फलारम्भो पूर्णं भावसमे ग्रहे।

फलं शून्यं च भावान्ते ज्ञेयं मध्येऽनुपातत: ।।

पूर्वोक्त लग्नादि भावों के 15 -15 अंश दीप्तांश होते हैं, अतएव भावांश से 15 अंश पूर्व से ही भावारम्भ होता है और भावांश से 15 अंश अनन्तर में भाव की पूर्ति होती है। भावारम्भ से फलारम्भ और भावान्त में फलान्त हो जाता है। भावांश तुल्य ग्रहों के अंश हो तो पूर्ण फल और भाव के अन्त में शून्य फल हो जाता है। अत: भाव और सन्धि के मध्य में ग्रह हो तो अनुपात से फलादेश करना चाहिये।

3.4 भाव फल

तनु भाव फल –

सपापो देहपोऽष्टारिव्ययगो देहसौख्यहृत्।

केन्द्रे कोणे स्थितोऽङ्गेश: सदा देहसुखं दिशेत्।।

लग्नपोऽस्तङ्गतो नीचे शत्रुभे रोगकृद् भवेत्।

शुभा: केन्द्रत्रिकोणस्था: सर्वरोगहरा: स्मृता: ।।

लग्नेश पापग्रह से युक्त हो अथवा लग्न से लग्नेश 6,8,12 भाव में हो तो शारीरिक सौख्य नहीं होता। यदि लग्नेश केन्द्र त्रिकोण में हो तो सदा शरीरसुख होता है। यदि लग्नेश अस्त, नीच, शत्रुगृह में हो तो रोगकारक होता है। शुभ ग्रह केन्द्र त्रिकोण में हो तो सभी रोगों को नष्ट कर देते है।

धन भावफल –

धनेशो धनभावस्थ: केन्द्रकोणगतोऽपि वा।

धनवृद्धिकरो ज्ञेयस्त्रिकस्थो धनहानिकृत्।।

धनदश्च धने सौम्य: पापो धनविनाशकृत्।

धनाधिपो गुरूर्यस्य धनभावगतो भवेत्।।

भौमेन सहितो वाऽपि धनवान स नरो भवेत्।

धनेशे लाभभावस्थे लाभेशे वा धनं गते।।

तावुभौ केन्द्रकोणस्थौ धनवान स नरो भवेत्।

धनेशे केन्द्रराशिस्थे लाभेशे तत्रिकोणगे।।

गुरूशुक्रयुते दृष्टे धनलाभमुदीरयेत्।

धनेश यदि धनभाव में ही हो अथवा केन्द्र त्रिकोण में हो तो धन की वृद्धि होती है और धनेश यदि त्रिक (6,8,12) स्थान में हो तो धन की हानि होती है। धनस्थान में शुभ ग्रह धन देने वाले और पाप

ग्रह धननाशककारक होते है। जिसका धनेश गुरू होकर धनभाव में ही स्थित हो या भौम के साथ हो तो वह मनुष्य धनवान होता है। धनेश लाभस्थान में हो अथवा लाभेश धनस्थान में हो अथवा लाभेश और धनेश केन्द्र त्रिकोण में हो तो जातक धनाढय होता है। धनेश केन्द्र में हो और त्रिकोण में लाभेश हो या गुरू – शुक्र से युक्त अथवा दृष्ट हो तो धनलाभ होता है।

सहज भाव फल –

सहजे सौम्ययुग्दृष्टे भ्रातृमान् विक्रमी नरः।
स भौमो भ्रातृभावेशो भ्रातृभावं प्रपश्यति॥
भ्रातृक्षेत्रगतो वाऽपि भ्रातृासौख्यं विनिर्दिशेत्॥

तृतीयेश शुभग्रह से युक्त या दृष्ट हो तो जातक भाइयों से युक्त और पराक्रमों होता है। तृतीयेश तथा भौम भ्रातृभाव को देखते हों या भ्रातृभाव में ही स्थित हों तो जातक को सहोदर बन्धुओं का सौख्य उत्तम होता है !

सुखभावफल -

सुखेशे सुखभावस्थे लग्नेशे तद्गतेऽपि वा।
शुभदृष्टे च जातस्य पूर्णं गृहसुखं वदेत्॥
स्वगेहे स्वांशके स्वोच्चे सुखस्थानाधिपो यदि।
भूमियानगृहादीनां सुखं वाद्यभवं तथा॥
कर्माधिपेन संयुक्ते केन्द्रे कोणे गृहाधिपे।
विचित्रसौधप्राकारैर्मण्डितं तद्गृहं वदेत्॥
बन्धुस्थानश्वरे सौम्ये शुभग्रहयुतेक्षिते।
शशिजे लग्नसंयुक्ते बन्धुपूज्यो भवेन्नरः॥

चतुर्थेश चतुर्थ भाव में हो, लग्नेश भी सुखभाव में ही हो और शुभ ग्रह द्वारा दृष्ट हो तो जातक को गृहसम्बन्धी सुख उत्तम होता है। चतुर्थ स्थानाधिप स्वगृह, स्वनवमांश, अपने उच्च राशि में स्थित हो तो जातक को भूमि, सवारी, गृहादि सुख से पूर्ण जानना चाहिए और वाद्य – गान आदि से भी उसे सुख प्राप्त होता है। चतुर्थेश दशमेश के साथ होकर केन्द्र त्रिकोण में स्थित हो तो जातक का विशिष्ट श्रेणी का मकान होता है। चतुर्थेश शुभ ग्रह हो अथवा शुभ ग्रह से युत हो या दृष्ट हो, लग्न में बुध हो तो जातक बन्धुओं द्वारा पूज्य होता है।

पंचम भावफल -

लग्नपे सुतभावस्थे सुतपे च सुते स्थिते॥
केन्द्रत्रिकोणसंस्थे वा पूर्णं पुत्रसुखं वदेत्।
षष्ठाष्टमव्ययस्थे तु सुताधीशे त्वपुत्रता॥
सुतेशेऽस्तं गते वाऽपि पापाक्रान्ते च निर्बले।

तदा न जायते पुत्रो जातो वा म्रियते ध्रुवम् ।।

षष्ठस्थाने सुताधीशे लग्नेशे कुजसंयुते ।

म्रियते प्रथमापत्यं काकवन्ध्या च गेहिनी ।।

सुताधीशो हि नीचस्थो व्ययषष्ठाष्टमस्थितः ।

काकवन्ध्या भवेन्नारी सुते केतुबुधौ यदि ।।

सुतेशो नीचगो यत्र सुतस्थानं न पश्यति ।

तत्र सौरिबुधौ स्यातां काकवन्ध्यात्वमाप्नुयात् ।।

भाग्येशो मूर्तिवर्ती चेत् सुतेशो नीचगो यदि ।

सुते केतुबुधौ स्यातां सुतं कष्टाद् विनिर्दिशेत् ।।

षष्ठाष्टमव्ययस्थो वा नीचो वा शत्रुराशिगः ।

सुतेशश्च सुते तस्य कष्टात् पुत्रं विनिर्दिशेत् ।।

लग्नेश या पंचमेश पंचम भाव में स्थित हों अथवा केन्द्र त्रिकोण में बैठे हों तो जातक को पूर्ण पुत्रसुख होता है। यदि पंचमेश 6,8,12 भाव में हो तो जातक पुत्ररहित होता है। पंचमेश अस्त हो या निर्बल होकर पापाक्रान्त हो तो जातक को पुत्र नहीं होता या पुत्र होकर मर जाता है। पंचमेश षष्ठ स्थान में हो और लग्नेश मंगल से युक्त हो तो जातक को एक पुत्र होकर मर जाता है, और उसकी स्त्री फिर काकवन्ध्या हो जाती है। पंचमेश अपने नीच राशि का होकर 6,8,12 में स्थित हो तो उस जातक की स्त्री काकवन्ध्या होती है अथवा पुत्रस्थान में बुध और केतु हो तो उसकी स्त्री काकवन्ध्या होती है या पंचमेश अपने नीच में होकर पुत्रस्थान को नहीं देखता हो और और सुतभाव में शनि – बुध हो तो भी उसकी स्त्री काकवन्ध्या होती है। लग्न में नवमेश हो और पुत्रेश नीच में हो, पंचम भाव में केतु – बुध हों तो अत्यधिक कष्ट (धर्माचरण) से पुत्र की प्राप्ति होती है। पुत्रेश 6,8,12 भाव में हो या शत्रुराशि का हो या नीच राशि में होकर पुत्रस्थान में स्थित हो तो भी जातक को प्रयत्न से पुत्र प्राप्त होता है।

षष्ठ भावफल -

षष्ठाधिपः स्वगेहे वा देहे वाऽप्यष्टमे स्थितः ।

तदा व्रणो भवेद्देहे षष्ठराशिसमाश्रिते ।।

एवं पित्रादिभावेशास्तत्कारकसंयुताः ।

व्रणाधिपयुताश्चापि षष्ठाष्टमयुता यदि ।।

तेषामपि व्रणं वाच्यमादित्येन शिरोव्रणम् ।

इन्दुना च मुखे कण्ठे भौमेन ज्ञेन नाभिषु ।।

गुरूणा नासिकायां च भृगुणा नयने पदे ।

शशिना राहुणा कुक्षौ केतुना च तथा भवेत् ।

लग्नाधिपः कुजक्षेत्रे बुधभे यदि संस्थितः ।

यत्र कुत्र स्थितो ज्ञेन वीक्षितो मुखरूक्प्रदः ।।

षष्ठेश स्वगृह में या लग्न में या अष्टम भाव में स्थित हो तो जातक के शरीर में व्रण होते है। षष्ठ भाव में जो राशि हो, उसका जो अंग हो, उस अंग में विशेष व्रण होते है। इसी प्रकार पिता आदि भावों के अधिपति षष्ठेश से युक्त होकर 6,8 भावों से युक्त हो तो पिता आदि अपने सम्बन्धियों को व्रण कहना चाहिए। यदि सूर्य षष्ठ स्थान के अधिपति होकर उक्त स्थान में स्थित हो तो मष्तक में, चन्द्रमा से मुख में, भौम से कण्ठ में, बुध से नाभि में, गुरू से नासिका में, शुक्र से नयन में, शनि से पैर में एवं राहु अथवा केतु से कुक्षि (पेट) में व्रण कहना चाहिए। लग्नेश भौम (1,8)के क्षेत्र अथवा बुध के क्षेत्र 3,6 में से किसी भाव में स्थित हो और बुध से दृष्ट हो तो जातक के मुख में व्रण होते है।

कुष्ठरोग कारक योग -

लग्नाधिपौ कुजबुधौ चन्द्रेण यदि संयुतौ ।

राहुणा शनिना सार्द्धं कुष्ठं तत्र विनिर्दिशेत् ।।

लग्नाधिपं विना लग्ने स्थितश्चेत्तमसा शशी ।

श्वेतकुष्ठं तदा कृष्णकुष्ठं च शनिना सह ।।

कुजेन रक्तकुष्ठं स्यात्तदेवं विचारयेत् ।।

लग्नेश मंगल या बुध हो और चन्द्र, राहु या शनि से युक्त हो तो जातक को कुष्ठ रोग का प्रकोप रहता है। लग्नेश न हो और चन्द्र लग्न में राहु के साथ स्थित हों तो श्वेत कुष्ठ का योग होता है और शनि के साथ स्थित हो तो कृष्ण कुष्ठ एवं भौम के साथ हो तो रक्त कुष्ठकारक योग होता है।

सप्तम भाव फल –

जायाधीशः शुभैर्युक्तो दृष्टो वा बलसंयुतः ।

तदा जातो धनी मानी सुखसौभाग्यसंयुतः ।।

नीचे शत्रुगृहेऽस्ते वा निर्बले च कलत्रपे ।

तस्यापि रोगिणी भार्या बहुभार्यो नरो भवेत् ।।

मन्दभे शुक्रगेहे वा जायाधीशे शुभेक्षिते ।

स्वोच्चगे तु विशेषेण बहुभार्यो नरो भवेत् ।।

सप्तमेश शुभग्रह से युक्त् हो या दृष्ट हो और बलयुक्त हो तो जातक धनी, मानी एवं सुख और सौभाग्य से परिपूर्ण होता है। यदि सप्तमेश नीच का हो अथवा शत्रुगृह में हो या अस्त हो और निर्बल हो तो उस जातक की पत्नी रोगिणी होती है और उसे अधिक स्त्रियॅा होती हैं। सप्तमेश यदि शनि 10, 11 की राशि में हो अथवा शुक्र गृह 2,7 में हो और उस पर शुभ ग्रह की दृष्टि हो तो वह

जातक अधिक भार्या वाला होता है, विशेष रूप से सप्तमेश अपने उच्च, गृह, स्ववर्ग में हो तो अधिक स्त्री वाला होता है।

अष्टम भावफल –

आयु: स्थानाधिप: केन्द्रे दीर्घमायु: प्रयच्छति ।

आयु: स्थानाधिप: पापै: सह तत्रैव संस्थित: ।।

करोत्यल्पायुषं जातं लग्नेशोऽप्यत्र संस्थित: ।

एवं हि शनिना चिन्ता कार्या तर्कैर्विचक्षणै: ।।

कर्माधिपेन च तथा चिन्तनं कार्यमायुष: ।

आयु:स्थानाधिप केन्द्र में बैठा हो तो जातक को दीर्घायु प्रदान करता है। अष्टमेश पाप ग्रह के साथ रहकर अष्टम भाव में ही स्थित हो तो जातक अल्पायु होता है और लग्नेश अष्टम में हो तो भी अल्पायु होता है। जिस प्रकार अष्टमेश से आयु का विचार किया जाता है, उसी प्रकार शनि तथा दशमेश से भी आयु का विचार करना चाहिए।

अधिकायुकारकयोग –

लग्नेशे स्वोच्चराशिस्थे चन्द्रे लाभसमन्विते।

रन्ध्रस्थानगते जीवे दीर्घमायुर्न संशय: ।।

लग्नेशोऽतिबलो दृष्ट: केन्द्रसंस्थै: शुभग्रहै: ।

धनै: सर्वगुणै: सार्धं दीर्घमायु: प्रयच्छति ।।

लग्नेश अपने उच्चराशि में, चन्द्र लाभ स्थान में बैठा हो और अष्टम स्थान में गुरू स्थित हो तो दीर्घायु योग होता है, इसमें सन्देह नहीं है। लग्नेश अत्यन्त बलवान हो एवं केन्द्र स्थित शुभ ग्रहों द्वारा देखा जाता हो तो धन और समस्त गुणों से युक्त दीर्घायुकारक योग होता है।

नवमभाव फल –

सबलो भाग्यपे भाग्ये जातो भाग्ययुतो भवेत्।

भाग्यस्थानगते जीवे तदीशे केन्द्रसंस्थिते ।।

लग्नेशे बलसंयुक्ते बहुभाग्ययुतो भवेत्।

भाग्येशे बलसंयुक्ते भाग्ये भृगुसमन्विते ।।

लग्नात् केन्द्रगते जीवे पिता भाग्यसमन्वित: ।

भाग्यस्थानाद् द्वितीये वा सुखे भौमसमन्विते ।।

भाग्येशे नीचराशिस्थे पिता निर्धन एव हि।

भाग्येशे परमोच्चस्थे भाग्यांशे जीवसंयुते ।।

लग्नाच्चतुष्टये शुक्रे तत्पिता दीर्घजीवन: ।

भाग्येशे केन्द्रभावस्थे गुरूणा च निरीक्षिते ।।

तत्पिता वाहनैर्युक्तो राजा वा तत्समो भवेत् ।

भाग्येशे कर्मभावस्थे कर्मेशे भाग्यराशिगे ।।

शुभदृष्टे धनाढयश्च कीर्तिमांस्तत्पिता भवेत् ।

भाग्येश बलयुक्त होकर भाग्यस्थान में ही स्थित हो तो वह जातक परम भाग्यशाली होता है । भाग्यस्थान में गुरू हो और भाग्येश केन्द्र में स्थित हो तथा लग्नेश बलयुक्त हो तो वह जातक अधिक भाग्यवान होता है । बलवान भाग्येश शुक्र के साथ भाग्यस्थान में हो और लग्न से केन्द्र में गुरू बैठे हों तो उस जातक का पिता भाग्यशाली होता है । भाग्यस्थान से द्वितीय अथवा चतुर्थ भाव में भौम हो और भाग्येश अपने नीच राशि का हो तो उस जातक का पिता निर्धन होता है । भाग्येश अपने परमोच्च राशि में हो और भाग्यभाव के नवमांश में गुरू हो तथा लग्न से चतुर्थ में शुक्र हो तो उस जातक का पिता दीर्घायु होता है । भाग्येश केन्द्रभाव में स्थित हो और गुरू के द्वारा दृष्ट हो तो उस जातक का पिता वाहनों से युक्त, राजा या राजा के सदृश होता है । भाग्येश कर्मभाव में हो और कर्मेश भाग्यराशि में स्थित हो एवं शुभ ग्रह द्वारा अवलोकित हो तो उस जातक को पिता धनी एवं यशस्वी होता है ।

दशम भावफल –

कर्मेशे शुभसंयुक्ते शुभस्थानगते तथा ।

राजद्वारे च वाणिज्ये सदा लाभोऽन्यथाऽन्यथा ।।

दशमे पापसंयुक्ते लाभे पापसमन्विते ।

दुष्कृतिं लभते मर्त्यः स्वजनानां विदूषकः ।।

कर्मेशे नाशराशिस्थे राहुणा संयुते तथा ।

जनद्वेषी महामूर्खो दुष्कृतिं लभते नरः ।।

कर्मशे द्यनराशिस्थे मन्दभौमसमन्विते ।

द्युनेशे पापसंयुक्ते शिश्नोदरपरायणः ।।

कर्मेश शुभग्रहों से युक्त हो और शुभ स्थान में गया हो तो जातक को राजा के दरबार से तथा व्यापार से सदा ही लाभ होता है । अन्यथा अर्थात् दशम पापग्रह युक्त हो और लाभभाव में भी पापग्रह हो तो जातक को लाभ नहीं होता, साथ ही वह जातक दुष्कर्म करने वाला एवं अपने परिजन से वैर करने वाला होता है । दशमेश राहु के साथ होकर अष्टम भाव में बैठा हो तो जातक कुकर्मकारक, स्वबान्धव से द्वेष करने वाला और महामूर्ख होता है । कर्मेश सप्तम भाव में स्थित हो तो वह जातक कुकर्म करके अपना उदर – पोषण करने वाला होता है ।

एकादश भावफल -

लाभाधिपो यदा लाभे तिष्ठेत् केन्द्रत्रिकोणयो: ।
बहुलाभं तदा कुर्यादुच्चे सूर्यांशगोऽपि वा ।।
लाभेशे धनराशिस्थे धनेशे केन्द्रसंस्थिते ।
गुरूणा सहिते भावे गुरूलाभं विनिर्दिशेत् ।।
लाभेशे विक्रमे भावे शुभग्रहसमन्विते ।
षट्त्रिंशे वत्सरे प्राप्ते सहस्रद्वयनिष्कभाक् ।।
केन्द्रत्रिकोणगे लाभनाथे शुभसमन्विते ।
चत्वारिंशे तु सम्प्राप्ते सहस्रार्धसुनिष्कभाक् ।।
लाभस्थाने गुरूयुते धने चन्द्रसमन्विते ।
भाग्यस्थानगते शुक्रे षट्सहस्राधिपो भवेत् ।।

लाभेश लाभस्थान में हो या केन्द्र त्रिकोण में हो, अस्त होकर भी अपने उच्च राशि का हो तो अधिक लाभकारक होता है । लाभेश धनभाव में हो और धनेश गुरू के साथ केन्द्र में बैठा हो तो अतिशय लाभकारक होता है । लाभेश शुभ ग्रह के साथ तृतीय भाव में स्थित हो तो 36 वें वर्ष में उस जातक को 2 हजार निष्क प्राप्त होते है । लाभाधिपति केन्द्र त्रिकोण में शुभग्रह के साथ हो तो वह जातक 40 वें वर्ष में 500 निष्क का लाभ प्राप्त करता है । एकादश में गुरू एवं द्वितीय भाव में चन्द्र युत हों और भाग्यस्थान में शुक्र स्थित हो तो ऐसा जातक 6 हजार निष्क का अधिपति होता है ।

द्वादश भावफल -

व्ययेशे शुभसंयुक्ते स्वभे स्वोच्चगतेऽपि वा ।
व्यये च शुभसंयुक्ते शुभकार्ये व्ययस्तदा ।।
चन्द्रो व्ययाधिपो धर्मलाभमन्त्रेषु संस्थित: ।
स्वोच्चे स्वर्क्षे निजांशे वा लाभधर्मात्मजांशके ।।
दिव्यागारादिपर्यङ्को दिव्यगन्धैकभोगवान् ।
परार्ध्यरमणो दिव्यवस्त्रमाल्यादिभूषण: ।।
परार्ध्यसंयुतो विज्ञो दिनानि नयति प्रभु: ।

द्वादशेश शुभ ग्रह से युक्त हो अथवा अपने राशि या अपनी उच्च राशि का हो और व्यय भाव में भी शुभ ग्रह बैठे हों तो शुभ कार्य में व्यय होता है । चन्द्रमा व्ययाधिपति होकर नवम, एकादश या पंचम भाव में हो या अपने उच्च, स्वराशि या अपने नवमांश में हो या 5,9,11 भाव के नवमांश में हो तो ऐसा जातक सुन्दर भवन, शय्या एवं गन्धयुक्त वस्तुओं का भोग करने वाला होता है ।

एवं स्वशत्रु नीचांशेऽष्टमे वाऽष्टमे रिपौ ।

संस्थित: कुरूते जातं कान्तासुखविवर्जितम् ।।

व्ययाधिक्यपरिक्लान्तं दिव्यभोगनिराकृतम् ।

स हि केन्द्रत्रिकोणस्थ: स्वस्त्रियाऽलङ्कृत: स्वयम् ।।

यथा लग्नात् फलं चैतदात्मन: परिकीर्तितम् ।

एवं भ्रात्रादिभावेषु तत्तत्सर्वं विचारयेत् ।।

द्वादशेश अपनी शत्रुराशि में हो या स्वनीच राशि के नवमांश में हो या अष्टमस्थ हो या रिपुभाव में हो या उसके नवमांश में हो तो जातक सुख से हीन एवं अधिक व्ययकारक होने के कारण दु:खी रहता है । व्ययेश केन्द्र त्रिकोण में हो जातक समुचित व्ययकारक सुख से युक्त रहता है । जिस प्रकार स्वलग्न के द्वादश भाव से अपना व्ूयय सम्बन्धी फल कहा गया है, उसी प्रकार भ्रातृ, मातृ, पुत्र आदि स्थानों के द्वादश भाव से भ्रातृ, मातृ, पुत्रादि का व्ययसम्बन्धी फल भी समझ लेना चाहिये ।

3.5 सारांश: –

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि आकाशस्थ क्रान्तिवृत्त के 360^0 अंशों के 12 विभाग करने से 360/12 = 30 अंश के कोण का मान एक राशि का मान होता है । उन्हीं 12 विभागों को जातक शास्त्र में द्वादश भावों के नाम से जानते है । जन्मांग चक्र में इन्हीं 12 भावों से अलग- अलग तथ्यों का विचार फलादेशादि कर्म में किया जाता है । कुण्डली निर्माण प्रक्रिया में भी द्वादश भाव साधन किया जाता है । फलादेशादि कार्य के लिये भावों का ज्ञान होना परमावश्यक है । ज्योतिष शास्त्र के जातक स्कन्ध में भाव विमर्श एक अत्यन्त महत्वपूर्ण विषय है, जिस पर समस्त जातक स्कन्ध निर्भर है । भाव के ज्ञानाभाव में हम जातक स्कन्धोक्त समस्त फलादेशादि कर्त्तव्य करने में सक्षम नहीं हो सकते । अत: राशि, नक्षत्र ज्ञान के साथ – साथ भावों का ज्ञान भी परमावश्यक है । इस अध्याय में आप भाव की परिभाषा, उसका महत्व एवं उससे की जानेवाली समस्त फलादेशादि का कर्त्तव्य को समझ सकेंगे ।

3.6 पारिभाषिक शब्दावली

होरा – फलित शास्त्र

कण्टक – 1,4,7,10

पणफर – 2,5,8,11

आपोक्लिम – 3,6,9,12

शीर्षोदयी – 3,5,6,7,11 राशियॉ

पृष्ठोदयी – 1,2,4,9,10 राशियॉ

3.7 बोधप्रश्नों के उत्तर

1. 12

2. 30^0

3. चर

4. 2,5,8,11

5. भाव

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वृहज्जातकम् - आचार्य वराहमिहिर

वृहतपराशरहोराशास्त्र - महर्षि पराशर

लघुजातकम् – आचार्य वराहमिहिर

होराशास्त्रम् – वराहमिहिर

सर्वस्व ज्योतिष – बी0एल0 ठाकुर

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. भाव से क्या तात्पर्य है। द्वादश भावों की सविस्तार उल्लेख कीजिए।

2. द्वादश भावों से फलादेशादि कर्त्तव्य का विस्तृत विवेचन कीजिए।

इकाई – 4 कारक विमर्श

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 कारक परिचय

4.3.1 कारक के अन्य स्वरूप

बोध प्रश्न

4.3.2 कारक एवं कारकांश फल

4.4 सारांशः

4.5 पारिभाषिक शब्दावली

4.6 बोधप्रश्नों के उत्तर

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना -

प्रस्तुत इकाई प्रथम खण्ड के इकाई चार '**कारक विमर्श**' शीर्षक से संबंधित है। कारक का सम्बन्ध भावों, एवं ग्रहों से होता है। कारक विमर्श ज्योतिष शास्त्र के जातक स्कन्ध का एक महत्वपूर्ण अंग है।

जिस भाव से जिन – जिन बातों का विचार किया जाता है वह वस्तु उन भावों का **कारकत्व** कहलाता है।

इससे पूर्व की इकाईयों में आपने लग्न, राशि, नक्षत्र, भावादि क्या हैं, इस विषय से परिचित हो चुके है। यहॉ हम इस इकाई में कारक विमर्श सम्बन्धित विषयों का अध्ययन विस्तार पूर्वक करेंगे।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

1. कारक को परिभाषित करने में समर्थ हो सकेंगे।
2. कारक शास्त्र के महत्त्व को समझा सकेंगे।
3. कारक शास्त्र के सिद्धान्त के निरूपण करने में समर्थ होंगे।
4. कारक शास्त्र का स्वरूप वर्णन करने में समर्थ होंगे।
5. कारक शास्त्र के सम्बन्ध को निरूपित करने में समर्थ होंगे।

4.3 कारक परिचय -

अथाऽहं सम्प्रवक्ष्यामि ग्रहानात्मादिकारकान्।
सप्त रव्यादिशन्यन्तान् राह्वतान वाऽष्टसंख्यकान्।।
अंशै: समौ ग्रहौ द्वौ चेद् राह्वन्तान् चिन्तयेत्तदा।
सप्तैव कारकानेवं केचिदष्टौ प्रचक्षते।।
आत्मा सूर्यादिखेटानां मध्ये ह्यंशाधिको ग्रह:।
अंशसाम्ये कलाधिक्यात् तत्साम्ये विकलाधिक:।।
बुधै राशिकलाधिक्याद् ग्राह्यो नैवात्मकारक:।
अंशाधिक: कारक: स्यादल्पभागोऽन्त्यकारक:।।
मध्यांशो मध्यखेट: स्यादुपखेट: स एव हि।
विलोमगमनाद्राहोरंशा: शोध्या: खवह्नित:।।
अंशक्रमादधोऽधस्थाश्चाराख्या: कारका इति।

आत्माख्यकारकस्तेषु प्रधानं कथ्यते द्विज ।।

स एव जातकाधीशो विज्ञेयो द्विजसत्तम ।

यथा भूमौ प्रसिद्धोऽस्ति नराणां क्षितिपालक: ।।

सर्ववार्ताधिकारी च बन्धकृन्मोक्षकृत्तथा ।

रवि से शनिपर्यन्त 7 ग्रहों के कारक का विवरण इस प्रकार है - कुछ लोग राहुपर्यन्त 8 ग्रह कारक मानते है, तो कुछ लोग कहते हैं कि दो ग्रहों के अंशादि तुल्य होने पर राहु को लेना चाहिए। सूर्यादि ग्रहों में राशि छोडकर सर्वाधिक अंश जिस ग्रह का होगा वही आत्मकारक ग्रह होगा । दो ग्रहों में अंश तुल्य हो तो अधिक कला वाले को आत्मकारक मानना चाहिए और कला में समता हो तो अधिक विकला वाले को आदिकारक मानना चाहिए । इसी प्रकार सर्वाल्प अंश वाला ग्रह अन्त्यकारक और मध्य अंश वाला ग्रह मध्यकारक कहा जाता है, इसी को उपखेट भी कहा जाता है । राहु के कारक के विचार में उसको 30 अंश में घ्इाटाकर विचार करना चाहिए, क्योंकि राहु सदैव वक्र गति से चलता है। इस प्रकार से कारकों को जानना चाहिए। उन कारकों में आत्मकारक प्रधान होता है और वही जातक का अधिपति होता है। जैसे राजा मनुष्यों के सभी विषयों का अधिपति होता है, उसी प्रकार आत्मकारक ग्रह भी अपने स्वभाव के अनुरूप जातक को फल प्रदान करते है। जिस ग्रह के सबसे अधिक अंश हों वह आत्मकारक, उससे कम अंश वाला अमात्यकारक, उससे कम अंशों वाला भ्रातृकारक, उससे कम अंशों वाला मातृकारक, उससे कम अंशों वाला पुत्रकारक, उससे कम अंशों वाला ज्ञातिकारक व सबसे कम अंशों वाला स्त्रीकारक होता है। यह मत महर्षि जैमिनी के द्वारा प्रतिपादित है।

यदि दो ग्रहों के अंश समान हों तो राहु को सम्मिलित किया जाता है। यदि तीन ग्रहों के अंश समान हों तो रिक्त स्थानों की पूर्ति पूर्वोक्त स्थिर कारकों में से करनी चाहिए। आत्मकारक सर्वतोभावेन व्यक्ति पर अपना प्रभुत्व रखता है

4.3.1 कारक के अन्य स्वरूप –

आत्मकारकभागेभ्यो न्यूनांशोऽमात्यकारक: ।

तस्मान्नयूनांशको भ्राता तन्नयूनो मातृसंज्ञक: ।।

तन्न्यूनांश: पिता तस्मादल्पांश: पुत्रकारक: ।

पुत्रान्न्यूनांशको ज्ञातिर्ज्ञातेर्न्यूनांशको हि य: ।।

स दारकारको ज्ञेयो निर्विशङ्कं द्विजोत्तम ।

चराख्यकारका एते ब्राह्मणा कथिता: पुरा ।।

मातृकारकमेवाऽन्ये वदन्ति सुतकारकम् ।
द्वौ ग्रहौ भागतुल्यौ चेज्जायेतां यस्य जन्मनि ।।
तदग्रकारकस्यैवं लोपो ज्ञेयो द्विजोत्तम।
स्थिरकारकवशात्तस्य फलं ज्ञेयं शुभाऽशुभम् ।।

चर कारक – आत्मकारक से स्वल्प अंश वाला ग्रहा अमात्य कारक होता है, इससे न्यूनांश भ्राता, उससे स्वल्पांश मातृ कारक, उससे स्वल्पांश पिता, उससे स्वल्पांश पुत्र, उससे कम अंश वाला जाति और उससे न्यूनांश पुरूष/स्त्रीकारक होता है। ये चर कारक ब्रह्मा जी के द्वारा प्रतिपादित किया गया है। कुछ लोग मातृकारक एवं पुत्रकारक को एक ही मानते है। यदि दो ग्रहों के अंशादि तुल्य हों तो वे दोनों से एक ही कारक मानते हैं और उससे अग्रिम कारक का लोप हो जाता है। ऐसी स्थिति में उस के फलाफल का विचार स्थिर कारक से करना चाहिये।

स्थिर कारक – रवि शुक्र में जो बली हो, वह पितृकारक होता है एवं चन्द्र – भौम में जो बली हो, वह मातृकारक होता है। भौम से बहन, साला, छोटे भाई तथा माता का भी विचार करना चाहिए। बुध से चाची, मौसी, मामा, बान्धव, आदि का विचार करना चाहिए। गुरू से पितामह, शुक्र से स्वामी और शनि से पुत्रों का विचार किया जाता है। ग्रहान्त में रहने वाला केतु से स्त्री, माता, पिता, सास, ससुर, मातामह, मातामही आदि का विचार करना चाहिए। ये सभी स्थिर कारक होते है।

भाववशात् ग्रहों के कारक - सूर्य से नवम भाव पिता, चन्द्र से चतुर्थ भाव माता, भौम से तृतीय भाव भाई, बुध से षष्ठ भाव मातुल , गुरू से पंचम भाव पुत्र, शुक्र से सप्तम भाव स्त्री और शनि से अष्टम भाव पिता की मृत्यु इस प्रकार शुभाशुभ फलादेश जानना चाहिये।

योगकारक – जातक के जन्मकालिक स्थितिवश अनेक फल होते हैं, जैसे ग्रह अपनी राशि का हो या अपने उच्च का हो अपने मित्र राशि का हो या अपने मूल त्रिकोण का हो और केन्द्रगत हो तो वे ग्रह शुभकारक होते हैं। लग्न, चतुर्थ, सप्तम और दशम भाव में अपने उच्चादि शुभ स्थान में यदि ग्रह स्थित हों तो वे योगकारक होते हैं। दशमस्थ ग्रह विशेष योगकारक होते हैं। लग्न से केन्द्रस्थ होना ही शुभ फलदायक नहीं है, अपितु ग्रह अपने – अपने उच्च स्वभवनादि में होकर किसी भाव में भी आपस में केन्द्रस्थ हों तो भी योगकारक माने जाते हैं। जिस जातक के जन्म समय में इस प्रकार के योगकारक ग्रह हों तो वह जातक नीच वंश में उत्पन्न होकर भी राजा के तुल्य धनवान और सुखी होता है एवं राजकुल में उत्पन्न होकर भी राजा के तुल्य धनवान और सुखी होता है। इसी प्रकार योगकारक ग्रह तथा वंश के अनुसार अनुपात से शुभाशुभ फल का आदेश करना चाहिए।

भाव कारक – जातक का जो जन्मलग्न हो वह आत्मकारक होता है। धनभाव को स्त्रीकारक भाव जानना चाहिए, एकादश ज्येष्ठ भाई का कारक होता है, तृतीय भाव कनिष्ठ भाई का और पंचम पुत्रभाव का कारक होता है। पुत्रस्थान में जो ग्रह निष्ठ हो वह भी पुत्रकारक होता है। सप्तम भाव से

भी पत्नीकारक भाव जानना चाहिए।

लग्नादि भावों के कारक ग्रह – सूर्य लग्नभाव का कारक, गुरू धनभाव का कारक एवं तृतीयभाव मंगलकारक होता है। इसी प्रकार चन्द्र, गुरू, मंगल, शुक्र, शनि, गुरू, बुध, गुरू, शनि – ये सभी ग्रह क्रम से चतुर्थ भाव से द्वादश भावपर्यन्त कारक ग्रह होते हैं।

भावों का विशेष शुभाशुभत्व – लग्नादि द्वादश भाव स्पष्ट में 11,3,8,6,2,12 भाव क्रूर संज्ञक होते हैं। इनके सम्मिश्रण से जो भाव बने वह जिस भाव में पडे उस भाव की हानि होती है। केन्द्र 1,4,7,10, कोण 5,8 ये भाव भद्र हैं यानी शुभ हैं, इनके योग से जो भाव बने वह जिस भाव में पड़े वह अशुभ होने पर भी शुभकारक होता है।

ग्रहों का कारकत्व – फलादेशादि कर्म में ग्रहों से अनेक विचार किये जाते है, ग्रह सदैव नित्य रूप से किसी पदार्थ विशेष का व भाव विशेष का प्रतिनिधित्व करते हैं। यह स्थिति सभी कुण्डलियों में सदा समान ही रहती है। अत: इसे ग्रहों का स्थिर कारकत्व कहते है।

ग्रहों का विस्तृत कारकत्व –

1. **सूर्य** – आत्मा, शक्ति, तीक्ष्णता, बल, प्रभाव, गर्मी, अग्नितत्व, धैर्य, राजाश्रय, कटुता , आक्रामकता, वृद्धावस्था, पशुधन, भूमि, पिता, अभिरूचि, ज्ञान, हड्डी, प्रताप, पाचन शक्ति, उत्साह, वन प्रदेश, ऑख, वनभ्रमण, राजा, यात्रा, व्यवहार, पित्त, नेत्ररोग, शरीर, लकडी, मन की पवित्रता, शासन, रोगनाश, सौराष्ट्र, देश, सिर के रोग, गंजापन, लाल कपडा, पत्थर, प्रदर्शन की भावना, नदी का किनारा, मूॅग, लाल चन्दन, कॉटेदार झाडिया, उन, पर्वतीय प्रदेश, सोना, तॉबा, शस्त्र प्रयोग, विषदान, दवाई, समुद्र पार की यात्राएॅं, समस्याओं का समाधान, गूढ मन्त्रणा, आदि का कारक है।
2. **चन्द्रमा** - कविता, फूल, खाने के पदार्थ, मणि, चॉदी, शंख, मोती, आदि समुद्रोत्पन्न पदार्थ, नमकीन पानी, वस्त्राभूषण, स्त्री, घी, तेल, तिल, नींद, बुद्धि, रोग, आलस्य, कफ, प्लीहा, मनोभाव, हृदय, पाप – पुण्य, खटाई , सुख , जलीय पदार्थ, चॉदी, गन्ना, गेहूॅं , सर्दी से बुखार, यात्रा, कुऑं आदि स्थान, टी.बी. , सफेद रंग, बेल्ट, तगडी, कॉसा, नमक, मन, मनोबल, शरद ऋतु, मुहूर्त्त, मुखशोभा, पेट, शहद, हॅंसी – मजाक, परिहास कुशलता, तेज चाल, चंचलता, दही, यश, रोजगार लाभ, कन्धे की बीमारियॉं , राजसी चिन्ह, खून की शुद्धता, शरीर विकास, चमकीली चीजें मखमली कोमल कपडे आदि का कारक है।
3. **मंगल** – शूरता, वीरता, पराक्रम, आक्रामकता, युद्ध, शस्त्र उठाना, वीर्य हानि, चोरी, शत्रु, लाल रंग, उद्यानपति होना, शोर, पशुधन, राजयोग, क्रोध, मूर्खता, विदेशयात्रा, धीरज, पालक पिता आदि, मौखिक कलह , चित्त, गर्मी, घाव, राजसेवा, रोग, प्रसिद्धि अंगक्षति, कटुरस, युवावस्था, मिट्टी के पदार्थ, रूकावट, मांस – भक्षण , दोष दर्शन, शत्रु पर विजय, तीखा भोजन, सोना धातु, गम्भीरता, पुरूषत्व , शील, मूत्र के रोग, जला हुआ प्रदेश, सूखे

वन, धन, खून, काम, क्रोध, सेनापतित्व, वृक्ष, वन विभाग का अधिकारी, ठेकेदारी, कृषि भूमि, दण्डाधिकारी, सॉप, घर, वाहन- सुख, रक्त स्राव, पारा, बेहोशी आदि का कारक है।

4. **बुध** – बुद्धि , विद्या, घोडा, खजाना, गणित, वाक्कल, सेवा, लेखन, नया वस्त्र, बँगला, शिल्पकला, ज्योतिष, तीर्थयात्रा, व्याख्यान, आभूषण, मुदूवचन, नाना, दु:स्वप्न, नपुंसकता, खाल, गीलापन, वैराग्य, सुन्दर भवन, डॉक्टर, गला, गान विद्या, भिक्षु, तिर्यग दृष्टि, हँसोडपन, नम्रता, नृत्य, मन का संयम, नाभि, गोत्र वृद्धि, आन्ध्र प्रदेश की भाषा, विष्णु की भक्ति, शूद्र, पक्षी, बहन, भाषा का चमत्कार, नगरद्वार, धूल, गुप्तांग, व्याकरण, पुराण, साहित्य व वेदान्त विद्या, जौहरी, विद्वत्ता, मामा, मन्त्र, तन्त्र, आयुर्वेद, मन्त्रित्व, जुड़वापन, वनस्पति आदि का कारक बुध है।
5. **वृहस्पति** – शुभ कर्म, धर्म, गौरव, महत्व, पोषण, शिक्षा, गर्भाधान, नगर, राष्ट्र, वाहन, आसन, पद, सिंहासन, अन्न, गृह – सुख, पुत्र, अध्यापन, कर्त्तव्य बोध, संचित धन, मीमांसा शास्त्र, दही, बडा शरीर, प्रताप, यश, तर्क, ज्योतिष, पुत्र, फौज, उदर रोग, दादा, बडे मकान, बडा भाई, राजा, क्रोध, रत्नों का व्यापार, स्वास्थ्य, परोपकार, राजकीय सम्मान, तपस्या , दान , गरूभक्ति, मध्यम श्रेणी का कपडा, गृहसुख, धारणात्मक बुद्धि, सभा चतुरता, बर्तन, सुख, कफ, सुन्दर वाहन आदि का अधिपति वृहस्पति है।
6. **शुक्र** – हीरा, मणि, विवाह, प्रेम – प्रसंग, दाम्पत्य सुख, आमदनी, स्त्री, मैथुन सुख व शक्ति, खटाई, फूल, यश, यौवन, सुन्दरता, काव्य रचना, वाहन, चॉदी, खुजली, राजसी स्वभाव, सौन्दर्य प्रसाधन का व्यवसाय, गीत – संगीत, आमोद – प्रमोद आदि , तैराकी, विचित्र कविता, रसिकता, भाग्य, सौन्दर्य , आकर्षक व्यक्तित्व, ऐश्वर्य , कम खाना , वसन्त ऋतु, वीर्य, जल – क्रीडा , नाटक, अभिनय, आसक्ति, राजकीय मुद्रा, कमजोरी, काले बाल, रहस्यमयी आदि का कारक शुक्र है।
7. **शनि** –जड़ता, आलस्य, रूकावट, चमड़ा, कष्ट, दु:ख, विपत्ति, विरोध, मृत्यु, दासी, गधा, खच्चर, चांडाल, हीनांग, लोग, वनचर, डरावने लोग, स्वामीत्व, आयु, नपुंसकता, पक्षी, दासता, अधार्मिक, कार्य, झूठ बोलना, वात रोग, बुढ़ापा, नसें, पैर, परिश्रम, मजदूरी, अवैध सन्तति, गन्दे व बुरे पदार्थ का विचार, लंगड़ापन, राख, लोहा, काले धान्य, कृषिजीवी, शस्त्रागार, जाति वहिष्कार, सीसा, शक्ति का दुरूपयोग, तुर्क, पुराना तेल, लकड़ी, तामसी गुण, व्यर्थ घूमना, डर, अटपटे बाल, बकरा, भैंस, सार्वभौम सत्ता, कुत्ता, चोरी, कठोर हृदयता, मूर्ख नौकर व दीक्षा का कारक शनि है।
8. **राहु** – छत्र, चँवर, राज्य, संग्रह, कुतर्क, मर्मच्छेदी वचन, शूद्र , पाप, स्त्री , सुसज्जित वाहन, अधार्मिक मनुष्य, गंगा – स्नान, तीर्थ यात्रा, झूठ, भ्रम, मायाचार, कपट, रात की हवाएँ,

रेंगने वाले कीड़े – मकोड़े , गुप्त वार्ता, मुत्यु का समय, वायु का तेज, दर्द, सॉस की बीमारी, दुर्गापूजा, पशुओं से मैथुन, उर्दू आदि भाषाएँ, कठोर भाषण, अचानक फल देना आदि का कारक राहु है।

9. **केतु** – मोक्ष, शिवोपासना, डॉक्टरी, कुत्ता, मुर्गा, ऐश्वर्य, टी0बी0, पीड़ा, ज्वर, ताप, वायु विकार, स्नेह, सम्पत्ति का हस्तान्तरण, पत्थर की चोट, कॉंटा, ब्रह्मज्ञान, ऑंख का दर्द, अज्ञानता, भाग्य, मौनव्रत, वैराग्य, भूख, उदरशूल, सींगों वाले पशु, ध्वज, शूद्रों की सभा, बन्धन की आज्ञा को रोकना, जमानत आदि का कारक केतु है।

बलवान कारक से उससे सम्बन्धित पदार्थों की प्राप्ति होती है। यदि भावेश भाव पदार्थ का कारक या स्वयं भाव तीनों ही निर्बल या आक्रान्त हो तो उस भाव से सम्बन्धित फल की प्राप्ति नहीं होती है। साधारणत: जो ग्रह जिस भाव का कारक हो उसी स्थान में बैठकर प्राय: भाव की हानि करता है। शनि इसका अपवाद है। अर्थात् अष्टम भाव में शनि आयु नाशक न होकर आयु को सुरक्षा प्रदान करता है।

बोध प्रश्न –

1. जिस ग्रह के सर्वाधिक अंश होते हैं, उसे कहते है।
   क. अमात्य कारक ख. आत्म कारक ग. भ्रातृ कारक घ. मातृ कारक
2. कारक कितने प्रकार के होते है।
   क. 5 ख. 6 ग. 7 घ. 8
3. जातक का जो जन्म लग्न हो वह होता है।
   क. आत्म कारक ख. अमात्य कारक ग. भ्रातृ कारक घ. मातृ कारक
4. चन्द्रमा ग्रह कारक है।
   क. आत्मा का ख. मन का ग. शरीर का घ. कोई नहीं
5. ज्योतिष का कारक ग्रह है।
   क. मंगल ख. वृहस्पति ग. चन्द्रमा घ. सूर्य

भाव, भावेश व कारक ये तीनों बली हों तो भाव का पूरा फल, दो ही बली होने से थोड़ा कम अर्थात् 2/3 फल होता है तथा एक बली होने से 1/3 फल ही प्राप्त होता है।

अन्य प्रकार से कारकत्व - जन्म लग्न या चन्द्र से 1,4,7,10 भावों में जितने ग्रह स्वोच्च व मूल त्रिकोण व स्वराशि में स्थित हों तो वे परस्पर कारक होते हैं, तथा एक दूसरे को बल प्रदान कर शुभप्रद होते हैं। इनमें भी दशम भावगत ग्रह विशेषतया कारक अर्थात् फलकारक होता है।

अथवा कहीं भी स्वोच्च, मूलत्रिकोण या स्वराशि में स्थित ग्रह या स्वोच्चादि नवांशगत ग्रह भी कारक अर्थात् शुभ फल देने वाले होते हैं। अथवा केन्द्र स्थानों में किसी भी राशि में हस्थित ग्रहकारक होते हैं।

इस प्रकार कारक ग्रहों की अधिकता होने से जातक साधारण कुलोत्पन्न होकर भी प्रधानता पाता है, तब राजकुल आदि में पैदा होने पर तो विशिष्ट प्रधानता पाता ही है।

कारकों की फल प्राप्ति - सभी कारक ग्रह अपने से सम्बन्धित या समस्त या कुछ शुभ फल यथावसर इन वर्षों में या इसके उपरान्त देते हैं –

सूर्य - 22 वर्ष

भौम - 28 वर्ष

बुध – 32 वर्ष

गुरू – 16 वर्ष

शुक्र – 25 वर्ष

शनि – 36 वर्ष

राहु, केतु - 42 वर्ष

राश्यादि अनुसार आत्म कारक फल - आत्म कारक ग्रह मेष के नवमांश में हो तो जातक के घर में चूहे और बिल्ली का उपद्रव होता है। पापयुक्त हो तो विशेष उपद्रव होता है। आत्मकारक ग्रह वृष के नवमांश में हो तो चतुष्पदों से सुख प्राप्त होता है। आत्मकारक ग्रह वृष के नवमांश में हो तो चतुष्पदों से सुख प्राप्त होता है, मिथुन के नवमांश में स्थित हो तो खुजली आदि व्याधि से भय होता है, कर्क के नवमांश में हो तो जल से भय होता है, सिंह के नवमांश में हो तो हिंसा करने वाले जन्तु से भय होता है, कन्या के नवमांश में हो तो खुजली, स्थूलता और अग्निभय होता है, तुला में हो तो जातक वस्रादि के निर्माण में चतुर और व्यापारी होता है, वृश्चिक में हो तो सर्प से भय और माता के स्तन में पीड़ा होती है। धन में हो तो वाहनादि से अथवा उच्च स्थान से गिरने का भय होता है। आत्मकारक ग्रह मकर के नवमांश में हो तो जल – जन्तु, शंख मुक्ता, प्रवालादि से तथा पक्षियों से लाभ होता है। कुम्भांश में हो तो तड़ाग, कूप आदि निर्माण करने वाला होता है, मीनांश में आत्मकारक ग्रह हो तो जातक मुक्तिभागी होता है। इनमें शुभ ग्रह से अवलोकित हो तो अशुभ फल का नाश और पाप ग्रह की दृष्टि हो तो शुभ फल का नाश होता है।

आत्मकारक ग्रह के नवमांश में तथा लग्न के नवमांश में शुभ ग्रह निष्ठ हो और शुभ ग्रह से अवलोकित हो तो जातक निश्चय ही राजा होता है। अपने आत्कारक ग्रह के नवमांश से केन्द्र – त्रिकोण में शुभ ग्रह हो, पाप ग्रह से रहित हो तो जातक धनी और विद्वान होता है। मिश्रित ग्रह हो तो मिश्रित फल होता है।

3.3.2 कारकांश स्थित ग्रह फल –

आत्मकारक के नवमांश में सूर्य हो तो जातक राजकीय कार्य करने
वाला और पूर्ण चन्द्रमा हो तो भोग करने वाला तथा विद्वान होता है। आत्मकारक के नवमांश में अपने बलयुक्त भौम हो तो जातक भाला रखने वाला, अग्नि से जीवन – यापन करने वाला और रसज्ञ होता है। बलयुक्त बुध कारकांश में हो तो जातक कला को जानने वाला और शिल्पविद्या में दक्ष होता है। गुरू हो तो सुकर्म करने वाला और ज्ञानी होता है तथा वेद को जानने वाला होता है। शुक्र हो तो जातक सौ वर्ष जीवित रहने वाला, कामी एवं राजपुरूष होता है। शनि हो तो अपने कुलानुरूप कार्य करने वाला होता है। राहु हो तो चोर, धनुष धारण करने वाला, लौहयन्त्रकर्ता तथा विषवैद्य होता है। इसमें सन्देह नहीं है। केतु में हो तो जातक हाथियों का व्यवहार करने वाला तथा चोर होता है।

यदि चन्द्र, भौम या शुक्र के षड्वर्ग में आत्मकारक ग्रह निष्ठ हो तो जातक परस्त्री गामी होता है। उक्त स्थिति से विपरीत हो तो फल भी विपरीत ही समझना चाहिये।

कारकांशस्थित ग्रहफल –

कारकांशे रवौ जातो राजकार्यपरो द्विज।
पूर्णेन्दौ भोगवान् विद्वान् शुक्रदृष्टे विशेषतः ।।
स्वांशे बलयुते भौमे जातः कुन्तायुधी भवेत्।
वह्निजीवी नरो वाऽपि रसवादी च जायते ।।
बुधे बलयुते स्वांशे कलाशिल्पविचक्षणः।
वाणिज्यकुशलश्चापि बुद्धिविद्यासमन्वितः।।
सुकर्मा ज्ञाननिष्ठश्च वेदवित् स्वांशगे गुरौ।
शुक्रे शतेन्द्रियः कामी राजकीयो भवेन्नरः ।।
शनौ स्वांशगते जातः स्वकुलोचितकर्मकृत्।
राहौ चौरश्च धानुष्को जातो वा लोहयन्त्रकृत् ।।
विषवैद्योऽथवा विप्र जायते नात्र संशयः।
व्यवहारी गजादीनां केतौ चौरश्च जायते ।।

आत्मकारक के नवमांश में सूर्य हो तो जातक राजकीय कार्य करने वाला और पूर्ण चन्द्रमा हो तो भोग करने वाला तथा विद्वान होता है। शुक्र से युक्त या दृष्ट हो तो जातक विशेष भोगी और विद्वान होता है। आत्मकारक के नवमांश में अपने बलयुक्त भौम हो तो जातक भाला रखने वाला, अग्नि से जीवन यापन करने वाला और रसज्ञ होता है। बलयुक्त बुध कारकांश में हो तो जातक कला को जानने वाला और शिल्पविद्या में दक्ष होता है। गुरू हो तो सुकर्म करने वाला और ज्ञानी होता है तथा वेद को जानने वाला होता है। शुक्र हो तो जातक सौ वर्ष जीवित रहने वाला, कामी एवं राजपुरूष होता है। शनि हो तो अपने कुलानुरूप कार्य करने वाला होता है। राहु हो तो चोर, धनुष

धारण करने वाला, लौहयन्त्रकर्ता तथा विषवैद्य होता है।

यदि कारकांश में सूर्य तथा राहुयुक्त हो तो सर्प का भय होता है। यदि शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो सर्प का भय नष्ट होता है और पापग्रह से दृष्ट हो तो सर्प के माध्यम से मरण होता है। यदि उक्त योग में केवल शुभ ग्रह का षड् वर्ग हो तो जातक विषवैद्य होता है। कारकांश में रवि – राहु युक्त हो एवं मंगल से दृष्ट हो, अन्य ग्रह से दृष्ट नहीं हो तो जातक अपना घर या दूसरे का घर जलाने वाला होता है। बुध से दृष्ट रहने पर गृहदाहक नहीं होता है। पाप ग्रह के षड् वर्ग में हो और गुरू से अवलोकित हो तो जातक स्वगृहसहित समीप के गृह को भी जलाने वाला होता है।

गुलिकेन युते स्वांशे पूर्णचन्द्रेण वीक्षिते।

चौरैर्हृतधनो जातः स्वयं चौरोऽथवा भवेत्॥

ग्रहादृष्टे सगुलिके विषदो वा विषैर्हतः।

बुधदृष्टे बृहद्बीजो जायते नाऽऽत्र संशयः॥

आत्मकारकांश में गुलिक हो और पूर्ण चन्द्र से दृष्ट हो तो जातक का धन चोर ले जाता है अथवा जातक स्वयं चोर होता है। अन्य ग्रह से दृष्ट न हो तो दूसरे को विष देने वाला या स्वयं विषपान से मरने वाला होता है। उस पर बुध की दृष्टि हो तो जातक बडे अण्डकोश वाला होता है।

कारकांश से भावों का फल –

प्रथम भाव – केतुयुक्त कारकांश सूर्य और शुक्र से दृष्ट हो तो जातक राजपुरूष होता है।

द्वितीय भाव –

स्वांशाद्धने च शुक्रारवर्गे स्यात् पारदारिकः।

तयोर्दृग्योगतो ज्ञेयमिदमारमरणं फलम्॥

केतौ तत्प्रतिबन्धः स्याद् गुरौ तु स्त्रैण एव सः।

राहौ चाऽर्थनिवृत्तिः स्यात् कारकांशाद् द्वितीयगे॥

कारकांश से द्वितीय भाव में शुक्र तथा मंगल का षड्वर्ग हो तो जातक परस्त्रीगामी होता है। उक्त दोनों की दृष्टि द्वितीय भाव पर हो तो जातक जीवन भर परस्त्री के साथ रहने वाला होता है। उसमें केतु निष्ठ हो तो उक्त फल में प्रतिबन्ध होता है। कारकांश से द्वितीय भाव में गुरू रहने पर भी जातक स्त्री में आसक्त होता है। कारकांश से द्वितीय भाव में राहु हो तो स्त्री के कारण जातक के धन का नाश होता है।

तृतीय भाव का फल –

स्वांशात् तृतीयगे पापे जातः शूरः प्रतापवान्।

तस्मिन् शुभग्रहे जातः कातरो नात्र संशयः॥

कारकांश से तृतीय भाव में पाप ग्रह हो तो जातक शूर और प्रतापी होता है, लेकिन यदि शुभ ग्रह बैठे

हों तो जातक कातर होता है।

चतुर्थ भाव फल –

> **स्वांशाच्चतुर्थभावे तु चन्द्रशुक्रयुतेक्षिते।**
> **तत्र वा स्वोच्चगे खेटे जात: प्रासादवान् भवेत्॥**
> **शनिराहुयुते तस्मिन् जातस्य च शिलागृहम्।**
> **ऐष्टिकं कुज केतुभ्यां गुरूणा दारवं गृहम्॥**
> **तार्णं तु रविणा प्रोक्तं जातस्य भवनं द्विज।**
> **चन्द्रे त्वनावृते देशे पत्नीयोग: प्रजायते॥**

कारकांश से चतुर्थ भाव में चन्द्र शुक्र से युक्त हो या दृष्ट हो तो जातक का प्रासाद होता है। यदि उच्चस्थ हो तो जातक राजमहलसदृश भवन वाला होता है। उसमें शनि, राहु का योग हो तो शिला का गृह, मंगल – केतु का योग रहने पर ईंटें का गृह, गुरू निष्ठ हो तो लकड़ी का गृह एवं रवि से युक्त हो तो तृण का गृह होता है। कारकांश से चतुर्थ भाव में चन्द्र के रहने से आवरणरहित स्थान में पत्नी के साथ जातक का समागम होता है।

पंचम स्थान का फल –

> **पंचमे कुजराहुभ्यां क्षयरोगस्य सम्भव:।**
> **रात्रिनाथेन दृष्टाभ्यां निश्चयेन प्रजायते॥**
> **कुजदृष्टौ तु जातस्य पिटकादिगदो भतेत्।**
> **केतुदृष्टौ तु ग्रहणी जलरोगोऽथवा द्विज॥**
> **सराहुगुलिके तत्र भयं क्षुद्रविषोद्भवम्।**
> **बुधे परमहंसश्च लगुडी वा प्रजायते॥**
> **रवौ खड्गधरो जात: कुजे कुन्तायुधी भवेत्।**
> **शनौ धनुर्धरो ज्ञेयो राहौ च लोहयन्त्रवान्॥**
> **केतौ च घटिकायन्त्री मानवो जायते द्विज।**
> **भार्गवे तु कविर्वाग्मी काव्यज्ञो जायते जन:॥**

कारकांश से पंचम भाव में मंगल तथा राहु स्थित हो तो जातक को क्षयरोग की सम्भावना होती है। यदि उक्त स्थान में

उक्त योग हो और उसके चन्द्रमा से अवलोकित रहने पर निश्चय ही क्षयरोग होता है। मंगल के द्वारा दृष्ट हो तो पिड़की आदि रोग का भय रहता है। केतु से दृष्ट होने पर जातक को ग्रहणी अथवा जलोदर रोग होता है। राहुयुक्त गुलिक हो तो जातक को क्षुद्र विष का भय रहता है। बुध से दृष्ट

होने पर जातक परमहंस दण्डी होता है। सूर्य हो तो खड्गधारी, मंगल हो तो भाला रखने वाला, शनि हो तो धनुष रखने वाला, राहु से लोहयन्त्रकर्ता, केतु से घटीयन्त्रकर्ता, शुक्र पंचमस्थ हो तो कवि, वक्ता एवं काव्यवेत्ता जातक होता है।

षष्ठ भाव फल –

स्वांशात् षष्ठगते पापे कर्षको जायते जनः।
शुभग्रहेऽलसश्चेति तृतीयेऽपि फलं स्मृतम्॥

आत्मकारकांश से षष्ठ स्थान में पापग्रह बैठे हों तो जातक कृषि कार्य करने वाला और शुभ ग्रह बैठै हों तो आलसी होता है। तृतीय भाव से भी इन फलों का विचार करना चाहिये।

सप्तम भाव फल -

द्यूने चन्द्रगुरू यस्य भार्या तस्याऽतिसुन्दरी।
तत्र कामवती शुक्रे बुधे चैव कलावती॥
रवौ च स्वकुले गुप्ता शनौ चापि वयोऽधिका।
तपस्विनी रूजाढया वा राहौ च विधवा स्मृता॥

आत्मकारकांश से सप्तम भाव में चन्द्रमा और गुरू बैठे हों तो जातक की पत्नी अति सुन्दरी होती है। सप्तम में शुक्र हो तो वह कामवती और बुध हो तो कलावती होती है। सूर्य हो तो उसकी स्त्री अपने वंश में रक्षिता होती है। शनि हो तो वय में अधिक, तपस्विनी, रोगयुक्ता, एवं राहु के सप्तमस्थ रहने पर जातक का विधवा पत्नी के साथ संगम होता है।

अष्टम भाव फल –

शुभस्वामियुते रन्ध्रे स्वांशाद् दीर्घायुरूच्यते।
पापेक्षितयुतेऽल्पायुर्मध्यायुर्मिश्रदृग्युते।।

कारकांश से अष्टम भाव में शुभ ग्रह और अपने स्वामी से युत या दृष्ट हो तो जातक दीर्घायु होता है। पाप ग्रह से युत या दृष्ट हो तो जातक अल्पायु और मिश्रित ग्रह से युत दृष्ट होने पर मध्यमायु होता है।

नवम भाव फल –

कारकांशाच्च नवमे शुभग्रहयुतेक्षिते।
सत्यवादी गुरौ भक्त: स्वधर्मनिरतो नरः॥
स्वांशाच्च् नवमे भावे पापग्रहयुतेक्षिते।
स्वधर्मनिरतो बाल्ये मिथ्यावादी च वार्धके॥
नवमे कारकांशाच्च शनि राहुयुतेक्षिते।
गुरूद्रोही भवेद् बालः शास्त्रेषु विमुखो नरः॥

कारकांशाच्च नवमे गुरूभानुयुतेक्षिते।
तदाऽपि गुरूद्रोही स्यात् गुरूवाक्यं न मन्यते ।।
कारकांशाच्च नवमे शुक्रभौमयुते क्षिते।
षड्वर्गादिकयोगे तु मरणं पारदारिकम् ।।
कारकांशाच्च नवमे ज्ञेन्दुयुक्तेक्षिते द्विज।
परस्त्रीसंगमाद् बालो बन्धको भवति ध्रुवम् ।।
नवमे केवलेनैव गुरूणा च युतेक्षिते।
स्त्रीलोलुपो भवेज्जातो विषयी चैव जायते ।।

कारकांश से नवम भाव में शुभ ग्रह युत हो या दृष्ट हो तो जातक सत्यवादी एवं अपने कुलानुसार धर्माचरण करने वाला होता हे। पापग्रह से युत या दृष्ट हो तो जातक बाल्यावस्था में सध्धर्माचरण करने वाला, परन्तु वृद्धावस्था में स्वधर्म का त्याग कर मिथ्यावादी होता है। शनि, राहु युत या दृष्ट हो तो जातक गुरूद्रोही और मूर्ख होता है। नवम में गुरू तथा रवि युत या दृष्ट हो तो भी जातक गुरूद्रोही और गुरूवाक्य को नहीं मानता है। कारकांश से नवम में शुक्र या भौम युत हो तो या इनके द्वारा दृष्ट हो या इन्हीं के षड्वर्ग से युक्त हो तो जातक का परस्त्री के कारण मरण होता है। कारकांश से नवम में बुध तथा चन्द्रमा से युत हो या दृष्ट होतो जातक दूसरे की स्त्री के साथ समागम करने के कारण बन्धक होता है। नवम भाव में केवल गुरू के द्वारा युत या दृष्ट हो तो जातक विषय – वासना का भोगी और स्त्री में आसक्त रहने वाला होता है।

कारकांश से दशम भाव फल –

कारकांशाच्च दशमे शुभखेटयुतेक्षिते।
स्थिरवित्तो भवेद् बालो गम्भीरो बलबुद्धिमान् ।।
दशमे कारकांशाच्च पापखेटयुतेक्षिते।
व्यापारे जायते हानिः पितृसौख्येन वर्जितः ।।
दशमे कारकांशाच्च बुधशुक्रयुतेक्षिते।
व्यापारे बहुलाभश्च महत्कर्मकरो नरः ।।
कारकांशाच्च दशमे रविवचन्द्रयुतेक्षिते।
गुरूदृष्टयुते विप्र जातको राज्यभाग् भवेत् ।।

कारकांश से दशम भाव में शुभग्रह बैठै हों तो जातक स्थिर, धनवान, बल तथा बुद्धि से युक्त और गम्भीर होता है। यदि पाप ग्रह से युत या अवलोकित हो तो व्यापार में हानि तथा पितृसुख से रहित होता है। कारकांश से दशम में बुध शुक्र से युत या दोनों से दृष्ट हो तो व्यापार में बहुत लाभ और

बड़े – बड़े कार्य को सम्पन्न करने वाला होता है। कारकांश से दशम में सूर्य – चन्द्र युत हो और गुरू से दृष्ट हो तो जातक राजा होता है।

एकादश भाव फल –

स्वांशादेकादशे स्थाने शुभखेटयुतेक्षिते।
भ्रातृसौख्ययुतो बाल: सर्वकार्येषु लाभकृत्॥
एकादशे सपापे तु कुमार्गाल्लाभकृन्नर:।
विख्यातो विक्रमी चैव जायते नाऽत्र संशय:॥

कारकांश से एकादश भाव में शुभग्रह से युत हो या शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो जातक भ्रातृसौख्य से सम्पन्न होता है और सभी कार्यो में सफलता प्राप्त करता है। एकादश भाव में पापग्रह युत हो या दृष्ट हो तो जातक कुमार्ग से लाभ प्राप्त करता है और विख्यात तथा पराक्रमी होता है।

द्वादश भाव फल –

कारकांशाद् व्ययस्थाने सद्ग्रहे सद्व्ययो भवेत्।
असद्व्ययोऽशुभे ज्ञेयो ग्रहाभावे च सत्फलम्॥
कारकांशाद् व्ययस्थाने स्वभोच्चस्थे शुभग्रहे।
सद्गतिर्जायते तस्य शुभलोकमवाप्नुयात्॥
कारकांशाद् व्यये केतौ शुभखेटयुतेक्षिते।
तदा तु जायते मुक्ति: सायुज्यपदमाप्नुयात॥
मेषे धनुषि वा केतौ कारकांशाद् व्यये स्थिते।
शुभखेटेन सन्दृष्टे सायुज्यपदमाप्नुयात्॥
व्यये च केवले केतौ परयुक्तेक्षितेऽपि वा।
न तदा जायते मुक्ति: शुभलोकं न पश्यति॥
रविणा संयुते केतौ कारकांशाद् व्ययस्थिते।
शिवभक्तिर्भवेत्तस्य निर्विशङ्कं द्विजोत्तम्॥
चन्द्रेण संयुते केतौ कारकांशाद् व्ययस्थिते।
गौर्यां भक्तिर्भवेत्तस्य शक्तिको जायते नर:॥
शुक्रेण संयुते केतौ कारकांशाद् व्ययस्थिते।
लक्ष्म्यां संजायते भक्तिर्जातकोऽसौ समृद्धिमान्॥
कुजेन संयुते केतौ स्कन्दभक्तो भवेन्नर:।
वैष्णवो बुधसौरिभ्यां गुरूणा शिवभक्तिमान॥
राहुणा तामसीं दुर्गां सेवते क्षुद्रदेवताम्।
भक्ति: स्कन्देऽथ हेरम्बे शिखिना केवलेन वा॥

कारकांशाद् व्यये सौरि: पापराशौ यदा भवेत्।
तदाऽपि क्षुद्रदेवस् भक्तिस्तस्य न संशय: ।।
पापर्क्षेऽपि शनौ शुक्रे तदाऽपि क्षुद्रसेवक: ।
अमात्यकारकात् षष्ठेऽप्येवतेव फलं वदेत् ।।

आत्मकारकांश नवमांश से द्वादश भाव में शुभग्रह स्थित हो या दृष्ट हो तो जातक सत्कार्य में व्यय करने वाला होता है। द्वादश भाव में पापग्रह से युत या दृष्ट हो तो जातक असत्कार्य में व्यय करने वाला और अन्त में अधोगति को प्राप्त करने वाला होता है। यदि ग्रहरहित हो तो शुभ फल ही प्राप्त करता है। कारकांश से द्वादश भाव में अपने उच्च का शुभग्रह हो तो जातक शुभ लोक को प्राप्त करता है। द्वादश में केतु हो और शुभ ग्रह से युत या दृष्ट हो तो जातक सायुज्य मोक्ष को प्राप्त करता है। कारकांश से व्यय भाव में मेष या धनु का केतु हो और वह शुभग्रह द्वारा अवलोकित हो तो भी जातक सायुज्य मोक्ष प्राप्त करता है। व्यय भाव में केवल केतु हो और पापग्रह से युत या दृष्ट हो तो जातक को शुभ लोक की प्राप्ति नहीं होती। यदि रवि से युक्त केतु व्यय भाव में स्थित हो तो जातक के लिए शिवभक्तिकारक होता है। चन्द्रमा से युत हो तो गौरी, शुक्र से युत हो तो लक्ष्मी, भौम से युत हो तो कार्तिकेय, बुध शनि से युत हो तो विष्णु, गुरू से युत हो तो शिव एवं राहु से युत हो तो तामसी दुर्गा तथा क्षुद्र देवता में जातक की भक्ति होती है। केवल केतु से युत रहने पर जातक स्कन्द तथा हेरम्ब का भक्त होता है। कारकांश से व्ययभाव में शनि या पापग्रह बैठे हों तो जातक क्षुद्र देवता का भक्त होता है। शनि तथा शुक्र के पापराशि में रहने पर भी जातक क्षुद्र देवता का भक्त होता है। आत्म कारकांश से षष्ठ भाव से भी उक्त फल का विचार करना चाहिए।

4.4 सारांश: -

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि रवि से शनिपर्यन्त 7 ग्रहों के कारक का विवरण इस प्रकार है - कुछ लोग राहुपर्यन्त 8 ग्रह कारक मानते है, तो कुछ लोग कहते हैं कि दो ग्रहों के अंशादि तुल्य होने पर राहु को लेना चाहिए। सूर्यादि ग्रहों में राशि छोडकर सर्वाधिक अंश जिस ग्रह का होगा वही आत्मकारक ग्रह होगा। दो ग्रहों में अंश तुल्य हो तो अधिक कला वाले को आत्मकारक मानना चाहिए और कला में समता हो तो अधिक विकला वाले को आदिकारक मानना चाहिए। इसी प्रकार सर्वाल्प अंश वाला ग्रह अन्त्यकारक और मध्य अंश वाला ग्रह मध्यकारक कहा जाता है, इसी को उपखेट भी कहा जाता है। राहु के कारक के विचार में उसको 30 अंश में घ्ज्ञटाकर विचार करना चाहिए, क्योंकि राहु सदैव वक्र गति से चलता है। इस प्रकार से कारकों को जानना चाहिए। ज्योतिष शास्त्र में जातक स्कन्ध फलादेशादि कर्म का सूचक है।

प्रत्येक ग्रहों का अपना एक कारक होता है, जिसके आधार पर वह फलादेश होता है, जो ग्रह जिसका कारक होगा तदनुसार मानव को प्रभावित करता है।

4.5 पारिभाषिक शब्दावली

कारक – सूर्यादि ग्रहों के उनके अंशों के आधार पर कारक आदि संज्ञायें होती है।

कारकांश - कारक सम्बन्धित अंश

आत्मादि कारक – सूर्यादि ग्रहों के क्रमश: कथित आत्म कारकादि भाव

योग कारक - योग सम्बन्धित कारक

भाव कारक - भाव सम्बन्धित कारक

अधोगति – नीचे की ओर जाना

4.6 बोधप्रश्नों के उत्तर

1. ख

2. घ

3. क

4. ख

5. ख

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वृहज्जातकम् - वराहमिहिर,

वृहत्पराशरहोराशास्त्र - पराशर,

ज्योतिष सर्वस्व – बी0एल0 ठाकुर

होराशास्त्रम् – वराहमिहिर

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न -

1. कारक से आप क्या समझते है। आत्मादि कारकों का विस्तार से उल्लेख कीजिये।
2. कारकांश क्या है। उससे सम्बन्धित भावों के फल का विस्तृत वर्णन कीजिये।

खण्ड - 2
ग्रहभाव विचार

इकाई – 1 विविध परिप्रेक्ष्य में ग्रहों का शुभाशुभत्व

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 ग्रह एवं उनकी शुभाशुभता

1.3.1 विभिन्न लग्नों में ग्रह फल

बोध प्रश्न

1.4 सारांशः

1.5 पारिभाषिक शब्दावली

1.6 बोधप्रश्नों के उत्तर

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1.8 सहायक पाठ्यसामग्री

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई द्वितीय खण्ड ग्रहभाव विचार के प्रथम इकाई '**विविध परिप्रेक्ष्य में ग्रहों का शुभाशुभत्व**' नामक शीर्षक से सम्बन्धित है। **गच्छतीति ग्रहः** अर्थात् जो चलता है, जिसमें गति है उसे **ग्रह** कहते है। भारतीय ज्योतिष के अनुसार ग्रहों की संख्या **नौ** है - सूर्य, चन्द्रमा, बुध, शुक्र, मंगल, गुरु, शनि, राहु और केतु। इस इकाई में आप ग्रह एवं विभिन्न परिस्थितियों में उनके शुभाशुभत्व की स्थिति क्या है उससे सम्बन्धित ज्ञान को प्राप्त करेंगे।

सूर्य या किसी अन्य तारे के चारों ओर परिक्रमा करने वाले खगोल पिण्डों को **ग्रह** कहते है। अंतर्राष्ट्रीय खगोलीय संघ के अनुसार हमारे सौर मंडल में आठ ग्रह हैं - बुध, शुक्र, पृथ्वी, मंगल बृहस्पति शनि युरेनस और नेप्चून इनके अतिरिक्त तीन बौने ग्रह और हैं - सीरीस, प्लूटो और एरीस। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने जातक शास्त्र के आरम्भिक बातों का अध्ययन कर लिया है। राशि, नक्षत्र एवं फलित ज्योतिष के आधारभूत सिद्धान्त से आप परिचित हो चुके है। यहॉ इस इकाई में आप विविध परिप्रेक्ष्य में ग्रहों के स्थितियों का अध्ययन करेंगे। ज्योतिष के अनुसार ग्रह की परिभाषा अलग है। भारतीय ज्योतिष और पौराणिक कथाओं में नौ ग्रह गिने जाते हैं, सूर्य, चन्द्रमा, बुध, शुक्र, मंगल, गुरु, शनि, राहु और केतु।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

1. ग्रह को परिभाषित करने में समर्थ हो सकेंगे।
2. ग्रहों के शुभाशुभत्व को समझा सकेंगे।
3. ग्रहों के सिद्धान्त के निरूपण करने में समर्थ होंगे।
4. ग्रहों का स्वरूप वर्णन करने में समर्थ होंगे।
5. ग्रहों के सम्बन्ध को निरूपित करने में समर्थ होंगे।

1.3 ग्रह एवं उनकी शुभाशुभता

गृह्णाति फलदातृत्वेन जीवान् इति ग्रहः । अर्थात् जो जीवों को फल देने के लिये ग्रहण करें, पकड़े। इस आधार पर भारतीय ज्योतिष शास्त्र में ग्रहों की संख्या **9** है – सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरू, शुक्र, शनि, राहु एवं केतु। शुभाशुभता की दृष्टि से ग्रहों में गुरू, शुक्र, बुध एवं पूर्ण चन्द्रमा को **शुभग्रह** तथा सूर्य, मंगल, शनि, राहु एवं केतु तथा क्षीणचन्द्रमा को **अशुभग्रह** माना गया है।
विशेष रूप में – सूर्य, मंगल, शनि, राहु व केतु अशुभ या पाप या क्रूर ग्रह कहलाते है। गुरू व शुक्र स्वाभाविक शुभ या सौम्य ग्रह है। बुध यदि अकेला हो या शुभ ग्रहों साथ हो तो शुभ रहेगा, अन्यथा

पापयुक्त बुध अशुभ ही माना जाता है। इसी तरह चन्द्रमा यदि पूर्ण हो तो शुभ एवं क्षीण चन्द्रमा पापी माना जाता है। कृष्णपक्ष की दशमी से शुक्ल पक्ष पंचमी पर्यन्त चन्द्रमा पापी होता है। ऐसा सामान्यत: माना जाता है। सूर्य को भी कुछ विद्वान पापी न मानकर केवल क्रूर कहते है। लेकिन हम उच्च स्व मूल त्रिकोणदि राशियो के अतिरिक्त सूर्य को पापी ही समझते है।

सौरमण्डल में विचरण करते ग्रहों एवं उपग्रहों के अलावा विविध नक्षत्रों का अचूक प्रभाव समस्त चराचर जगत पर पड़ता है। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण समुद्र में आने वाला नियमित ज्वारभाटा है। यह ज्वारभाटा चन्द्रमा की विविध स्थिति के अनुसार होता है। इसी प्रकार अन्य ग्रहों का प्रभाव भी संसार के प्रत्येक व्यक्ति, वस्तु एवं सजीवव आदि पर पड़ता हैनिर्जी- । कुंडली में जिस स्थान पर कोई ग्रह जिस भाव का स्वामी होकर प्रबल होता है। उस स्थान अथवा भाव का उत्कट फल देता है। उदाहरणस्वरूप यदि कुंडली में अष्टमेश सबल होकर चतुर्थ भाव में है। यह योग माता या सम्पत्ति को हानि देगा। यदि पंचम भाव में बैठा है तो पुत्र एवं विद्या को हानि देगा। यदि छठें भाव में बैठा है तो शत्रु एवं रोग का नाश करेगा। इसके विपरीत यदि दशमेश बलवान होकर छठे भाव में बैठा है। तब यश एवं प्रतिष्ठा प्राप्त होगी किन्तु जीवन में अस्थिरता, संतान विनाश एवं अकाल मृत्यु देगा। इस प्रकार का प्रभाव देने में शनि, गुरु एवं मंगल ये तीन ग्रह अति सक्रिय होते हैं। प्रायः शनि एवं मंगल को परम पापी एवं अशुभ ग्रह माना गया है। यह सही भी है। किन्तु दैत्य भी अपना आवास सुरक्षित रखने की कोशिश करते है। ये ग्रह अपने घर को कभी नुकसान नहीं पहुँचाते। शनि एवं मंगल यदि शुभ अवस्था में हो तो परम शुभ फल देने वाले हो जाते है।इस प्रकार कहा जा सकता है कि सब सुयोग होते हुए भी यदि शनि, गुरु एवं मंगल प्रबल हो तो वे सबसे पहले अपना प्रभाव दिखाते हैं। यदि सबल एवं शुभ अवस्था में हुए तो सारी अशुभताएँ छिप जाती हैं। यदि अशुभ अवस्था में हुए तो सारे सुयोग छिप जाते हैं। भले ही ग्रहराज सूर्य पूर्ण बली एवं शुभ अवस्था में क्यों न हो। प्राचीन खगोलशास्त्रियों ने तारों और ग्रहों के बीच में अन्तर इस तरह कियारात में आकाश में चमकने वाले - अधिकतर पिण्ड हमेशा पूरब की दिशा से उठते हैं, एक निश्चित गति प्राप्त करते हैं और पश्चिम की दिशा में अस्त होते हैं। इन पिण्डों का आपस में एक दूसरे के सापेक्ष भी कोई परिवर्तन नहीं होता है। इन पिण्डों को तारा कहा गया। पर कुछ ऐसे भी पिण्ड हैं जो बाकी पिण्डों के सापेक्ष में कभी आगे जाते थे और कभी पीछे -यानी कि वे घुमक्कड़ थे। Planet एक लैटिन का शब्द है, जिसका अर्थ होता है इधर उधर घूमने वाला-। इसलिये इन पिण्डों का नाम Planet और हिन्दी में ग्रह रख दिया गया। शनि के परे के ग्रह दूरबीन के बिना नहीं दिखाई देते हैं, इसलिए प्राचीन वैज्ञानिकों को केवल पाँच ग्रहों का ज्ञान था, पृथ्वी को उस समय ग्रह नहीं माना जाता था।

विशेष स्थानों पर ग्रहों के शुभाशुभत्व –

कामावनीनन्दनराशियाताः सितेन्दुपुत्रामरवन्द्यमानाः।

अरिष्टदास्तेऽखिलजातकेषु सदाऽष्टमस्थः शनिरिष्टदः स्यात् ।।

शुक्र, चन्द्रमा के पुत्र बुध और वृहस्पति क्रमशःसातवें, चौथें और पॉचवें भाव में अनिष्टकारक होते हैं – ऐसा सभी जातक ग्रन्थों में कहा गया है। आठवें भाव में स्थित शनि अभीष्ट की सिद्धि देने वाला होता है। इनके अतिरिक्त कुछ अन्य अरिष्टकारक योग मन्त्रेश्वर ने अपनी फलदीपिका में कहे हैं –

धर्मे सूर्यः शीतगुर्बन्धुभावे शौर्ये भौमः पंचमे देवमन्त्री।

कामे शुक्रश्चाष्टमे भानुपुत्रः कुर्यात्तस्य क्लेशमित्याहुरन्ये ।।

नवम भाव में सूर्य, चतुर्थभाव में चन्द्रमा, तृतीय भाव में मंगल, पंचम भाव में वृहस्पति, सप्तम भाव में शुक्र और अष्टमभाव में शनि के जातक के लिए अनिष्टकर होते हैं।

नव ग्रहों में सभी ग्रह की अपनी राशी और अपना घर होता है आइये जानते है ग्रह किस राशी में शुभ और अशुभ होता है - :

1. **सूर्य-** सूर्य सिंह राशि का स्वामी है मेष राशी में उच्च का माना जाता है । तुला राशी में नीच का होता है।

2. **मंगल-** मेष तथा वृश्चिक राशि का स्वामी है। मकर राशि में उच्च का तथा कर्क राशि में नीच का माना जाता है।

3.**चंद्रमा**यह कर्क राशी का स्वामी है वृष - राशी में शुभ और वृश्चिक राशी में अशुभ का होता है

4. **बुध**- कन्या और मिथुन राशि का स्वामी है, बुध कन्या राशि में उच्च का और मीन राशि में नीच का होता है।

5. **गुरू** धनु और मीन राशि का स्वामी है। -यह कर्क राशि में उच्च का और मकर राशि में नीच का होता है।

6. **शुक्र** वृष और तुला राशी का स्वामी है। मीन राशि में उच्च का और कन्या राशि में नीच का - होताहै।

7. **शनि** कुंभ और मकर में स्वग्रही होता है -। तुला में उच्च का और मेष में नीच का होता है।

8. **राहु** कन्या राशि का स्वामी - मिथुन और वृष में उच्च का होता है। धनु में नीच का कर्क में मूल त्रिकोस्थ माना जाता है।

9. **केतु** धनु और वृश्चिक राशि में उच्च का -होता है, मिथुन राशि में नीच का, सिंह राशि में मूल त्रिकोण का और मीन में स्वक्षेत्री होता है। वृष राशि में ही यह नीच का होता है। जन्म कुंडली का

विश्लेषण अंशों के आधार पर करने पर ही ग्रहों के वास्तविक बलाबल को ज्ञात किया जाता है।
शुभ और अशुभ ग्रह - चंद्रमा, बुध शुक्र और गुरु ,ये क्रम से अधिकाधिक शुभ माने गए है ।अर्थात चंद्रमा से बुध, बुध से शुक्र और शुक्र से गुरु अधिक शुभ है । सूर्य , मंगल, शनि और राहु ये क्रम से अधिकाधिक पापी ग्रह है अर्थात सूर्य से मंगल, मंगल से शनि और शनि से राहु अधिक पापी है ।
ग्रहों के मित्र और शत्रु - सूर्य के चंद्रमा अधिमित्र ,बुध मित्र , गुरु सम ,शुक्र और शनि अधिशत्रु है
चंद्रमा के - बुध अधिमित्र ,शुक्र ,गुरु,शनि मित्र ,सूर्य सम , मंगल शत्रु है ।
मंगल के- शनि मित्र,सूर्य-चंद्रमा गुरु सम,शुक्र और बुध अधि शत्रु है ।
बुध के – सूर्य अधिमित्र, गुरु मित्र,चंद्र शुक्र सम मंगल और शनि शत्रु है ।
गुरु के- मंगल चंद्र अधिमित्र , शनि मित्र , सूर्य सम और शुक्र बुध अधिशत्रु है।
शुक्र के – गुरु मित्र ,सूर्य चंद्र, बुध शनि सम और मंगल अधिशत्रु है।
शनि के- गुरु मित्र , चंद्र मंगल बुध शुक्र सम और सूर्य अधिशत्रु है ।
राहु के- गुरु मित्र सूर्य चंद्र ,बुध , शनि सम ,मंगल शत्रु है ।अगर भाव के अनुसार किसी राशि में अधिशत्रु बैठा है तो वो भाव का फल भी बुरा होगा, मित्र राशि में अच्छा फल और सम राशि में औसत फल मिलता है । वैदिक ज्योतिष के अनुसार हर व्यक्ति की कुंडली के शुभ – अशुभ ग्रह अलग होते हैं और जब मुसीबत आती है तब व्यक्ति अपनी कुंडली लेकर ज्योतिषी के पास पहुंचता हैं, तब भी किसी एक से वह कभी संतुष्ट नहीं होता हैं और कुछ समय बाद फिर किसी अन्य के पास पहुंच जाता हैं क्योकि आजकल की इस मशीनरी दुनिया में हर कोई तेजी से गूगल सर्च की तरह हर बात का समाधान चाहता हैं. यदि परम्परा से पढ़ा हुआ ज्योतिषी द्वारा बातों को वह मानकर नियमित रुप से उसका अनुपालन करें नि:सन्देह उसे लाभ होगा, लेकिन ऐसा होता नहीं है। हर कोई यह सोचता है कि ज्योतिष जादू की छड़ी है और घुमाते ही कुछ चमत्कार हो जाएगा. ऐसा नही है कि जो मंत्र जाप अथवा पूजा पाठ हम करते हैं उसका फल नहीं मिलता है लेकिन व्यक्ति के अपने कर्म भी कुछ होते हैं जिन्हें हर किसी को भुगतना होता है. यदि हम किसी तरह का कोई उपाय अपनी परेशानियों को दूर करने के लिए करते हैं तब उससे हमारी भीतर की शक्ति में वृद्धि होती है और भगवान हमें उन परेशनियों से निकलने का मार्ग दिखाते हैं इसलिए जो भी उपाय किए जाएं उन पर पूरी तरह से निर्भर ना रहकर अपने प्रयास भी करते रहना चाहिए. वैसे भी जो भी उपाय हम करते हैं उनसे परेशानी दूर नहीं होती बल्कि उसे सहन करने की शक्ति हमारे अंदर बढ़ जाती है. जैसे जब हम अधिक मिर्च का खाना खाते हैं तब हम पानी पीते हैं या कोई मीठी वस्तु खाते हैं उसका अर्थ यह नहीं कि मिर्ची ने अपना स्वभाव बदल दिया बल्कि इसका अर्थ यह हुआ कि मीठा खाने से हमारे

भीतर मिर्च के तीखेपन को सहने की शक्ति बढ़ गई है।

नैसर्गिक रूप से कुछ ग्रहों को शुभ और कुछ को अशुभ कहा गया है। लेकिन इनका शुभ या अशुभ फल जन्म समय पर निर्धारित होता है. इसी के आधार पर फल का निर्धारण होता है परंतु साथ ही साथ भिन्न - भिन्न लग्नों के लिए अलग-अलग फल निर्धारित होते हैं।

बोध प्रश्न

1. गच्छतीति ....।

क. नक्षत्र ख. राशि ग. ग्रह घ. कोई नही

2. भारतीय ज्योतिष के अनुसार ग्रहों की संख्या है।

क. 6 ख. 8 ग. 10 घ. 9

3. पाश्चात्य पद्धति के अनुसार ग्रहों की संख्या है।

क. 5 ख. 6 ग. 7 घ. 8

4. सिंह राशि का स्वामी है।

क. मंगल ख. सूर्य ग. बुध घ. शुक्र

5. वृश्चिक राशि का स्वामी है।

क. चन्द्रमा ख. बुध ग. शुक्र घ. मंगल

1.3.1 भिन्न - भिन्न लग्नों में ग्रहों का फल -

मेष लग्न | Aries Ascendant

मेष लग्न में मंगल लग्नेश और अष्टमेश का स्थान पाता है। मेष राशि मंगल की मूल त्रिकोण राशि है, बृहस्पति नवमेश व शनि दशमेश और एकादशेश होते हैं। मेष चर राशि है और चर राशि के लिए एकादशेश भाव बाधक स्थान पाता है। मेष लग्न के लिए शुक्र मारक ग्रह है और चंद्र मिश्रित फल देता है।

वृष लग्न | Taurus Ascendant

वृष लग्न के लिए सूर्य और शनि शुभ फलदायक होते हैं. बृहस्पति अष्टमेश और एकादशेश होने से मारक के समान हो जाते हैं. शुक्र लग्नेश होता है किन्तु षष्टेश होने से शुभ फल देने में असमर्थ होता है. चंद्र तृतीयेश होकर शुभ नहीं देता है. शनि नवमेश व दशमेश होने से योगकारक होते हैं. बुद्ध द्वितीय और पंचमेश होने से कुछ शुभ दायक होता है. मंगल सप्तमेश व द्वादशेश होने से मारक का कार्य करता है.

मिथुन लग्न | Gemini Ascendant

इस लग्न के लिए बृहस्पति दशमेश और सप्तमेश होने से मारक बन जाता है. शनि अष्टमेश व नवमेश होता है. सप्तम स्थान बाधक स्थान बन जाता है. बुध लग्नेश और चतुर्थेश है, चंद्र मारक ग्रह का कार्य करता है.

कर्क लग्न | Cancer Ascendant

इस लग्न के लिए मंगल, बृहस्पति और चंद्रमा शुभ होते हैं. शनि और सूर्य मारक ग्रह हैं. शनि सप्तमेश व अष्टमेश हैं. शुक्र भी यहां शुभता में कमी कर जाता है केन्द्राधिपति दोष के कारण और बाधक भी बन जाता है. गुरू षष्ठेश और नवमेश हैं.

सिंह लग्न | Leo Ascendant

इस लग्न के लिए मंगल, बृहस्पति और सूर्य शुभ ग्रह हैं. शनि शष्ठेश और सप्तमेश होते हैं और चंद्र मारक हैं अशुभ फलदायक होते हैं. किंतु शनि मारक बनते हैं. गुरू और मंगल राजयोग कारक बनते हैं.

कन्या लग्न | Virgo Ascendant

कन्या लग्न के लिए मंगल, बृहस्पति व चंद्रमा अशुभ ग्रह होते हैं, शुक्र और बुध शुभ ग्रहों में आते है. मंगल, शुक्र, चंद्र, गुरू मारक का कार्य करते हैं. बुध और शुक्र योगकारक ग्रह बन जाते हैं.

तुला लग्न | Libra Ascendant

तुला लग्न के लिए गुरू, मंगल और सूर्य अशुभ प्रभाव देने वाले ग्रह बनते हैं. शनि और बुध शुभ ग्रह बनकर अच्छा फल देते हैं. मंगल, बृहस्पति, शुक्र मारक के रूप में सामने आते हैं. शनि, बुध राजयोग कारक हो सकते हैं. शुक्र समभाव रखता है वहीं बृहस्पति पाप ग्रहों के साथ हो तो मारक बन जाता है.

वृश्चिक लग्न | Scorpio Ascendant

बुध, शुक्र और शनि अशुभ ग्रहों का प्रभाव देते हैं. बृहस्पति और चंद्रमा शुभ ग्रहों का फल देते हैं. बुध व अन्य पाप ग्रह जब वह मारक बन जाते हैं. सूर्य और चंद्र राजयोग कारक फल देते हैं. यहां बृहस्पति मारक होते हैं और मंगल समभाव रखते हैं.

धनु लग्न | Sagittarius Ascendant

शुक्र, शनि और बुध अशुभ ग्रहों का काम करते हैं. मंगल और सूर्य शुभता देने वाले ग्रह बनते हैं. शुक्र और शनि मारक ग्रह बन जाते हैं. इसी के साथ सूर्य और बुध, मंगल और ब्रहस्पति, सूर्य और मंगल राजयोग कारक बन जाते हैं. इस लग्न में शनि मारक का काम नहीं करता है और बृहस्पति समभाव रखते हैं.

मकर लग्न | Capricorn Ascendant

बृहस्पति, चंद्र और मंगल मकर लग्न के लिए शुभ नहीं होते हैं, शुक्र और बुध शुभ ग्रह बनते हैं. बृहस्पति और मंगल मारक ग्रह का कार्य करते हैं, शुक्र और बुध राजयोग कारक बनते हैं. इस लग्न के लिए सूर्य सम हैं तथा शनि मारक नहीं हैं.

कुम्भ लग्न | Aquarius Ascendant

कुम्भ लग्न के लिए बृहस्पति, चंद्र और मंगल अशुभ ग्रह होते हैं. शनि और शुक्र शुभ ग्रह होते हैं. बृहस्पति, सूर्य और मंगल मारक ग्रह का काम करते हैं. शुक्र, मंगल और शुक्र राजयोग कारक बनते हैं. इस लग्न के लिए बुध पंचमेश होने से सम होता है.

मीन लग्न | Pisces Ascendant

शनि, शुक्र, बुध और सूर्य अशुभ ग्रह का कार्य करते हैं. चंद्र और मंगल शुभ ग्रह बनते हैं. बुध और शुक्र तथा शनि मारक ग्रहों का कार्य करते हैं. मंगल और बृहस्पति तथा मंगल और चंद्रमा राजयोगकारक बनते है।

ग्रहों का स्वरूप –

प्रत्येक ग्रह का ऋषियों ने फलितोपयोगी स्वरूप बताया है अथवा उन ग्रहों की मानव रूप में कल्पना करके मनुष्य के व्यक्तित्व निर्धारण में सहायक बातें इस रूप से बताई हैं। लग्न में जो नवांश हो, उस नवांश के स्वामी ग्रह या बलवान ग्रह के समान मनुष्य के शरीर का आकार होता है, यह नियम है। मनुष्य के स्वरूप निर्णय हेतु ये बातें बड़ी सहायक होती है –

सूर्य- ऑखों के सफेद भाग में थोड़ा मटमैलापन, चौकोर शरीर, अधिक पित्त वाला, कम बालों वाला है।

चन्द्रमा – मझोला, गोल – मटोल, थुल – थुल शरीर, अति वायु व कफ विकार, बुद्धिमान, मृदुभाषी, शुभ दृष्टि वाला है।

मंगल – क्रूर दृष्टि वाला, जवान दिखने वाला, पित्त प्रकृति, चंचलता व जल्दबाजी युक्त स्वभाव वाला व पतली कमर वाला है।

बुध – गूढ़ व अनेकार्थक वाक्य बोलने वाला, हँसमुख व परिहास कुशल, पित्त- कफ – वात, त्रिदोष मिश्रित प्रकृति है।

गुरू – बड़े शरीर वाला, भूरे बाल व ऑखों वाला, अति बुद्धिमान एवं कफ प्रधान होता है।

शुक्र – शुक्र से व्यक्ति सुन्दर व दर्शनीय शरीरवाला, सुखी, विलासी, सुन्दर ऑखों वाला, कफ – वायु प्रधान तथा काले घुंघराले बालों वाला होता है।

शनि – अकार्यकुशल, गुन्दुमी ऑखे, पतला शरीर, लम्बा कद, उपरी धड़ पतला, मोटे भद्दे दॉत, कड़े रोम व बाल, वात प्रकृति वाला है। इसके अतिरिक्त शनि स्नायु मण्डल अर्थात् स्नायुओं का सूर्य हड्डी का, चन्द्रमा खून का, बुध त्वचा का, शुक्र वीर्य का, गुरू मेद का व मंगल मज्जा का प्रतिनिधित्व करता है।

ग्रहों के प्रदेश – भारतवर्ष में श्रीलंका से आन्ध्रप्रदेश में कृष्णा नदी तक मंगल का, कृष्णा से गोदावरी तक शुक्र का, गोदावरी से गंगा तक बुध का, गंगा से विन्ध्याचल तक वृहस्पति का, विन्ध्य से हिमालय तक शनि का प्रदेश है। जब कोई ग्रह अत्यधिक पापयुक्त, वक्री, पीड़ित होगा तो अपने स्वभावानुसार अपने प्रदेश के लिये विशेषतया अशुभ होगा।

ग्रहों की अवस्था – बुध कुमार, मंगल युवक, चन्द्र व शुक्र प्रौढ़, सूर्य, गुरू, राहु व शनि वृद्ध ग्रह हैं। बुध कुमार, मंगल बालक, सूर्य 50 वर्ष, चन्द्रमा 70 वर्ष, गुरू 30 वर्ष राहु केतु व शनि 100 वर्ष शुक्र 16 वर्ष का है । लेकिन इसमें पहला मत अधिक प्रचलित है । इसी कारण कुमार ग्रह बुध स्वभावानुसार चंचलतायुक्त है, मंगल युवावस्थानुकूल शीघ्र व तीक्ष्ण फल देता है। चन्द्रमा व शुक्र स्थिर व सुविचारित ढंग से फल देते है । वृद्ध ग्रह अपनी दशा भुक्ति देर से फल देते है । **भावेशानुसार ग्रहों का शुभाशुभत्व** – 5,9 भावों के स्वामी सभी ग्रह शुभ है। 4,7,10 भावों के अधिपति यदि पाप ग्रह हों तो अपना अशुभ फल नहीं देते, यदि शुभ ग्रह हों तो अपना शुभ फल नहीं देते है। अर्थात् दोनों प्रकार के ग्रह अपने फल के प्रति उदासीन हो जाते है। लग्नेश सदैव शुभ होता है। यदि लग्नेश साथ ही अष्टमेश भी हो तो भी वह शुभ ही रहता है। 3,6,11 भावेश सभी ग्रह प्राय: अशुभ होते है, लेकिन शुभ ग्रह होने पर सामान्य अशुभ होते है । अष्टमेश सर्वाधिक अशुभ है, लेकिन सूर्य व चन्द्रमा अष्टमेश हों तो विशेष अशुभ नहीं होते हे। अर्थात् साधारण अशुभ होते है। 2,7 भावों के स्वामी मारक कहलाते है। यदि इनके स्वामी गुरू व शुक्र हो तथा अपने इन्हीं स्थानों में स्थित हो तो परम मारक हो जाते है। इसी प्रकार मारकेश होकर बुध व बली चन्द्र भी क्रमश: 2,7 में स्थित हो तो गुरू शुक्र की अपेक्षा कम मारक होता है।

वृहस्पति का प्रभाव –

नवग्रहों में बृहस्पति को गुरु की उपाधि दी गई है। मानव जीवन पर बृहस्पति का महत्वपूर्ण प्रभाव है। यह हर तरह की आपदा-विपदाओं से धरती और मानव की रक्षा करने वाला ग्रह है। बृहस्पति, धनु और मीन राशि का स्वामी है यह कर्क राशी में अपना शुभ प्रभाव और मकर राशी में अपना अशुभ प्रभाव देते है ,गुरु एक नैसर्गिक शुभ ग्रह है अगर गुरु केंद्र या त्रिकोण में हो तो कुंडली में अनेक दोषों को दूर कर उसे शुभ भी बना देते है ,जिन लोगों की कुंडली में गुरु का प्रभाव अधिक होता है वे अध्यापक, वकील, जज, पंडित, प्रकांड विद्वान् या ज्योतिषाचार्य हो सकते हैं। सोने का काम करने वाले सुनार, किताबों की दुकान, आयुर्वेदिक औषधालय, पुस्तकालय, प्रिंटिंग मशीन आदि पर गुरु का अधिकार होता है । शैक्षणिक योग्यता, धार्मिक चिंतन, आध्यात्मिक ऊर्जा, नेतृत्व शक्ति, राजनैतिक योग्यता, संतति, वंशवृद्धि, विरासत, परंपरा, आचार व्यवहार, सभ्यता, पद-प्रतिष्ठा, पैरोहित्य, ज्योतिष तंत्र-मंत्र एवं तप तस्या में सिद्धि का पता चलता है, धर्म स्थान में कार्यरत प्रमुख व्यक्ति इसी से संचालित होते हैं। सभी तीर्थस्थल इसी ग्रह के अंतर्गत आते हैं। पूर्ण रूप से ब्राह्मण धर्म का पालन करने वाले पंडित, न्यायपालिका के अंतर्गत आने वाले सर्वोच्च पद यानी न्यायाधीश, सरकारी वकील, साधू संतों में प्रमुख, कागज़ का व्यापार करने वाले व्यापारी गुरु द्वारा ही संचालित होते हैं , गुरु से प्रभावित व्यक्ति हृष्ट पुष्ट या थोड़े मोटे हो सकते हैं। इनका शरीर विशाल होता है। ये झूठ आसानी से नहीं बोल सकते अपितु बात को घुमा फिर कर बोलते हैं। इनका क्रोध पर पूर्ण नियंत्रण होता है। यह लोग तामसिक प्रवृत्ति के नहीं होते। इनका चरित्र तथा आचरण पवित्र तथा सहज होया है। ये झूठी प्रशंसा, दिखावे से दूर रहने वाले तथा धार्मिक कार्यों में

रूचि रखने वाले होते हैं। यही कारण है कि गुरु जिस ग्रह को देखेगा वह भी बलवान हो जाएगा इ पाप ग्रह के साथ होने पर वकील जो कि झूठ की राह पर ही चलता है, भ्रष्ट नेता, सोने का स्मगलर, रिश्वतखोर अधिकारी, तांत्रिक बना सकता है। बृहस्पति ग्रह के अशुभ लक्षण : सिर पर चोटी के स्थान से बाल उड़ जाते हैं। गले में व्यक्ति माला पहनने की आदत डाल लेता है। सोना खो जाए या चोरी हो जाए। बिना कारण शिक्षा रुक जाए। व्यक्ति के संबंध में व्यर्थ की अफवाहें उड़ाई जाती हैं। आँखों में तकलीफ होना, मकान और मशीनों की खराबी, अनावश्यक दुश्मन पैदा होना, धोखा होना, साँप के सपने। साँस या फेफड़े की बीमारी, गले में दर्द। 2, 5, 9, 12वें भाव में बृहस्पति के शत्रु ग्रह हों या शत्रु ग्रह उसके साथ हों तो बृहस्पति मंदा होता है।

बृहस्पति ग्रह के शुभ लक्षण: व्यक्ति कभी झूठ नहीं बोलता। उनकी सच्चाई के लिए वह प्रसिद्ध होता है। आँखों में चमक और चेहरे पर तेज होता है। अपने ज्ञान के बल पर दुनिया को झुकाने की ताकत रखने वाले ऐसे व्यक्ति के प्रशंसक और हितैषी बहुत होते हैं। यदि बृहस्पति उसकी उच्च राशि के अलावा 2, 5, 9, 12 में हो तो शुभ।

बृहस्पति ग्रह कि शांति के उपाय : बृहस्पति के उपाय हेतु जिन वस्तुओं का दान करना चाहिए उनमें चीनी, केला, पीला वस्त्र, केशर, नमक, मिठाईयां, हल्दी, पीला फूल और भोजन उत्तम कहा गया है. इस ग्रह की शांति के लए बृहस्पति से सम्बन्धित रत्न का दान करना भी श्रेष्ठ होता है. दान करते समय आपको ध्यान रखना चाहिए कि दिन बृहस्पतिवार हो और सुबह का समय हो। दान किसी ब्राह्मण, गुरू अथवा पुरोहित को देना विशेष फलदायक होता है.बृहस्पतिवार के दिन व्रत रखना चाहिए. कमज़ोर बृहस्पति वाले व्यक्तियों को केला और पीले रंग की मिठाईयां गरीबों, पंक्षियों विशेषकर कौओं को देना चाहिए। ब्राह्मणों एवं गरीबों को दही चावल खिलाना चाहिए। रविवार और बृहस्पतिवार को छोड़कर अन्य सभी दिन पीपल के जड़ को जल से सिंचना चाहिए. गुरू, पुरोहित और शिक्षकों में बृहस्पति का निवास होता है अत: इनकी सेवा से भी बृहस्पति के दुष्प्रभाव में कमी आती है। केला का सेवन और सोने वाले कमड़े में केला रखने से बृहस्पति से पीड़ित व्यक्तियों की कठिनाई बढ़ जाती है अत: इनसे बचना चाहिए।

ऐसे व्यक्ति को अपने माता-पिता, गुरुजन एवं अन्य पूजनीय व्यक्तियों के प्रति आदर भाव रखना चाहिए तथा महत्त्वपूर्ण समयों पर इनका चरण स्पर्श कर आशिर्वाद लेना चाहिए। सफेद चन्दन की लकड़ी को पत्थर पर घिसकर उसमें केसर मिलाकर लेप को माथे पर लगाना चाहिए या टीका लगाना चाहिए। ऐसे व्यक्ति को मन्दिर में या किसी धर्म स्थल पर निःशुल्क सेवा करनी चाहिए।

किसी भी मन्दिर या इबादत घर के सम्मुख से निकलने पर अपना सिर श्रद्धा से झुकाना चाहिए। ऐसे व्यक्ति को परस्त्री / परपुरुष से संबंध नहीं रखने चाहिए।

गुरुवार के दिन मन्दिर में केले के पेड़ के सम्मुख गौघृत का दीपक जलाना चाहिए। गुरुवार के दिन आटे के लोयी में चने की दाल, गुड़ एवं पीसी हल्दी डालकर गाय को खिलानी चाहिए।

गुरु के दुष्प्रभाव निवारण के लिए किए जा रहे टोटकों हेतु गुरुवार का दिन, गुरु के नक्षत्र (पुनर्वसु, विशाखा, पूर्व-भाद्रपद) तथा गुरु की होरा में अधिक शुभ होते हैं। सत्य बोलना। आचरण को शुद्ध रखना। पिता, दादा और गुरु का आदर करने से गुरु अपना शुभ प्रभाव देता है। बृहस्पति के मंत्र का जप करते रहें। मंत्र : ऊँ बृं बृहस्पतये नमः या " ॐ ग्राम ग्रीम ग्रौम सः गुरवे नमः " – जप संख्या ७६०००पीपल के वृक्ष के पास कभी गन्दगी न फैलायें व जब भी कभी किसी मंदिर, धर्म स्थान के सामने से गुजरें तो यदि निष्ठा हो तो निष्ठापूर्वक सिर झुकाकर, हाथ जोड़कर जाना चाहिये

1.5 सारांशः -

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि ग्रह विवेचन ज्योतिष शास्त्र का मेरूदण्ड है। सम्पूर्ण ज्योतिष शास्त्र ग्रहों पर आधारित है। जातक स्कन्ध में ग्रह अलग – अलग परिस्थितियों में अलग – अलग तरीके से जातक को प्रभावित करते है। अत: तत् दृष्ट्या विभिन्न परिप्रेक्ष्य में ग्रहों के शुभाशुभत्व का ज्ञान परमावश्यक है। **गृह्णाति फलदातृत्वेन जीवान् इति ग्रहः।** अर्थात् जो जीवों को फल देने के लिये ग्रहण करें, पकड़े। इस आधार पर भारतीय ज्योतिष शास्त्र में ग्रहों की संख्या **9** है – सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरू, शुक्र, शनि, राहु एवं केतु। शुभाशुभता की दृष्टि से ग्रहों में गुरू, शुक्र, बुध एवं पूर्ण चन्द्रमा को **शुभग्रह** तथा सूर्य, मंगल, शनि, राहु एवं केतु तथा क्षीणचन्द्रमा को **अशुभग्रह** माना गया है। **विशेष रूप में** – सूर्य, मंगल, शनि, राहु व केतु अशुभ या पाप या क्रूर ग्रह कहलाते है। गुरू व शुक्र स्वाभाविक शुभ या सौम्य ग्रह है। बुध यदि अकेला हो या शुभ ग्रहों साथ हो तो शुभ रहेगा, अन्यथा पापयुक्त बुध अशुभ ही माना जाता है। इसी तरह चन्द्रमा यदि पूर्ण हो तो शुभ एवं क्षीण चन्द्रमा पापी माना जाता है। कृष्णपक्ष की दशमी से शुक्ल पक्ष पंचमी पर्यन्त चन्द्रमा पापी होता है। ऐसा सामान्यत: माना जाता है। सूर्य को भी कुछ विद्वान पापी न मानकर केवल क्रूर कहते है। लेकिन हम उच्च स्व मूल त्रिकोणदि राशियो के अतिरिक्त सूर्य को पापी ही समझते है।

1.6 पारिभाषिक शब्दावली

ग्रह – आकाशस्थ पिण्ड जो चलायमान हो, जिसमें गति हो, उसे ग्रह कहते है।

नवमांश – राशि के नवम भाग को नवमांश कहते है। एक नवमांश का मान 3 अंश 20 कला के बराबर होता है।

भाव – जन्म कुण्डली में द्वादश स्थानों में प्रत्येक की भाव संज्ञा होती है। अर्थात् जन्मकुण्डली में द्वादशभाव होते है , जिनसे फलदेशादि कर्त्तव्य किये जाते है।

कारक – कुण्डली में प्रत्येक ग्रह का कारक होता है।

लग्न – उदयक्षितिजवृत्त में क्रान्तिवृत्त पूर्व दिशा में जहाँ स्पर्श होता है, उसे लग्न कहते है।

1.7 बोधप्रश्नों के उत्तर

1. ग
2. घ
3. घ
4. ख
5. घ

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वृहज्जातकम् - चौखम्भा प्रकाशन

वृहत्पराशरहोराशास्त्र - चौखम्भा प्रकाशन

ज्योतिष सर्वस्व – चौखम्भा प्रकाशन

होराशास्त्रम् – चौखम्भा प्रकाशन

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न -

1. ग्रह किसे कहते है। उनके विभिन्न स्वरूपों का विवेचन करें।
2. ग्रह को परिभाषित करते हुये उनके शुभाशुभ फल का विस्तृत व्याख्या करें ।

इकाई – 2 ग्रहबल

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0जे0वाई0 - 201 के द्वितीय खण्ड **भाव विचार** के दूसरी इकाई '**ग्रहबल**' नामक शीर्षक से सम्बन्धित है। ज्योतिष में ग्रहबल विचार एक महत्वपूर्ण विषय है, जिसके अन्तर्गत ग्रहों के भिन्न - भिन्न अवस्थाओं में उनके बलाबल का ज्ञान प्राप्त किया जाता है। ग्रह किस अवस्था में कितना बलवान है, व कमजोर है तत् सम्बन्धित अध्ययन जिस प्रकरण में हम करते है, उसे **ग्रहबल** के नाम से जाना जाता है।

इस इकाई के पूर्व आपने विविध परिप्रेक्ष्य में ग्रहों के शुभाशुभ का ज्ञान प्राप्त कर लिया है, यहाँ आप इस इकाई में ग्रहों के बलाबल का ज्ञान प्राप्त करेंगे।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

1. ग्रह को परिभाषित करने में समर्थ हो सकेंगे।
2. ग्रहों के बलाबल को समझ सकेंगे।
3. ग्रहों के सिद्धान्त के निरूपण करने में समर्थ होंगे।
4. ग्रहों के विभिन स्वरूप का वर्णन करने में समर्थ हो सकेंगे।
5. ग्रहों के सम्बन्ध को निरूपित करने में समर्थ होंगे।

2.3 ग्रहों का संक्षिप्त परिचय

भारतीय ज्योतिष में ग्रहों की संख्या ९ मानी जाती हैं। १सूर्य ., २चन्द्र ., ३मंगल ., ४बुध ., ५ . गुरु, ६. शुक्र, ७शनि ., ८ .९राहु व .केतु। यद्यपि कुल ग्रहों की संख्या ही 9नही हैं, अपितु इससे और भी अधिक ग्रहों की संख्या हो सकती हैं में मूल रूप से तिष शास्त्र ज्योजो हमें ज्ञात नहीं परन्तु , ये **नवग्रह** को स्थान दिया गया हैय में करेगत अध्यान्धित चर्चा ही हम प्रस्तुइससे सम्ब :अत ,ो ा। सामान्य अध्ययन की सुविधा के लिए इन्हें **ग्रह** कहा जाता है। सूर्य और चन्द्र तारा तथा उपग्रह हैं इसी प्रकार राहु और केतु छाया ग्रह हैं। छाया ग्रह अर्थात् सूर्य तथा चन्द्र के पथों (पृथ्वी से देखने पर) के मिलन के दो बिंदु (चौराहेहैं (। मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, व शनि यह **पाँच ग्रह** हैं, लेकिन ग्रंथों में कहीं कहीं इन्हें तारा कहा गया है।-भारतीय फलित ज्योतिष में प्लूटो आदि ग्रहों का स्थान नहीं है। इसमें कारण उनकी दूरी, प्रकाश की कमी या धीमा होना नहीं है, क्योंकि अन्य ग्रहों की तुलना में शनि बहुत दूर और धीमा ग्रह होते हुए भी अनुपात में अधिक प्रभावशाली है। राहुकेतु तो हैं ही नहीं - फिर भी प्रभावित करते हैं। प्लूटो आदि ग्रहों का विचार प्रमाणिक ग्रंथो में नहीं है, इसलिए हम केवल ९ ग्रहों का विचार करते हैं। हालांकि ९ ग्रहों के अतिरिक्त अन्य बहुत से ग्रहपिंडो-उपग्रह-ा का विचार प्रमाणिक ग्रंथों में मिलता है।

2.4 ग्रहों का बलाबल

ग्रह को किसी भाव में स्थिति के कारण ग्रह को आवासीय बल प्राप्त होता है। इस बल को ज्ञात करने के लिये पाँच प्रकार के बल निकाले जाते है -

ग्रहों के उच्च बल - उच्च बल स्थानीय बल का एक भाग है. इस बल में ग्रह को उसके उच्च व नीच बिन्दु के मध्य स्थिति के अनुसार बल प्रदान किया जाता है. एक ग्रह जो अपने उच्च बिन्दु कि तरफ जा रहा होता है उसे आरोही ग्रह कहते है. और यदि ग्रह अपने नीच बिन्दु कि तरफ जा रहा हो तो उसे अवरोही ग्रह कहते है. पूर्ण बली ग्रह को एक रुपा अंक दिये जाते है. तथा इसके विपरीत ग्रह अपने नीच बिन्दु पर शून्य बल प्राप्त करता है।

सप्तवर्गीय बल -

आवासीय बल या स्थानीय बल निकालने के लिये उच्च बल के बाद जिस बल को निकाला जाता है, वह सप्तवर्गीय बल है। इस बल में सात वर्ग चार्टो में ग्रह बल निकाला जाता है। सप्तवर्गीय बल में प्रयोग होने वाले सात वर्ग निम्न है।

जन्म कुण्डली, होरा, द्रेष्कोण, सप्तांश, नवांश, द्वादशाशं, त्रिशांश वर्ग कुण्डली।

इसके अतिरिक्त इन सभी वर्ग कुण्डलियों में ग्रहों को मूलत्रिकोण, स्वराशि, मित्रराशि, सम राशि व शत्रु राशि के आधार पर बल मिलता है. यहां ध्यान देने योग्य बात यह है कि मूल त्रिकोण को केवल जन्म कुण्डली में ही ध्यान में रखा जाता है।

ओज युग्म बल -

जन्म कुण्डली और नवांश कुण्डली में सम या विषम राशि में ग्रह की स्थिति से यह बल प्राप्त होता है। चन्द्र , शुक्र स्त्री ग्रह माने गये है तथा शेष सभी ग्रह पुरुष ग्रह है। स्त्री ग्रहों को सम राशि और नवांश में बल प्राप्त होत है. तथा पुरुष ग्रहों को विषम राशि और नवांश में बल प्राप्त होता है। परन्तु पुरुष ग्रह सम राशि और नवांश में तथा स्त्री ग्रह विषम राशि और नवांश में कोई बल प्राप्त नहीं करते है।

केन्द्रादि बल –

यह बल भी आवासीय बल ज्ञात करने के लिये निकाला जाता है। इस बल में ग्रह केन्द्र भाव अर्थात 1, 4, 7, 10 वें भाव में सबसे अधिक अंक प्राप्त करता है। ग्रह पनफर भाव में उपरोक्त अंकों के आधे अंक प्राप्त करता है. तथा अगर ग्रह अपोक्लिम भाव में हों तो पनफर के आधे अंक प्राप्त करता है।

द्रेष्काण बल -

स्थानीय बल या आवासीय बल निकालने के लिये उपरोक्त चार बल निकालने के बाद द्रेष्काण बल निकाला जाता है। इस बल में ग्रह को स्त्री ग्रह, नपुंसक ग्रह और पुरुष ग्रह के रुप में वर्गीकृत किया जाता है। इसके पश्चात पुरुष ग्रह पहले द्रेष्कोण, स्त्री ग्रह तीसरे द्रेष्कोण व नपुंसक ग्रह दुसरे द्रेष्कोण में अंक प्राप्त करता है। ग्रह बलवान होने से फल के परिणाम उत्तम और श्रेष्ठ प्राप्त होते हैं। कुण्डली में ग्रहों की क्या स्थिति है और वे कितने बलशाली हें इनका आंकलन करने के लिए ज्योतिषशास्त्र में

गणितीय ज्योतिष के **'षड्बल'** का प्रयोग किया जाता है अर्थात षड्बल से ज्ञात किया जाता है कि कौन से ग्रह कितने बलशाली हैं।

ग्रहों की शक्ति को देखने के लिए यह गौर किया जाता है कि ग्रह किस भाव में उपस्थित हैं। ग्रहों की शक्ति का आंकलन करने के लिए यह भी विचार करना होता है कि ग्रह अस्त या नीचस्थ तो नहीं हैं। ग्रह वक्री तो नहीं और ये शत्रु राशि में तो नहीं हैं। ज्योतिषशास्त्रियों का मत है कि ग्रहों की शक्ति को मापने का सबसे बेहतर तरीका है षड्बल। षड्बल के मुख्य रूप से 6 भाग होते है। ग्रहों की शक्ति का आंकलन इन सभी भागों से गणना करके ज्ञात किया जाता है।

षड्बल की सार्थकता) :Significance of Shadbala)

ज्योतिषशास्त्र में **षड्बल** की सार्थकता से इनकार नहीं किया जा सकता है। षड्बल से ही ज्ञात होता है कि कौन से ग्रह किस भाव में रहकर आपके लिए किस प्रकार की स्थिति को जन्म दे रहे है। कौन से ग्रह आपकी कुण्डली में कितने बलवान हैं और आपको उनका कितना सहयोग और समर्थन मिल रहा है।

कुण्डली से फल ज्ञात करने हेतु इस बात की जानकारी भी आवश्यक होती है कि भाव का स्वामी मज़बूत है अथवा नहीं। भाव स्वामी के आधार पर और उनकी स्थित पर ही सही फलादेश निकाला जा सकता है। अगर ये कमज़ोर होंगे तो परिणाम भी उसी के अनुरूप कमज़ोर या अशुभ प्राप्त होगें। षड्बल में यह भी देखा जाता है कि आपके लिए कौन सी दिशा लाभप्रद है। दिशा की स्थिति का ज्ञान हमें षड्बल के 6 भागों में से एक भाग जिसका नाम 'दिग बल' है वह बताता है।

ग्रहों का बल आंकलन)Calculation of planet strength):

अब तक के अध्ययन से हम यह जान गये हैं कि षड्बल मुख्य रूप से 6 बलों का योग है। इन 6 बलों के कई उपभाग भी हैं। ग्रहों का बल ज्ञात करने हेतु गणितीय विधि अपनायी जाती है। बलों को रूप और विरूप में जोड़ा जाता है। एक रूप में 60 विरूप होते हैं। कई स्रोतों में इनका मूल्यांकण 0 विरूप से 60 विरूप के मध्य किया जाता है आप विरूप को अंक भी मान सकते हैं। द्रेष्कोण बल में इनका पूर्ण मूल्य 30 अंक होता है।

षडबल)Components of Shadbala):

ज्योतिषशास्त्र में मूल रूप से 6 प्रकार के षड्बल हैं और इनके कई उप बल भी है -

1. **स्थान बल** - स्थान बल, दिग्बल, कालबल, चेष्टाबल, निसर्ग बल व दृग्बल सब बलों में प्रमुख है। ये षड्बल कहलाते है। इनमें प्रथम चार बहुत विशिष्ट है , इनका विचार सर्वत्र किया जायेगा। जिस ग्रह को चारों में एक भी बल प्राप्त न हो वह ग्रह निष्फल होता है। अपने उच्च, मूलत्रिकोण, स्वगृह, मित्रराशि या इन नवमांशों में स्थित होने पर, शुभ ग्रहों से दृष्ट होने से, विषम राशियों में पुरूष ग्रह व नपुंसक ग्रह एवं सम राशियों में चन्द्र व शुक्र को स्थान बल प्राप्त होता है। ग्रह उच्च, मूल त्रिकोणादि में उत्तरोत्तर कम बली होता है। इस सम विषम राशि बल को ही युग्मायुग्म बल कहते है। यह स्थान बल का ही अवान्तर भेद है। इसी तरह केन्द्र में स्थित ग्रह को पूर्ण बल, पणफरगत को

आधा बल व आपोक्लिमस्थ को चौथाई बल केन्द्रादिबल प्राप्त होता है। सूर्य, गुरू व मंगल अर्थात् पुरूष ग्रह प्रथम द्रेष्काण में स्त्री ग्रह तृतीय द्रेष्काण में व नपुंसक ग्रह मध्य द्रेष्काण में द्रेष्काण बल प्राप्त करते है। स्थान बल में सप्तवर्गैक्य, द्रेष्काण, उच्चादि बल, युग्मायुग्म बल व केन्द्र बल सम्मिलित है। इन पॉचों के मिलने से स्थान बल प्राप्त होता है।

2. **दिग्बल** - पूर्व दिशा अर्थात् लग्न में बुध व वृहस्पति, दशम भाव या दक्षिण दिशा में सूर्य तथा मंगल, सप्तम या पश्चिम दिशा में शनि, उत्तर दिशा में चन्द्रमा व शुक्र को पूर्ण अर्थात् एक अंश बल प्राप्त होता है। अन्यत्र अनुपात से जाना जाता है। जिस स्थान में जो बल बताया जायेगा, उससे सप्तम स्थान में वह बल शुन्य होगा। तदनुसार अनुपात किया जाता है। अर्थात् लग्न में गुरू व बुध को 60 कला बल व सप्तम में 0 कला बल तो दशम में 30 कला इत्यादि।

3. **कालबल** - इस बल में नतोन्नत बल, पक्षबल, अहोरात्र त्रिभाग बल व वर्षेशादि बल का योग होता है। रात्रि में मंगल, चन्द्र व शनि पूर्ण नतोन्नत बली होत है । तथा बुध सर्वदा दिन व रात में पूर्ण बल प्राप्त करता है। उक्त समय से विपरीत समय में सभी ग्रह शून्य बली होंगे। प्रात: व सन्ध्या के समय दोनों प्रकार के ग्रहों को आधा अंश बल मिलता है। अर्थात् मध्यान्ह में दिन बली व मध्य रात्रि में रात्रि बली ग्रह पूर्ण नतोन्नत बल प्राप्त करते है।

पक्ष बल – शुक्ल पक्ष में शुभ ग्रहों को व कृष्ण पक्ष में पापग्रहों को बल मिलता है। स्पष्ट है कि पूर्णिमा के दिन सभी शुभ ग्रह पूर्ण पक्ष बली व अमावस्या को सभी ग्रह पक्ष बली होंगे। दिन रात्रि के समान त्रिभाग करके अहोरात्र त्रिभाग बल जाना जाता है। दिन के प्रथम त्रिभाग में बुध, द्वितीय में सूर्य व तीसरे में शनि को पूरा उक्त बल मिलता है। रात्रि के प्रथम त्रिभाग में चन्द्रमा, मध्य में शुक्र व तृतीय में मंगल को पूर्ण बल मिलता है। लेकिन वृहस्पति सदैव उक्त बली होता है। शुक्र, मंगल, गुरू व सूर्य उत्तरायण में व चन्द्र शनि दक्षिणायन में पूर्ण अयन बल पाते है। बुध स्ववर्ग में हो तो सदा अयन बली होता है। अपने वार में अपनी होरा में, अपने मास में व अपने वर्ष में सभी ग्रहों को वर्षेशादि बल मिलता है। वर्षारम्भ व मासारम्भ के दिन जो वार पड़े, वही ग्रह क्रमश: वर्षेश व मासेश होता है।

4. **चेष्टा बल** - उत्तरायण में सूर्य व चन्द्रमा को, चन्द्रमा के साथ स्थित सभी ग्रहों को, युद्ध में विजयी होकर उत्तर दिशा में स्थित ग्रह को, अधिक किरण वाले ग्रह को चेष्टा बल प्राप्त होता है।

5. **नैसर्गिक बल** - सभी ग्रहों को स्वाभाविक बल या निसर्ग बल भी प्राप्त होता है। शनि, मंगल, बुध, गुरू, शुक्र, चन्द्र, सूर्य ये क्रमश: उत्रोत्तर अधिक निसर्ग बली होते है। यदि अन्य सभी बलों का योग समान हो तो निसर्ग बल निर्णायक होता है। उदाहरणार्थ मंगल व सूर्य के अन्य बलों का योग बिल्कुल बराबर हो तो इनमें से सूर्य को अधिक बली माना जाये, क्योंकि उसे अधिक निसर्ग बल प्राप्त है।

6. **दृग बल** - दृग्बल अर्थात् दृष्टि बल। यह उन्हीं ग्रहों को प्राप्त होता है जिन पर अन्य ग्रहों की दृष्टि हो। पूर्ण दृष्टि से पूर्ण बल, त्रिपाद से त्रिपाद बल इत्यादि प्रकार से समझना चाहिये। इन्हीं छ: का

योग करने से षड्बल प्राप्त होते है।
सूर्य व गुरू $6^0$30 कुल बल प्राप्त होने से पूर्ण बली होते है। चन्द्रमा 6^0 बुध 7^0 शनि व मंगल 5^0 एवं शुक्र 5^0 30 कुल बल प्राप्त होने पर पूर्ण बली हो जाते है।

बोध प्रश्न -

1. षडवर्ग में 'षड्' का अर्थ है –
   क. 5 ख. 6 ग. 7 घ. 8
2. दिग् का अर्थ होता है।
   क. पूरब ख. दिशा ग. पश्चिम घ. कोई नही
3. षडवर्ग में होता है –
   क. गृह, होरा, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश, त्रिशांश
   ख. गृह, राशि, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश, त्रिशांश
   ग. गृह, लग्न, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश, त्रिशांश
   घ. गृह, नक्षत्र, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश, त्रिशांश
4. स्थान बल से तात्पर्य है –
   क. ग्रह जिस स्थान पर हो वहॉं का बल
   ख. ग्रह जिसे देखता हो उस स्थान का बल
   ग. ग्रह जहॉं नहीं देखता हो उस स्थान का बल
   घ. कोई नही
5. उत्तरायण में सूर्य और चन्द्रमा को प्राप्त होता है।
   क. स्थान बल ख. काल बल ग. चेष्टा बल घ. दिक् बल

ग्रहों का बलाबल -

1- **स्थान बल**- जो ग्रह उच्च राशिस्थ, स्वगृही, मित्र राशिस्थ, मूल त्रिकोण में स्वनवांश में या अपने वर्गो में स्थित हो तो वह ग्रह स्थान बली कहलाता है।

2- **काल बल**- शनि राहु चन्द्र मंगल रात्रि बली कहलाते हैं, सूर्य गुरू दिन में शुक्र मध्यान्ह में व बुध का दोनों कालों में बली माना जाता है।

3- **दिक बल**- दिक बल से तात्पर्य ग्रहों का दिशाओं में बली होना माना गया है। लग्न को पूर्व सप्तम को पश्चिम चतुर्थ को उत्तर तथा दशम को दक्षिण दिशा कहा जाता है। बुध व गुरू पूर्व दिशा में चन्द्र और शुक्र उत्तर दिशा में शनि पश्चिम दिशा में सूर्य मंगल दक्षिण दिशा में बली होते है।

4- **नैसर्गिक बल**- शनि से मंगल, मंगल से बुध, बुध से गुरू, गुरू से शुक्र, शुक्र से चन्द्र तथा चन्द्र से सूर्य क्रमानुसार ये सब ग्रह उत्तरोत्तर बली माने जाते है।

5- **चेष्टा बल**- चेष्टाबल को अयन बल भी कहा जाता है। उत्तरायण में सूर्य से चन्द्र तथा दक्षिणायन में क्रूर ग्रह बली माने जाते है।

6- **दृक बल**- शुभ ग्रहों से दृष्ट ग्रह दृक बली कहलाता है।

ज्योतिष में ग्रहों और राशियों को अनेक प्रकार के बल प्राप्त हैं. इन बलों के आधार पर ग्रहों एवं राशियों की स्थिति एवं उसके अच्छे एवं बुरे प्रभावों को जाना जा सकता है. वैदिक ज्योतिष में ग्रहों और राशियों के बलों को निम्न प्रकार से बांटा गया है जो इस प्रकार हैं स्थान बल, दिग्बल, काल बल, नैसर्गिक बल, चेष्टा बल और दृगबल, चर बल, स्थिर बल और दृष्टि बल हैं।

चर बल

ज्योतिष में राशियों के बल को मुख्य आधार माना जाता है। ज्योतिष में तीनों वर्गों की राशियों के लिए कुछ अंक निर्धारित किए गए हैं। जैसे चर राशियाँ को 20 षष्टियाँश अंक मिलेगें, स्थिर राशियों को 40 षष्टियाँश अंक मिलेगें, द्वि-स्वभाव राशियों को 60 षष्टियाँश अंक मिलेगें। इन अंक बल के आधार पर द्वि-स्वभाव राशियों को सबसे अधिक अंक मिलते हैं। इस प्रकार यह राशियाँ सबसे अधिक बली हो जाती हैं।

स्थिर बल

बल में एक अन्य बल स्थिर बल कहलाता है। इस बल के लिए राशियों में बैठे ग्रह को देखा जाता है। जिस राशि में कोई ग्रह स्थित है तो उस राशि को 10 अंक प्राप्त होते हैं। यदि किसी राशि में दो ग्रह बैठे हैं तब उस राशि को 20 अंक प्राप्त हो जाएंगें। जिस राशि में कोई ग्रह नहीं है उस राशि को शून्य अंक प्राप्त होगा. जैस। चर दशा के पाठ दो की उदाहरण कुण्डली में कुम्भ राशि में पाँच ग्रह हैं तो कुम्भ राशि को 50 अंक प्राप्त होगें और जिन राशियों में कोई ग्रह नहीं है उनमें बल कम होता है।

दृगबल

जिन दृष्ट ग्रहों के ऊपर शुभ ग्रहों की दृष्टि पड़ रही हो, तो उक्त ग्रह शुभ ग्रह दृष्टि के बल को पाकर दृगबली होते हैं. ग्रहों के एक अन्य बल दृष्टि बल कहलाता है। दृष्टि बल में ग्रहों की दृष्टियों के आधार पर बल की गणना की जाती है। ग्रहों का बल जानने के लिए जिन मुख्य बलों से विचार किया जाता है उनमें से एक है दृग बल भी है। ग्रह की दृष्टि किस प्रकार से ग्रह विशेष के लिए कैसी ही यह इन्हीं बलों के अधार पर किया जाता है।

ग्रह यदि किसी विशेष ग्रह को पूर्ण या शुभ दृष्टि से देखता है तो यह जातक के लिए शुभ स्थिति कही जाती है इसके विपरीत जब ग्रह की दृष्टि अशुभ होती है तो जातक को कई प्रकार की परेशानी और नुकसान का सामना करना पड़ता है। दृग बल ऐसा बल है जो ग्रहों को एक दूसरे की दृष्टि से प्राप्त होता है. दृष्टिबल का आंकलन करते समय यह देखा जाता है कि गोचर में ग्रह किसी ग्रह विशेष को कितने समय तक किस डिग्री से देख रहा है। दृष्टिबल में ग्रहों का बल डिग्री से देखा जाता है यह

महत्वपूर्ण होता है.

स्थान बल - स्थान बल के अंतर्गत ग्रह स्वग्रह, उच्च ग्रह, मित्र ग्रह और मूल त्रिकोण का होता है। जैसे सूर्य, चंद्रमा सम राशियों जैसे मेष, सिंह, वृष, कर्क राशि में स्थित होने पर स्थान बली होते हैं। इन के साथ बैठकर ग्रह बलवान हो जाते हैं।

काल बल

इस बल के अनुसार व्यक्ति का जन्म दिन के किस समय हुआ है जै से यदि किसी व्यक्ति का जन्म दिन के समय हुआ है तो तब सूर्य, और शुक्र ग्रह कालबली माने जाएंगे और यदि रात्री में हुआ है तो चंद्रमा, शनि और मंगल ग्रहों को काल बली कहा जाएगा। गुरू और बुध सदैव बली माने जाते हैं।

नैसर्गिक बल

नैसर्गिक बल के अन्तर्गत विभिन्न ग्रहों की स्थिति पर तो इस बल के अन्तर्गत क्रमागत रूप से सबसे पहले सूर्य आते हैं फिर चन्द्रमा, शुक्र, बृहस्पति, बुध, मंगल और सबसे अंत में शनि ग्रह आता है। इस बल के अन्तर्गत इन्हीं सात ग्रहों का विचार किया जाता है। नैसर्गिक बल के अनुसार एक ग्रह अन्य ग्रह से अधिक बली होता है उदाहरण स्वरुप शुक्र से चंद्र अधिक बली होगा और चंद्रमा से सूर्य ग्रह अधिक बली माना जाता है।

चेष्टा बल

किसी ग्रह को सूर्य की परिक्रमा करने से जो बल प्राप्त होता है, इस प्रकार जो बल प्राप्त होता है, उसे चेष्टा बल कहते है। मकर से मिथुन राशि तक किसी भी राशि में रहने पर सूर्य तथा चंद्रमा चेष्टा बली होते हैं। इसी प्रकार मंगल, बुध, गुरू, शुक्र, शनि यह ग्रह चंद्रमा के साथ होने पर चेष्टा बली माने जाते हैं।

जैमिनी चर दशा में राशि बल के बाद ग्रहों का बल ज्ञात किया जाता है. ग्रह बल में भी तीन प्रकार के बलों का आंकलन किया जाता है। मूल त्रिकोणादि बल, अंश बल तथा केन्द्रादि बल यह तीन प्रकार के ग्रह बल हैं। तीनों बलों के बारे में विस्तार से बताया जाएगा।

(1) मूल त्रिकोणादि बल

कुण्डली में ग्रह उच्च राशि, मूल त्रिकोण राशि, स्वराशि, सम राशि, शत्रु राशि, नीच राशि आदि में स्थित होते हैं। इन ग्रहों की राशि में स्थिति के अनुसार इन्हें अंक प्रदान किए जाते हैं। इसके लिए एक तालिका के द्वारा आपको समझाने का प्रयास किया जा रहा है।

ग्रह का स्थान	**अंक**
उच्च राशि	**70**
मूल त्रिकोण राशि	**60**
स्वराशि	**50**
मित्र राशि	**40**
सम राशि	**30**

शत्रु राशि	**20**
नीच राशि	**10**

उपरोक्त तालिका के अनुसार यदि कुण्डली में कोई ग्रह उच्च राशि में स्थित है तो उस ग्रह को 70 अंक प्राप्त होगें. मूल त्रिकोण राशि में स्थित होने पर ग्रह को 60 अंक मिलेगें. इस प्रकार सभी ग्रहों को कुण्डली में उनकी स्थिति के अनुसार अंक प्राप्त होगें।

(2) अंश बल

ग्रह बल में दूसरे प्रकार का बल अंश बल है। यह बल जैमिनी कारकों के आधार पर ग्रहों को प्राप्त होता है। इनके अंकों को सारिणि द्वारा समझा जा सकता है।

कारक	**अंक**
आत्मकारक	**70**
अमात्यकारक	**60**
भ्रातृकारक	**50**
मातृकारक	**40**
पुत्रकारक	**30**
ज्ञातिकारक	**20**
दाराकारक	**10**

उपरोक्त सारिणी के अनुसार ग्रहों को उनके कारकों के अनुसार अंक दिए जाएंगें। आत्मकारक को सबसे अधिक अंक दिए गए हैं और दाराकारक को सबसे कम अंक प्रदान किए गए हैं।

(3) केन्द्रादि बल

पराशरी पद्धति के साथ जैमिनी पद्धति में भी केन्द्रों का महत्व माना गया है. कुण्डली में केन्द्रादि बल का निर्धारण आत्मकारक से ग्रहों की स्थिति देखकर किया जाता है।

* आत्मकारक से कोई ग्रह केन्द्र(आत्मकारक से 1,4,7,10 भाव) में स्थित है तब उस ग्रह को 60 अंक मिलेगें।

* आत्मकारक से कोई ग्रह पणफर भाव(आत्मकारक से 2,5,8,11 भाव) में स्थित है तब उस ग्रह को 40 अंक प्राप्त होगें।

* आत्मकारक से कोई ग्रह अपोक्लिम भाव(आत्मकारक से 3,6,9,12 भाव) में स्थित है तब उस ग्रह को 20 अंक प्राप्त होगें।

मूल त्रिकोणादि बल, अंश बल तथा केन्द्रादि बल का कुल योग ज्ञात करेंगे ।

बली ग्रहों की सामान्य पहचान –

सूर्य – मेष व सिंह राशि में, रविवार में अपने उच्च स्व या मित्र ग्रह के नवमांश में, अपनी होरा व द्रेष्काण में उत्तरायण में दशम स्थान में, राशि के आरम्भ में तथा दोपहर के समय सूर्य बलवान होता है।

चन्द्रमा – कर्क या वृष राशि में, राशि के अन्तिम खण्ड में दक्षिणायन सूर्य में, राशि के प्रारम्भ में, शुभ ग्रहों से दृष्ट, सोमवार में, पूर्णिमा तिथि में, उच्च, स्व मित्रादि नवमांश में, स्व होरा व द्रेष्काण में चन्द्रमा बली होता है।

मंगल – मेष, वृश्चिक या मकर राशि में, स्वोच्चादि नवांश या द्रेष्काण में अपने उच्चादि वर्गों में मंगलवार में, रात्रि में, राशि के प्रारम्भ में, दशम भाव में व वक्री होकर कर्क राशि गत मंगल बली होता है।

बुध - सूर्य यदि साथ न हो तो मिथुन, कन्या, धनु राशि में स्वोच्चादि नवांश, द्रेष्काण, या राशि या सात वर्गों में बुधवार में, लग्न में, उत्तरायण में राशि के मध्य भाग में रात और दिन में सदैव बली होता है।

गुरू – कर्क, वृश्चिक, धनु, मीन राशि में वक्री, स्वोच्चादि नवांश या वर्ग में गुरूवार में, शुक्ल पक्ष में, मध्यान्ह व उत्तरायण में सामान्यत: किसी भी राशि में सप्तम रहित केन्द्र में गुरू बलवान होता है।

शुक्र – वृष, तुला, या मीन राशि में, अश्विनी नक्षत्र व मेष राशि में, स्वोच्चादि वर्ग या नवमांश में शुक्रवार में, वक्री, चन्द्रमा के साथ , राशि के मध्य भाग में, सूर्य से आगे, 3,4,6,12 भावों में दिन ढलने पर शुक्र बलवान होता है।

शनि – तुला, मकर या कुम्भ राशि में रात्रि में, सप्तम स्थान में, दक्षिणायन में, वक्री होने पर सभी राशियों में शनिवार में, स्वोच्चादि वर्ग या नवांश में, कृष्ण पक्ष में शनि बली होता है। अष्टम भाव में अकेला शनि आयु:वर्धक होता है।

राहु व केतु – मेष, वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, धनु, कुम्भ व मीन राशि में दशम भाव में, रात में, केतुदय में या संहिता ग्रन्थों में बताये गये केतुत्पात के समय में बलवान होते है।

वक्री ग्रह की फल व्यवस्था - सामान्यत: वक्री होने पर शुभ ग्रह अधिक शुभ व पापग्रह अधिक पाप फल देता है। तथापि वक्री ग्रह यदि नीचगत हो तो वह शुभ फल व उच्चगत हो तो अशुभ फल ही देता है। साधारणत: वक्री ग्रह शुभ हो या पाप, अधिक बली हो जाते है। इसी प्रकार अस्तंगत व वक्री होने पर भी मंगलादि ग्रह मिश्रित फल ही देते है।

2.5 सारांश: -

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि ग्रह को किसी भाव में स्थिति के कारण ग्रह को आवासीय बल प्राप्त होता है। इस बल को ज्ञात करने के लिये पाँच प्रकार के बल निकाले जाते है -

ग्रहों के उच्च बल - उच्च बल स्थानीय बल का एक भाग है. इस बल में ग्रह को उसके उच्च व नीच बिन्दु के मध्य स्थिति के अनुसार बल प्रदान किया जाता है. एक ग्रह जो अपने उच्च बिन्दु कि तरफ जा रहा होता है उसे आरोही ग्रह कहते है. और यदि ग्रह अपने नीच बिन्दु कि तरफ जा रहा हो तो उसे अवरोही ग्रह कहते है. पूर्ण बली ग्रह को एक रुपा अंक दिये जाते है. तथा इसके विपरीत ग्रह अपने नीच बिन्दु पर शून्य बल प्राप्त करता है। आवासीय बल या स्थानीय बल निकालने के लिये उच्च बल के बाद जिस बल को निकाला जाता है, **वह सप्तवर्गीय बल** है। इस बल में सात वर्ग

चार्टों में ग्रह बल निकाला जाता है। **ओज युग्म बल** जन्म कुण्डली और नवांश कुण्डली में सम या विषम राशि में ग्रह की स्थिति से यह बल प्राप्त होता है। **केन्द्रादि बल –** यह बल भी आवासीय बल ज्ञात करने के लिये निकाला जाता है। इस बल में ग्रह केन्द्र भाव अर्थात 1, 4, 7, 10 वें भाव में सबसे अधिक अंक प्राप्त करता है। स्थानीय बल या आवासीय बल निकालने के लिये उपरोक्त चार बल निकालने के बाद **द्रेष्काण बल** निकाला जाता है।

2.6 पारिभाषिक शब्दावली

ग्रह – आकाशस्थ पिण्ड जिसमें गति और प्रकाश हो,उसे ग्रह कहते है।

काल बल – प्रत्येक ग्रहों का काल बल होता है।

चेष्टाबल – किसी ग्रह को सूर्य की परिक्रमा करने से जो बल प्राप्त होता है उसे चेष्टा बल कहते है।

स्थान बल – ग्रह जिस स्थान पर स्थित होता है, उस स्थान सम्बन्धित बल को स्थान बल कहते है।

दिक् बल - ग्रहों की अपनी – अपनी दिशायें होती है, जो ग्रह अपनी दिशा में होगा वह उसका दिक् बल समझा जाता है।

2.7 बोधप्रश्नों के उत्तर

1.ख

2.ख

3.क

4.क

5.ग

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वृहज्जातकम् - मूल लेखक - आचार्यवराहमिहिर

वृहत्पराशरहोराशास्त्र - मूल लेखक – आचार्य पराशर

ज्योतिष सर्वस्व – सुरेश चन्द्र मिश्र

होराशास्त्रम् – आचार्य वराहमिहिर

2.9 सहायक पाठ्यसामग्री

जातक पारिजात

फलदीपिका

लघुजातक

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न -

1. ग्रहबल किसे कहते है। उनके विभिन्न स्वरूपों का विवेचन करें।

2. ग्रहबल को परिभाषित करते हुये उनके शुभाशुभ फल का विस्तृत व्याख्या करें ।

इकाई – 3 भाव बल

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई द्वितीय खण्ड **ग्रहभाव विचार** के तृतीय इकाई **'भावबल'** से सम्बन्धित है। ज्योतिष शास्त्र के अनुसार सभी ग्रहों का भाव बल होता है, होती तथा वह अपनी बलाबल के अनुसार ही शुभाशुभ फल देते है।

ग्रहाणां भावस्य बलं ग्रहभावबलं भवति। जन्मुण्डली में ग्रह जिस भाव में होता है, वहॉं से वह जिस - जिस भाव या स्थान को देखता है, और उसका फल क्या होता है। तत् सम्बन्धित विवरण जिस प्रकरण में हम अध्ययन करते है। उसी प्रकरण को **भावबल** कहते है।

इस इकाई से पूर्व आपने ग्रहों के शुभाशुभ, उनके बलाबल का अध्ययन कर लिया है, यहॉं आप इस इकाई में ग्रहों की भावों सम्बन्धित बलाबल का अध्ययन करेंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

1. भाव को परिभाषित करने में समर्थ हो सकेंगे।
2. ग्रहों के भावबल को समझ सकेंगे।
3. ग्रहों के भावबल सिद्धान्त का निरूपण करने में समर्थ होंगे।
4. ग्रहों का भावबल स्थिति को समझा सकेगें ।
5. भावबल का स्पष्टीकरण करने में समर्थ होंगे।

3.3 भाव परिचय

जैसा कि आपने पूर्व की इकाईयों के अध्ययन के पश्चात् जान लिया है कि भावों की संख्या 12 है। जन्मकुण्डली में 12 भावों के आधार पर ही फलादेश आदि कर्म किया जाता है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि फलादेश कर्म का मुख्य आधार द्वादश भाव ही है। भाव विचार के अन्तर्गत हम भावबल का अध्ययन प्रस्तुत इकाई में करने जा रहे है। ध्यातव्य हो कि भावों में स्थित समस्त ग्रहों के भावबल के आधार पर ही हम उनके बलाबल का बोध करते है।

3.4 भाव बल –

भावों को तीन प्रकार का बल प्राप्त होता है –

1. भावेश का बल
2. भाव का दिग्बल
3. भाव पर ग्रह दृष्टि बल या दृग्बल

भावों का दिग्बल व दृग्बल पूर्वोक्त प्रकार से जैसे ग्रहों का दिग्दृग्बल जाना था उसे जानकर स्वामी के षड्बलैक्य में जोड़ दें तो योगफल भाव का स्पष्ट बल होता है।

भावों का दिग्बल - पूर्व के अध्यायों में आपको यह बताया जा चुका है कि नर, जलचर, चतुष्पद, कीट आदि राशियॉ क्या है। यहॉ पुन: संक्षेप में बताते हैं। नर राशि (धनु का पूर्वार्ध, मिथुन, कन्या, तुला व कुम्भ) लग्न में पूर्ण बली तथा सप्तम भाव में 0 दिग्बली होता है। अत: इन राशियों में पड़ने वाले भाव स्पष्टों को सप्तम भाव स्पष्ट में से घटाएँ।

चतुष्पद राशि (धनु का उत्तरार्ध, मेष, वृष, सिंह, मकर का पूर्वार्ध) दशम भाव में पूर्ण बली व चतुर्थ में 0 बली है। अत: चतुर्थ भाव स्पष्ट में से इनके भाव स्पष्ट को घटाएँ।

कीट राशि वृश्चिक सप्तम में बली है। अत: इसे लग्न स्पष्ट में से घटायें।

शेष जलचर राशियॉ (मकरोत्तरार्ध , कर्क , मीन) चतुर्थ में पूर्ण दिग्बली होती है।

पूर्ववत् अन्तर यदि 6 राशियों से अधिक आए तो 12 में से घटाकर षड्भाल्प कर लें। इसे अंशादि बनाकर 3 से भाग दें तो 'दिग्बल' होता है।

उदाहरणार्थ –

लग्न स्पष्ट 6।14^0।12।30 व सप्तम भाव 0।14।12।30 है तो सप्तम – लग्न = 6।0।0।0 है। इसके अंशादि 180^0 है। इसे 3 से भाग दिया तो 60 कला या 1 अंश लग्न का 'दिग्बल' हुआ। तुला राशि लग्न में थी। अत: पर राशि होने के कारण उसे सप्तम में से घटाया गया है।

भावों का दृग्बल –

भाव दृग्बल के लिये पहले साधित ग्रहों का दृष्टिबल ही उपयोग में लाया जाता है। पूर्वसाधित शुभ ग्रहों की दृष्टि (गुरू , बुध को छोड़कर) का चतुर्थांश जोड़े व पाप ग्रहों की दृष्टि के चतुर्थांश को घटा कर युक्त करें। गुरू व बुध के सम्पूर्ण दृष्टि बल को जोड़ लें। इस प्रकार भावदृग्बल होता है। इस प्रकार भावेश बल, भाव दिग्बल व भाव दृग्बल को जोड़ने पर 'भाव बल स्पष्ट बल' ज्ञात हो जाता है। इस भाव बल व ग्रह बल के आधार पर ही भाव ग्रह का वास्तविक फल निर्णय होता है। यदि एक ही भाव पर दो विपरीत फलप्रद ग्रहों का बल हो तो उनमें से बलवान अर्थात् अधिक बली ग्रह का फल मिलता है ।

सूर्य व मंगल को दशम भाव में, शुक्र व चन्द्र को चतुर्थ में, शनि को सप्तम में, बुध व वृहस्पति को लग्न में पूर्ण अर्थात् १° दिग्बल मिलता है, लेकिन उक्त बल तभी प्राप्त होगा जब ग्रहस्पष्ट व भावस्पष्ट बिल्कुल समान होंगे। ग्रह के अन्यत्र होने पर अनुपात करना चाहिए।

जिस भाव में पूर्ण दिग्बल मिलता है उससे सातवें भाव में ० दिग्बल होता है। इसी आधार पर अनुपात करना चाहिए। एतदर्थ सूर्य व मंगल में से चतुर्थ भाव को , शुक्र व चन्द्रमा में से दशम भाव को घटाएँ। शेष ६ राशि से अधिक हो तो उसे १२ राशि में से घटाकर पहले की तरह षड्भाल्प कर लेना चाहिए। यदि ६ राशि से कम हो तो फिर नहीं घटाया जाएगा।

इस प्रकार षड्भाल्प घटाफल को अंशादि बनाकर ३ से भाग दें तो लब्धि कलादि दिग्बल होता

है। इसे ६० से भाग देकर अंशादि बनाया जा सकता है। यह अंशादि बनाने का नियम सर्वत्र लागू होता है।

इष्ट कष्ट विवेचन –

सभी ग्रहों का इष्ट व कष्ट निकाल कर जन्म कुण्डली में लिखना चाहिए। इसके आधार पर सभी ग्रहों की दशाओं का शुभ या अशुभ फल भली प्रकार से जानाजाता है। अधिक इष्ट वाला ग्रह शुभ होता है। इसके विपरीत अधिक कष्ट वाला ग्रह अशुभ फल देता है।

स्थान बल में उच्चबल, युग्मायुग्म बल, सप्तवर्गैक्य बल, केन्द्रादि बल व द्रेष्काण बल सम्मिलित हैं अर्थात् इन पॉचों का संयुक्त नाम 'स्थान बल' है।

ग्रहों के भावस्थ बलाबल के सामान्य नियम –

बली ग्रह -

१. शुभ ग्रह यदि केन्द्र व त्रिकोण भाव में स्थित हो तो वे बली अर्थात् बलवान ग्रह कहलाते हैं।

२. कोई भी ग्रह ३-११ भाव में बलवान समझे जाते हैं परन्तु पराक्रम व लाभ के स्थान में सौम्य ग्रह की अपेक्षा क्रूर ग्रह अधिक योग्य समझे जाते हैं। कारण कि वे इन दो स्थानों के फल दिलाने के लिये अधिक बलवान समझे जाते है।

३. धनस्थान में शुभ ग्रहों का रहना अधिक लाभदायक समझा जाता है क्योंकि वे वहॉ बलवान समझे जाते हैं।

मध्यम बली

पंचम व नवम भाव में त्रिकोण यदि पापग्रह स्थित हों तो 'मध्यम बली' कहलाते हैं।

निर्बल –

१. शुक्र के अतिरिक्त कोई ग्रह यदि ६,८,१२ भाव में स्थित हों तो उन्हें निर्बल कहते हैं।

२. कोई भी ग्रह यदि रवि या शत्रु ग्रह से युक्त हों तो वे निर्बली समझे जाते हैं।

इसके अतिरिक्त -

१. किसी भी भाव का स्वामी ग्रह अपने भाव से यदि १,४,५,७,९,१० भाव में स्थित हों तो वे उस भाव के शुभ फल देंगे।
२. गुरू ग्रह का किसी भाव में स्थित होने से उस भाव का फल विशेष अशुभ नहीं माना जाता किन्तु जिस भाव पर उसकी ५,७,९ पूर्ण दृष्टि हो उस भाव का फल अधिक शुभ मिलना निश्चित है क्योंकि उसके शुभ दृष्टि में विशेष शक्ति है यह सर्वविदित है।
३. शनि जिस स्थान में होता है उस स्थान को वह सुरक्षित रखता है, परन्तु उसकी अशुभ दृष्टि

के कारण जिस स्थान पर उसकी ३,७,१० पूर्ण दृष्टि पड़ती है उस स्थान का फल वह नाश करता है अर्थात् गुरू और शनि यह दोनों ग्रहों के शुभ व अशुभ दृष्टि को फलादेश के समय विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिये।

४. यदि किसी भी भाव में शुभ ग्रह यदि पापग्रह या शत्रु ग्रह से युक्त हो अथवा दृष्ट हो तो वे अशुभ फलदायी माने जाते हैं परन्तु अशुभ ग्रह यदि शुभ ग्रह से युक्त व दृष्ट हो तो वे शुभ फलदायी समझे जाते हैं चाहे वे शुभ या अशुभ ग्रह क्यों न हों।
५. कोई भी ग्रह यदि अपने राशि व भाव में स्थित हो तो उनके शुभाशुभ स्थिति के अनुसार उस भाव का और उनके शुभाशुभ दृष्टिफल का उॅचा मिलना स्वाभाविक है।
६. ग्रह यदि परस्पर के राशि और भाव में स्थित हों तो उस भाव का फल पूर्ण रूप से मिलना निश्चित है।
७. किसी भी भाव में ग्रह न हो या उनकी दृष्टि न हो तो उस भाव का फल उस भाव में जो राशि स्थित हो उस राशि के गुण, धर्म, स्वभाव के अनुसार मिलना निश्चित है।
८. राशि के फल की अपेक्षा भाव और ग्रहों के दृष्टि का फल अधिक बलवान माना जाता है।

ग्रहों के भावस्थ बल –

१. प्रथम स्थान में शनि बलवान और रवि,चन्द्र, बुध, गुरू, शुक्र, हर्षित
२. द्वितीय स्थान में गुरू बलवान और रवि, मंगल, हीनबल वाले।
३. तृतीय स्थान में मंगल बलवान और चन्द्र हर्षित
४. चतुर्थ स्थान में सूर्य बलवान और चन्द्र हर्षित
५. पंचम स्थान में शुक्र बलवान और मंगल, शनि हीन बल वाले।
६. षष्ठ स्थान में बुध बलवान और मंगल हर्षित।
७. सप्तम स्थान में चन्द्र बलवान और शुक्र हर्षित व मंगल, शनि हीन बल वाले।
८. अष्टम स्थान में शनि बलवान होता है।
९. मंगल व गुरू नवम स्थान में बलवान होता है और सूर्य हर्षित
१०. दशम स्थान में मंगल बलवान और शुक्र, रवि हर्षित
११. एकादश स्थान में सूर्य बलवान और गुरू हर्षित
१२. द्वादश स्थान में शुक्र बलवान और शनि हर्षित

बलवान, हर्षित और हीन बलीग्रह का फल अत्यन्त शुभ, मध्यम बली और अशुभ मिलेगा यह ध्यान रखना चाहिये। साधारणत: प्रथम भाव में बुध हो तो यश व बल की वृद्धि करता है। द्वितीय

भाव में गुरू, सम्पत्तिदायक होता है। तृतीय भाव में शुक्र, शुभ फलदायक होता है । चतुर्थ भाव में चन्द्र बलवान व शुक्र शुभ फलदायक होता है। पंचमभाव में गुरू सम्पत्तिदायक होता है । षष्ठ भाव में शुक्र शुभफलदायक होता है। सप्तम भाव में शनि बलवान होता है। अष्टम भाव में पापग्रह बलवान होता है। नवम भाव में गुरू व शुक्र बलवान होता है। दशम भाव में रवि बलवान होता है। एकादश भाव में मंगल सुखदायक, गुरू सम्पत्तिदायक व राहु बलदायक और द्वादश भाव में शुक्र बलवान होता है। तथापि द्वितीय भाव में मंगल, चतुर्थ भाव में बुध, पंचम में गुरू, षष्ठ में शुक्र व सप्तम में शनि विकल ग्रह कहलाते हैं। फलोदश करते समय इनका ध्यान रखना चाहिये। कुण्डली के चतुर्थ भाव में बुध, पंचम भाव में गुरू और षष्ठ भाव में शुक्र हो तो मनुष्य को सुख की प्राप्ति नि:सन्देह होगी परन्तु अष्टम भाव का शनि दु:खदायक कहलाता है।

बोध प्रश्न –

१. जन्मकुण्डली में भावों की संख्या होती है –
   क. १० ख. १२ ग. १४ घ. १६
२. भावबल कितने प्रकार का होता है –
   क. ३ ख. ४ ग. ५ घ. ६
३. निम्न में कीट राशि है –
   क. तुला ख. मकर ग. वृश्चिक घ. कुम्भ
४. शुभ ग्रह यदि केन्द्र व त्रिकोण स्थानों में हो तो, होता है –
   क. अशुभ ख. निर्बल ग. बलवान घ. कोई नहीं
५. त्रिकोण स्थान होता है –
   क. १,४,७,१० ख. ५,९ ग. ६,८,१२ घ. २,५,८,११

3.5 सारांशः -

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि भावों की संख्या 12 है। जन्मकुण्डली में 12 भावों के आधार पर ही फलादेश आदि कर्म किया जाता है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि फलादेश कर्म का मुख्य आधार द्वादश भाव ही है। भाव विचार के अन्तर्गत हम भावबल का अध्ययन प्रस्तुत इकाई में करने जा रहे है। ध्यातव्य हो कि भावों में स्थित समस्त ग्रहों के भावबल के आधार पर ही हम उनके बलाबल का बोध करते है। भावों को तीन प्रकार का बल प्राप्त होता है

भावेश का बल, भाव का दिग्बल तथा भाव पर ग्रह दृष्टि बल या दृग्बल। भावों का दिग्बल व दृग्बल पूर्वोक्त प्रकार से जैसे ग्रहों का दिग्दृग्बल जाना था उसे जानकर स्वामी के षड्बलैक्य में जोड़ दें तो योगफल भाव का स्पष्ट बल होता है।

3.6 पारिभाषिक शब्दावली

फलादेश – कुण्डली के फल कहने की क्रिया

भावबल – भावों का बल

पूर्वोक्त – पूर्व में कहे गये

दिग्बल – ग्रहों की अपनी – अपनी दिशायें होती है, जो ग्रह अपनी दिशा में होगा वह उसका दिक् बल समझा जाता है।

षड्बल - ग्रहों के छः प्रकार के बल।

चतुष्पद – चार पैरों वाला

जलचर – जल में विचरने वाला

पूर्वसाधित - पहले से साधित किया हुआ

चतुर्थांश - चौथा अंश

अन्यत्र – कहीं और

एतदर्थ - इसीलिये

सौम्य - शुभ

भावस्थ - भाव में स्थित

3.7 बोधप्रश्नों के उत्तर

1. ख

2. क

3. ग

4. ग

5. ख

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वृहज्जातकम् - मूल लेखक - आचार्यवराहमिहिर

वृहत्पराशरहोराशास्त्र - मूल लेखक – आचार्य पराशर

ज्योतिष सर्वस्व – सुरेश चन्द्र मिश्र

होराशास्त्रम् – आचार्य वराहमिहिर

3.9 सहायक पाठ्यसामग्री

जातक पारिजात

फलदीपिका

लघुजातक

3.10 निबन्धात्मक प्रश्न -

1. ग्रहबल किसे कहते है। उनके विभिन्न स्वरूपों का विवेचन करें।

2. ग्रहबल को परिभाषित करते हुये उनके शुभाशुभ फल का विस्तृत व्याख्या करें ।

इकाई – 4 दृष्टि विचार

इकाई संरचना

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई द्वितीय खण्ड **ग्रहभाव विचार** के चतुर्थ इकाई **'दृष्टि विचार'** से सम्बन्धित है। ज्योतिष शास्त्र के अनुसार सभी ग्रहों की अपनी – अपनी दृष्टि होती है, तथा वह अपनी दृष्टि के अनुसार ही शुभाशुभ फल देते है।

ग्रहाणां दृष्टि: ग्रहदृष्टि भवति। जन्मुण्डली में ग्रह जिस स्थान पर होता है, वहॉ से वह जिस - जिस भाव या स्थान को देखता है, और उसका फल क्या होता है। तत् सम्बन्धित विवरण जिस प्रकरण में हम अध्ययन करते है। उसी प्रकरण को **ग्रहदृष्टि** कहते है।

इस इकाई से पूर्व आपने ग्रहों के शुभाशुभ, उनके बलाबल का अध्ययन कर लिया है, यहॉ आप इस इकाई में ग्रहों की विभिन्न दृष्टियों का अध्ययन करेंगे।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

1. ग्रह को परिभाषित करने में समर्थ हो सकेंगे।
2. ग्रहों के दृष्टि को समझ सकेंगे।
3. ग्रहों के सिद्धान्त के निरूपण करने में समर्थ होंगे।
4. ग्रहों का स्वरूप वर्णन करने में समर्थ होंगे।
5. ग्रहों के सम्बन्ध को निरूपित करने में समर्थ होंगे

4.3 ग्रहदृष्टि विचार

ग्रहों की दृष्टि –

समस्त ग्रह जिस राशि में स्थित हो, उससे सातवें राशि को एवं उसमें स्थित ग्रहों को पूर्ण दृष्टि से देखते है। चतुर्थ व अष्टम भाव को त्रिपाद अर्थात् 75 % दृष्टि से देखते है तथा 5 व 9 भावों पर 50 % या द्विपाद दृष्टि एवं 3 व 10 भावों पर एक पाद या 25 % दृष्टि डालते है।

इसके अतिरिक्त मंगल 4 व 8 भावों को, गुरू 5 एवं 9 भावों को और शनि 3 व 10 भावों को भी पूर्ण दृष्टि से ही देखते है। आशय यह है कि मंगल की त्रिपाद दृष्टि एवं शनि की एकपाद दृष्टि न होकर उन स्थानों पर भी पूर्ण दृष्टि होती है।

ये दृष्टियॉ गर्ग, पराशर, यवनाचार्य, वराहादि आचार्यों द्वारा स्वीकृत है। इसी आधार पर फल भी मिलता है। पूर्ण दृष्टि से पूर्ण फल एवं अन्य दृष्टियों से क्रमश: एक – एक चौथाई कम करके फल मिलता है। जिस स्थान पर ग्रह की पूर्ण दृष्टि हो, उस स्थान पर भी ग्रह का पूर्ण प्रभुत्व होता है राजयोगादि विचार में पूर्ण दृष्टि ही देखी जाती है। अन्य दृष्टियॉ आनुपातिक रूप से फल देती है।

कहा जाता है कि विपरीत लिंग के प्रति स्वाभाविक आकर्षण के कारण सभी ग्रह सप्तम स्त्री स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखते है। राजा, रानी व राजकुमार सूर्य, चन्द्र, बुध भोगासक्त रहते है, अत: इनकी पूर्ण दृष्टि सातवें भाव पर ही रहती है। सेनापति अपनी स्त्री के अतिरिक्त सुख व जीवन रक्षा का भी उत्तरदायित्व रखता है, इस कारण 4 व 8 भावों पर भी उसकी पूर्ण दृष्टि रहती है। इसी तरह गुरू की विद्या व धर्म 5,9 पर व शनि दास की पराक्रम व राज्य 3 व 10 भावों पर भी पूर्ण दृष्टि रहती है।

जन्मकुंडली में विभिन्न भावों में बैठे ग्रह विशेष भावों पर दृष्टि रखता हो तो उनका विशेष प्रभाव पड़ता है। सर्वप्रथम सूर्य की दृष्टि का किस भाव में क्या फल मिलता है उस पर विचार किया जाये।

सूर्य **यदि लग्न को** पूर्ण दृष्टि से देखता हो तो जातक रजोगुणी, नेत्ररोगी, सामान्य धनी, पितृभक्त, एवं राजमान्य होता है।

दूसरे भाव को पूर्ण दृष्टि से देखता हो तो धन तथा कुटुंब से सामान्य सुखी, संचित धननाशक एवं परिश्रम से थोड़े धन का लाभ करने वाला होता है।

तीसरे भाव को देखता हो तो कुलीन, राजमान्य, बड़े भाई के सुख स वंचित, उद्यमी एवं नेता होता है।

चौथे भाव को देखता हो तो 22 वर्ष पर्यंत सुखहानि लेकिन वाहन सुख प्राप्ति एवं सामान्यतः मातृसुखी होता है।

पाँचवें भाव को पूर्ण दृष्टि से देखता हो तो प्रथम संताननाशक, पुत्र के लिए चिंतित, 21 वर्ष कीआयु में संतान प्राप्त करने वाला एवं विद्वान होता है।

छठे भाव को देखता हो तो जीवनभर ऋणी, 22 वर्ष की आयु में स्त्री के लिए कष्टकारक होता है।

सातवें भाव में सूर्य की दृष्टि व्यापारी बनाती है, ऐसा जातक जीवन के अंतिम दिनों में सुखी होता है।

आठवें भाव को देखता हो तो रोगी, व्यभिचारी, पाखंडी एवं निंदित कार्य करने वाला होता है।

नौवें भाव को देखता हो तो धर्मभीरू, बड़े भाई और साले के सुख से वंचित होता है।

दसवें भाव को देखता हो तो राजमान्य, धनी, मातृनाशक तथा उच्च राशि का सूर्य हो तो माता, वाहन और धन का पूर्ण सुख प्राप्त करने वाला होता है।

ग्यारहवें भाव को देखता हो तो धन लाभ करने वाला, प्रसिद्ध व्यापारी, बुद्धिमान, कुलीन एवं धर्मात्मा होता है।

बारहवें भाव को देखता हो तो प्रवासी, शुभ कार्यों में व्यय करने वाला, मामा को कष्टकारक एवं वाहन का शौकीन होता है।

ग्रहों के दृष्टि फल – प्रत्येक ग्रह जन्मकुण्डली में जिस स्थान में स्थित हों उस स्थान से सप्तम स्थान पर उनकी पूर्ण दृष्टि पड़ती है और उनके शुभाशुभ स्थिति अनुसार उसका शुभ या अशुभ फल मिलना निश्चित है। किन्तु मंगल, गुरू, व शनि की पूर्ण दृष्टि सप्तम स्थान के अतिरिक्त नीचे लिखे हुये स्थानों पर भी पड़ती है। यह अवश्य ध्यान में रखना चाहिये। जैसे –

1. मंगल की पूर्ण दृष्टि अपने स्थान से 4,7,8 स्थान पर पड़ती है।

2. गुरू की पूर्ण दृष्टि अपने स्थान से 5,7,9 स्थान पर पड़ती है।
3. शनि की पूर्ण दृष्टि अपने स्थान से 3,7,10 स्थान पर पड़ती है।

इसके अतिरिक्त् प्रत्येक ग्रह जिस स्थान में स्थित हो उस स्थान से तीसरे और दसवें स्थान पर उनकी ¼ दृष्टि पड़ती है।

4. ग्रह की द्विपाद दृष्टि अपने स्थान से 5 और 9 स्थान पर पड़ती है।
5. ग्रह की त्रिपाद दृष्टि अपने स्थान से 4 और 8 स्थान पर पड़ती है। ग्रहों के दृष्टि का फल ग्रहों के शुभाशुभ स्थिति के अनुसार मिलता है यह ध्यान में रखने योग्य है। शनि की एक पाद दृष्टि, गुरू की द्विपाद दृष्टि और मंगल की त्रिपाद दृष्टि, ये पूर्ण दृष्टि समान फलदायक है।

ग्रहों की दृष्टि का कारण –

1. सूर्य व चन्द्र यह दोनों राजा ग्रह कहलाते है। बुध राजकुमार और शुक्र राज्य मन्त्री कहलाते है। ये कामासक्त होते है। अत: इनकी दृष्टि सदैव सप्तम स्थान पर रहती है।
2. मंगल सेनापति ग्रह कहलाता है। अत: राजा को सुख देने के हेतु चतुर्थ स्थान पर, स्त्री को सुख देने हेतु सप्तम स्थान पर और मृत्यु के भय से बचाने के हेतु अष्टम मृत्यु स्थान पर सदैव दृष्टि रखना यह सेनापति का कर्त्तव्य है। इसी हेतु इस ग्रह की दृष्टि चतुर्थ, सप्तम और अष्टम स्थान पर रहती है।
3. गुरू विद्या, संसार सुख, व धर्म का दाता ग्रह कहलाता है अत: विद्या देना, सांसारिक सुख देना व धर्म की रक्षा करना गुरू का परम कर्त्तव्य है। अत: इस ग्रह की दृष्टि पंचम, सप्तम और नवम स्थान अर्थात् क्रमश: विद्या, सांसारिक व धर्मस्थान पर सदैव रहती है।
4. शनि – नौकर सेवक ग्रह कहलाता है। अत: इस ग्रह की दृष्टि सदा तीसरे पराक्रम, सप्तम स्त्री, सांसारिक सुख और दशम राजसुख की रक्षा करना यह सेवक का मुख्य कर्त्तव्य है। अत: इस ग्रह की दृष्टि उपर लिखे हुये तीनों स्थान पर सदैव रहना स्वाभाविक है।
5. राहु और केतु ग्रह शनि के मित्र कहलाते है। अत: इन दोनों ग्रहों की दृष्टि मित्र के स्थान पर रहना स्वाभाविक है। इसके अतिरिक्त इन ग्रहों की 5,7 भाव पर पूर्ण स्वगृह पर त्रिपाद, 2 व 10 भाव पर द्विपाद, 3,6 भाव पर भी एक पाद दृष्टि रहा करती है।

ग्रहों के नैसर्गिक शत्रु मित्र गृह -

कोई भी ग्रह दूसरे ग्रह से जन्मकुण्डली में या प्रश्नकुण्डली में 2,3,410,11,12 भाव में स्थित हो तो वह उस ग्रह का तात्कालिक मित्र और 1,5,6,7,8,9 भाव में स्थित हो तो तात्कालिक शत्रु कहलाता है। इस नियम के अनुसार यदि वे जन्मकुण्डली या प्रश्नकुण्डली में नैसर्गिक या तात्कालिक रीति से परस्पर मित्र हो तो वे अधिमित्र कहलाते है और उनका श्रेष्ठ फल मिलता है, परन्तु यदि वे शत्रु हों तो अधिशत्रु कहलाते है और उसका अशुभ फल मिलना निश्चित है।

ग्रहों का शरीर अंग से सम्बन्ध अधोलिखित रूप से विचार करना चाहिये –

रवि - सिर से मुख भाग तक का स्वामी कहलाता है।

चन्द्र – गले से हृदय '' '' '' ।
मंगल – पेट से पीठ '' '' '' ।
बुध - हाथ और पॉव '' '' '' ।
गुरू - कमर से जॉघ '' '' '' ।
शुक्र - शिश्न से वृषण '' '' '' ।
शनि – घुटने से पेंडुली '' '' '' ।

इन ग्रहों के शुभाशुभ स्थिति के अनुसार प्रत्येक मनुष्य के नियोजित अंग पर उनका शुभाशुभ परिणाम मिलेगा परन्तु इसका विचार अन्य शुभ, अशुभ ग्रहों की युति, दृष्टि, उच्च या नीच राशि और अंश पर करना आवश्यक है।

ग्रहों के अवस्था और फल –

ग्रहों के अवस्थायें –

1. दीप्त 2. स्वस्थ 3. मुदित 4. शान्त 5. शक्त 6. पीड़ित 7. दीन 8. खल 9. विकल 10. भीत। ऐसे ग्रहों के दस अवस्था होते है।

1. ग्रह अपने उच्च या मूल त्रिकोण का हो तो दीप्त।
2. स्वगृह का हो तो स्वस्थ।
3. मित्र ग्रह में हो तो मुदित।
4. शुभ ग्रह के वर्ग में हो तो शान्त।
5. देदीप्यमान ग्रह हो तो शक्त। पृथ्वी के समीप होते ही देदीप्यमान कहलाता है।
6. दूसरे ग्रह से आच्छादित हो तो वह पीड़ित।
7. शत्रु राशि या शत्रु ग्रहों के अंश में हो तो वह दीन।
8. पाप ग्रह से युक्त हो तो खल।
9. नीच राशि का ग्रह हो तो भीत।
10. अस्तंगत हो तो विकल।

1. दीप्त अवस्था में – मनुष्य बुद्धिमान, सुन्दर रूपवान, तीर्थों में जाने वाला और शत्रुनाश करने वाला कहलाता है।
2. स्वस्थ अवस्था में – कीर्तिमान, सदा प्रसन्नचित्त, ज्योतिष जानने वाला, मिलकियत कमाने वाला, विजयी व राजपूजित होता है।
3. हर्षित अवस्था में – मनुष्य सदाचारी, धर्मात्मा होता है।
4. शान्त अवस्था में – मनुष्य शान्त, धनयुक्त, तेजस्वी होता है।
5. शक्त अवस्था में – मनुष्य निरोगी, सुन्दर देही, प्रशंसनीय, मधुरभाषी।
6. पीड़ित अवस्था में – रोगी, मानसिक चिन्ता।
7. दीन अवस्था में - बुद्धिहीन, परस्त्री आसक्त।

8. खल अवस्था में – पापग्रह से युक्त व उसी ग्रह के अनुसार उसका फल।
9. विकल अवस्था में - सूर्य सान्निध्य होने से अस्त व निष्फल।
10. भीत अवस्था में – नीच राशि से युक्त उसी ग्रह के अनुसार उसका फल।

जन्म के समय की अवस्था के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को इस जन्म में सुख या दु:ख मिलना निश्चित है, चाहे उसका विश्वास हो अथवा न हो इससे हमारा कोई सम्बन्ध नहीं परन्तु जो घटना अनुभव सिद्ध है उस पर अविश्वास करना वृथा है।

बोध प्रश्न –

1. ग्रहाणां दृष्टि ....।

क. ग्रहावस्था ख. ग्रहदृष्टि ग. ग्रहपिण्ड घ. कोई नही

2. ग्रह स्वस्थान से किस स्थान को पूर्ण रूप से देखता है।

क. सप्तम स्थान को ख. पंचम स्थान को ग. अष्टम स्थान को घ. नवम स्थान को

3. मंगल सातवें स्थान के साथ – साथ किस स्थान को पूर्णपाद से देखता है।

क. चतुर्थ, पंचम को ख. चतुर्थ, अष्टम को ग. चतुर्थ, नवम को घ. चतुर्थ, षष्ठ को

4. शरीरांग के अनुसार सिर से मुख भाग तक का स्वामी कहलाता है।

क. चन्द्रमा ख. सूर्य ग. मंगल घ. बुध

5. शनि की पूर्ण दृष्टि किस स्थान पर पड़ती है।

क. 5,7,9 ख. 5,4,7 ग. 4,10,7 घ. 5,7,9

ग्रहों के स्वरूप व फलादेश –

सूर्य – पराक्रमी, शूर, गम्भीर, सत्वगुणी, चतुरस्र शरीर वाला, कुछ काला व लाल वर्ण, अल्प केशों वाला, पित्त प्रकृति सूर्य का स्वरूप है।

फलादेश - सूर्य से स्वत: आत्मा, तेज, पितृसुख, आरोग्य, शक्ति, सम्पत्ति का विचार करना चाहिये । सूर्य से क्षय, अतिसार, मस्तक का दर्द, हृदय आदि रोग होते है तथा देव, ब्राह्मण, राजा व राजसेवक से पीड़ा व कष्ट का भी होना इससे विचारणीय है ।

चन्द्रमा – चंचल, प्रवासी, शान्त, सात्विक, मधुरभाषी, अत्यधिक उम्रवाले स्त्री से मैत्री करनेवाला, सुन्दर मजबूत शरीर वाला,बुद्धिमान, गोल शरीर, कफ – वात प्रकृति आदि चन्द्रमा का स्वरूप है।

फलादेश – चन्द्रमा से मन, बुद्धि, मातृसुख, राजकृपा का विचार करना चाहिये। इससे होने वाले रोग पीनस, पाण्डुरोग, व स्त्रीसम्बन्धी है।

मंगल – क्रूर, कपटी, अत्यन्त चपल, शूर, विषयलम्पट, तमोगुणी, लाल गौरवर्ण, उत्तम अवयव आदि मंगल के स्वरूप है।

फलादेश – मंगल से गुण, रोग, सामर्थ्यवान, जमीन, अनुज, शत्रु का विचार करना चाहिये।

बुध - स्पष्टवादी, काला हरा रंग का शरीर, बहुभाषी, कृश शरीर, रजोगुणी, पित्त व कफ प्रकृति युक्, दूसरे की हानि में आनन्द मनाने वाला, पराक्रम व वैभव का उपयोग रकने वाला आदि बुध का

स्वरूप है।

फलादेश – बुध से विद्या, आप्त वर्ग, मामा, पशु, मित्र, वाणी का विचार करना चाहिये।

गुरू - पीत वर्ण, सर्वगुणसम्पन्न, शास्त्रज्ञान, व्यासंगी, बुद्धिमान, सम्पत्तिवान, धार्मिक आचरण, क्षमाशील आदि गुरू का स्वरूप है।

फलादेश - गुरू से द्रव्य, शरीर बल, चालाकी, सन्तति ज्ञान का विचार किया जाता है। गुरू से गुल्म रोग, देव, आचार्य, गुरू, ब्राह्मण के श्राप से पीड़ादि का विचार करना चाहिये।

शुक्र – सुन्दर, मध्यम शरीर का आकार, चित्र – विचित्र सुन्दर वस्त्र धारण करने वाला, सौम्य दृष्टि, मजाकी, रजोगुणी, वात – कफ प्रकृति सुख बल, सद्गुण, ऐश्वर्य आदि के निवास स्थान शुक्र का स्वरूप है

फलादेश – शुक्र से पत्नी, वाहन, अलंकार, क्रीड़ा, रति सुख, ऐश्वर्य का विचार किया जाता है। इससे होने वाला रोग स्त्री सम्बन्धित तथा गुप्त रोग है।

शनि – कृश व रूक्ष शरीर, हरा काला वर्ण का शरीर, बड़े दन्त वाला, नेत्र, केश व अवयव लम्बे, मलिन वस्त्र धारण करने वाला, तामसी, आलसी शनि का स्वरूप है।

फलादेश - शनि से भूमि, भवन, वाहन, व्यापार, आयुष्य, मृत्यु, विपत्ति या सम्पत्ति का विचार किया जाता है।

राहु - शनि के अनुसार शरीर का रूप रंग, पिता के विचार, दैवी, माता, अपस्मार, फॉसी लगाकर मरना, विषधारी प्राणी से त्रास, भूत- प्रेत पिशाच बाधा, अरूचि, कुण्ठ व्याधि होत है।

केतु – माता – पिता का विचार करना चाहिये। दैवी, गोबर, गुदा, शत्रु से त्रास, नीच जाति के लोगों से त्रास मिला करता है।

4.5 सारांशः -

ग्रहदृष्टि ज्योतिष शास्त्र का एक अभिन्न अंग है। सम्पूर्ण ज्योतिष शास्त्र ग्रहों पर आधारित है जातक स्कन्ध में ग्रहों की दृष्टि के ही आधार पर किसी जातक के जीवन में होने वाले शुभाशुभ फल का प्रतिशत कितना होगा, अर्थात् वह अधिक होगा या न्यून। इसका विचार हम ग्रहदृष्टि के आधार पर ही करते है। अत: ग्रहदृष्टि का ज्ञान परमावश्यक है। ग्रहदृष्टि के ज्ञान के आधार पर ही हम किसी भी व्यक्ति या समष्टि का एक निश्चित अवधि में उसके साथ होने वाली घटनाओं का विवेचन करते है इस इकाई में पाठक ग्रहदृष्टि के विभिन्न परिप्रेक्ष्य का अध्ययन करेंगे, जिससे वह ग्रहों के विभिन्न शुभाशुभ फलादेशादि कर्म को आसानी पूर्वक समझ पायेंगे।

4.6 पारिभाषिक शब्दावली

ग्रहदृष्टि – प्रत्येक ग्रह की अपनी – अपनी दृष्टि होती है। ग्रहों की दृष्टि ग्रह दृष्टि कहलाती है।

पूर्ण दृष्टि – प्रत्येक ग्रह अपने से सप्तम स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखता है। पूर्ण दृष्टि का अर्थ है 100

प्रतिशत दृष्टि।

शुभग्रह - पूर्ण चन्द्र, बुध, गुरू एवं शुक्र शुभ ग्रह कहलाते है।

पापग्रह - क्षीण चन्द्र, मंगल, सूर्य एवं शनि को पापग्रह कहते है।

नीच राशि – प्रत्येक ग्रह अपने स्थान से 180^0 पर नीच का माना जाता है।

उच्च राशि - सभी ग्रहों का अपना – अपना उच्च राशि है – यथा – सूर्य - मेष, चन्द्र – वृष, मंगल – मकर, बुध – कन्या , गुरू – कर्क, शुक्र – मीन, शनि – तुला आदि।

4.7 बोधप्रश्नों के उत्तर

1.ख

2.क

3.ख

4.ख

5.क

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वृहज्जातकम् - चौखम्भा प्रकाशन

वृहत्पराशरहोराशास्त्र - चौखम्भा प्रकाशन

ज्योतिष सर्वस्व – चौखम्भा प्रकाशन

होराशास्त्रम् - चौखम्भा प्रकाशन

जातकपारिजात – चौखम्भा प्रकाशन

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न -

1. ग्रहदृष्टि से आप क्या समझते है। उनके विभिन्न स्वरूपों का विवेचन करें।
2. ग्रहदृष्टि को परिभाषित करते हुये उनके शुभाशुभ फल का विस्तृत व्याख्या करें ।

इकाई – 5 ग्रहमैत्री

इकाई की संरचना

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 ग्रहमैत्री परिचय

ग्रहमैत्री विचार

बोध प्रश्न

5.4 सारांशः

5.5 पारिभाषिक शब्दावली

5.6 बोधप्रश्नों के उत्तर

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

5.8 सहायक पाठ्सामग्री

5.9 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई द्वितीय खण्ड **ग्रहभाव विचार** के पंचम इकाई **'ग्रहमैत्री'** से सम्बन्धित है। ज्योतिष शास्त्र के अनुसार सभी ग्रहों की आपस में मैत्री होती है, तथा वह अपनी मैत्री स्थिति के अनुसार ही फल भी देते है।

ग्रहमैत्री की दो श्रेणी है – तात्कालिक एवं नैसर्गिक। जन्मुण्डली में ग्रह जिस – जिस स्थान पर होता है, वहॉं से उनकी मैत्री स्थिति को देखते हुये फलादेश आदि कर्म किया जाता है।

इस इकाई से पूर्व आपने ग्रहों के शुभाशुभ, उनके बलाबल, भावबल, दृष्टि का अध्ययन कर लिया है, यहॉं आप इस इकाई में ग्रहों की मित्रता बोध का अध्ययन करेंगे।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

1. ग्रह को परिभाषित करने में समर्थ हो सकेंगे।
2. ग्रहों के मित्रामित्र को समझ सकेंगे।
3. ग्रहमैत्री के भेद को समझ सकेगें।
4. ग्रहमैत्री के स्वरूप का अध्ययन कर सकते है ।
5. ग्रहमैत्री के विभिन्न पहलुओं को समझ सकेगें।

5.3 ग्रहमैत्री परिचय

ग्रहों की प्रकृति के आधार पर जो एक ग्रह का दूसरे ग्रह से उत्पन्न भाव है उसे नैसर्गिक मैत्री, शत्रुता या समता कहते है , और जन्मकालिक स्थिति वश जो भाव उत्पन्न होते है उसे तात्कालिक मैत्री और शत्रुता कहते है । इस तरह से मैत्री के दो प्रकार हुए - नैसर्गिक और तात्कालिक। इन दोनों के सम्बन्ध से पंचधा मैत्री उत्पन्न होती है।

नैसर्गिक मैत्री

जिस ग्रह के स्वभावत: मित्र , शत्रु या सम है उसे निसर्ग मित्रादि कहा जाता है। जैसे नीचे तालिका में सूर्य का मंगल , चन्द्र मित्र है । सभी ग्रह अपनी मूल त्रिकोण राशि से 2,4,5,8,9,12 राशियों के स्वामियों से और अपनी उच्च राशि के स्वामी के स्वाभाविक या नैसर्गिक मित्रता रखते हैं। इनके अतिरिक्त राशियों के स्वामी शत्रु होते हैं। यदि किसी ग्रह की एक राशि मित्र पक्ष में व दूसरी शत्रु पक्ष में पड़े तो वह ग्रह सम माना जाता है। इसी पूर्वोक्त सूत्र पर आधारित राहु व केतु की भी मित्रता का विचार कुछ विद्वानों ने किया है किन्तु वह उतना प्रासांगिक नहीं है। उक्त बात को समझने के लिये मंगल का उदाहरण लेते हैं मंगल की मूल त्रिकोण राशि मेष से 2,4,5,8,9,12 व उन के स्वामी क्रमश: शुक्र, चन्द्रमा , सूर्य, मंगल वृहस्पति व शनि होते है। अत: ये प्रथम दृष्टि में मित्र हुए। परन्तु

सूर्य, गुरू, चन्द्र को छोड़कर शेष ग्रहों की दूसरी राशियॉ उक्त राशियों के अतिरिक्त है। अत: उस प्रकार शेष ग्रह शत्रु भी हुये। एक प्रकार से शत्रु व एक प्रकार से मित्र हैं।अत: ये ग्रह सम हैं। वृहस्पति, सूर्य व चन्द्रमा मित्र हैं तथा बुध शत्रुहै। इसी तरह अन्य ग्रहों का भी तालिका के अनुसार मित्र , शत्रु और सम का ज्ञान करना चाहिये –

ग्रह	**मित्र**	**शत्रु**	**सम**
सूर्य	मंगल, चन्द्रमा	शनि, शुक्र	बुध
चन्द्रमा	सूर्य , बुध	राहु	मंगल,गुरू,शुक्र, शनि
मंगल	सूर्य , चन्द्रमा,गुरू	बुध	शुक्र,शनि
बुध	सूर्य , शुक्र	चन्द्रमा	मंगल, गुरू, शनि
गुरू	सूर्य,चन्द्र , मंगल	बुध,शुक्र	शनि
शुक्र	शनि, बुध	सूर्य, चन्द्रमा	मंगल, गुरू
शनि	शुक्र,बुध	सूर्य,चन्द्रमा, मंगल	गुरू
राहु	शनि, बुध, शुक्र	सूर्य,चन्द्रमा , मंगल	गुरू

तात्कालिक मैत्री –

परिस्थिति वशात् जो ग्रह मित्र की तरह फल देने लगता है उसे तात्कालिक मित्र और उसी तरह शत्रु का विचार करते हैं। जैसे जो ग्रह जहॉ रहता है वहॉ से तीन घर आगे और तीन घर पीछे परस्पर मित्रता रखता है। अर्थात् ग्रह जिसमें है उससे 2,3,4 स्थान आगे और 10,11,12 स्थान पीछे का तात्कालिक मित्र होता है। इसके अतिरिक्त स्थान में रहने पर शत्रु होता है। उदाहरणार्थ नीचे लिखे चक्र देखें –
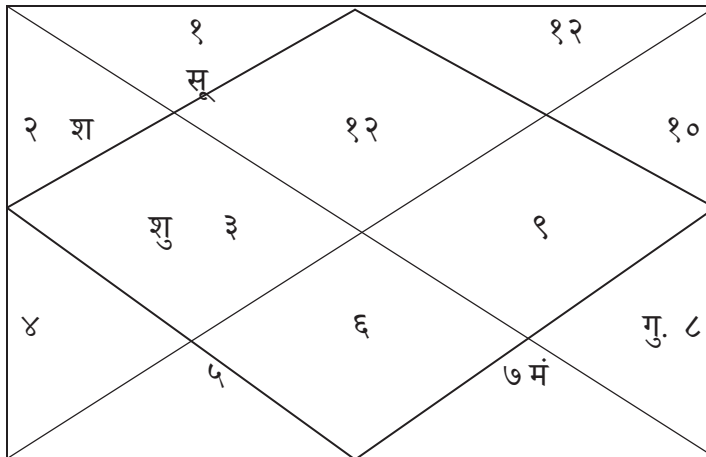
जैसे उपर चक्र में सूर्य से दूसरे घर में शनि है जो नैसर्गिक रूप से तो सूर्य का शत्रु है लेकिन तात्कालिक परिस्थिति यह है कि वह सूर्य से दूसरे घर में है अत: सूर्य का तात्कालिक मित्र हो गया है

यही स्थिति शुक्र की भी है। नैसर्गिक रूप से सूर्य का शुक्र शत्रु है लेकिन उपर चक्र में सूर्य से तीसरे घर में होने के कारण वह तात्कालिक मित्र हो गया है। दूसरी ओर सूर्य का मंगल नैसर्गिक मित्र है लेकिन तात्कालिक रूप से उपर चक्र में सूर्य से सातवें में स्थित है। अर्थात् 2,3,4, और 10,11,12 में नहीं है। अत: सूर्य का मंगल तात्कालिक शत्रु हुआ। इसी तरह सभी ग्रहों की मित्रता और शत्रुता समझनी चाहिये।

पंचधा मैत्री विचार -

द्वयोः सुहृत्वं त्वतिमित्रता भवेद्द्विधाऽरयस्ते तु सदाऽतिशत्रवः।
सुहृत्समत्वं सुहृदेव केवलं रिपुः समारिस्त्वरिमित्रता समः॥

दोनों तात्कालिक और नैसर्गिक मित्रता में जो ग्रह मित्र हो वह अतिमित्र, जो ग्रह दोनों में शत्रु हो वह अतिशत्रु होता है। एक में मित्र तथा दूसरे में सम हो तो केवल मित्र, शत्रु और सम हो तो शत्रु तथा एक में शत्रु और दूसरे में मित्र हो तो वह ग्रह सम होता है। नैसर्गिक एवं तात्कालिक मित्रता, शत्रुता आदि के सम्मिश्रण से पंचधा मैत्री चक्र बनता है।

जैसे -

	नैसर्गिक	**+ तात्कालिक**	**=**	**पंचधा**
1.	मित्र	मित्र	=	अधिमित्र
2.	सम	मित्र	=	मित्र
3.	शत्रु	मित्र	=	सम
4.	शत्रु	शत्रु	=	अधिशत्रु
5.	सम	शत्रु	=	शत्रु

उपर दिये गये उदाहरण से स्पष्ट हो जाता है कि नैसर्गिक और तात्कालिक के मिश्रण से पॉच प्रकार के सम्बन्ध बनते है –

1. अधिमित्र
2. मित्र
3. सम
4. अधिशत्रु
5. शत्रु

ये ही पंचधा कहलाते है। इसका उपयोग जन्मकुण्डली फलादेश के लिए किया जाता है।

तात्कालिक मैत्री - नैसर्गिक मैत्री के अतिरिक्त ग्रह की अपनी अधिष्ठित राशि से 2,3,4,10,11,12 राशियों में स्थित ग्रह तात्कालिक मित्र और शेष 1,5,6,7,8,9 राशियों में स्थित ग्रह तात्कालिक शत्रु होते हैं। यह मैत्री प्रत्येक कुण्डली में अलग – अलग हो जाती है जबकि स्वभाविक मैत्री स्थायीमैत्री है।

जो ग्रह तात्कालिक व नैसर्गिक दोनों प्रकार से मित्र हों तो अधिमित्र व दोनों प्रकार से शत्रु अधिशत्रु

होते हैं। फलित ज्योतिष में अनेक तथ्य नैसर्गिक मैत्री से तथा बहुत सी बातों का पंचधा मैत्री से विचार होता है।

ग्रहों की तात्कालिक मित्रता –

> **अन्योऽन्यत: सोदरलाभमानपातालवित्तव्ययराशिसंस्था: ।**
> **तत्कालमित्राणि खगा भवन्ति तदन्ययाता यदि शत्रवस्ते ।।**

ग्रह के स्वस्थान से दूसरे, तीसरे, चौथे, बारहवें, ग्यारहवें और दसवें इन छ: स्थानों में स्थित ग्रह उसके तात्कालिक मित्र तथा इन स्थानों से इतर स्थानों में स्थित ग्रह उसके तात्कालिक शत्रु होते हैं ।

ग्रहों में परस्पर दो प्रकार की मित्रता होती है -

१. तात्कालिक मैत्री और २. नैसर्गिक मैत्री

तात्कालिक मैत्री परिवर्तनीय होती है। यह प्रत्येक व्यक्ति के लिए भिन्न - भिन्न होती है, किन्तु नैसर्गिक मैत्री स्थायी होती है, इसमें परिवर्तन नहीं होता है।

एक और प्रकार की मैत्री होती है, जिसे पंचधा मैत्री कहते हैं । तात्कालिक मैत्री और नैसर्गिक मैत्री के आधार पर पंचधा मैत्री होती है।

महर्षि पराशर के अनुसार -

> **दशायबन्धुसहजस्वान्त्यस्थास्ते परस्परम् ।**
> **तत्काले सुहृदो ज्ञेय: शेषस्थाने त्वमित्रकम् ।।**

शम्भुहोराप्रकाश में –

> **तात्कालिका: स्यु: सुहृदो नभोगा: खविक्रमायाम्बुधनव्ययस्था: ।**
> **एकर्क्षसप्ताष्टमधर्मपुत्रोपगारिगास्ते रिपवो निरूक्ता: ।।**
> **मैत्रीचक्रं भावत: कैश्चिदुक्तं नैतच्छ्रीपत्यादिकानां मतं हि ।**
> **लग्ने नैसर्गाद्यथा स्थानसंस्थै: खेटैर्मैत्रीयोगपूर्वं विचिन्त्यम् ।।**

ख, विक्रम, आय, अम्बु, धन और व्यय अर्थात् १०वें , तीसरें , ग्यारहवे, चौथे, द्वितीय और द्वादश भावों में स्थित ग्रह लग्नस्थ ग्रह के तात्कालिक शत्रु होते हैं। एक ही राशि में,सातवें, आठवें, नवें, पॉचवें, और छठे भाव में स्थित ग्रह लग्नस्थ ग्रह के शत्रु होते हैं । कतिपय आचार्यों ने मैत्रीचक्र को भावों से कहा है किन्तु इस मत को श्रीपति आदि आचार्यों ने स्वीकार नहीं किया है। लग्न में कथित नैसर्गिक और तात्कालिक मित्रता का विचार करना चाहिए। यथा -

> **मित्रमित्रत्वेऽधिमित्रं मित्रसमत्वे मित्रम् ।**
> **मित्रामित्रत्वे सम: शत्रुसमत्वे शत्रु: शत्रुशत्रुत्वेऽधिशत्रु: ।।**

नैसर्गिक और तात्कालिक मैत्रीचक्र में ग्रह यदि दोनों में मित्र हों तो अधिमित्र होते हैं। एक में मित्र और दूसरे में सम हो तो मित्र, एक में सम और दूसरे में शत्रु हो तो शत्रु और यदि दोनों में

शत्रु हों तो अधिशत्रु होते हैं। इसी को पंचधा मैत्री कहते है।

नैसर्गिक मैत्री -

> **मित्राणि भानोः कुजचन्द्रजीवाः शत्रू सितार्की शशिजः समानः।**
> **चन्द्रस्य मित्रे दिननायकज्ञौ समा गुरूक्ष्माजसितासिताः स्युः ।।**
> **आरस्य मित्राणि रवीन्दुजीवाश्चान्द्री रिपुः शुक्रशनी समानौ ।**
> **सूर्यासुरेज्यौ सुहृदौ बुधस्य समाः शनीज्यावनिजास्त्वरीन्दुः ।।**
> **सूर्यारचन्द्राः सुहृदस्तु सूरेः शत्रू सितज्ञौ रविजः समानः ।**
> **मित्रे शनिज्ञौ भृगुनन्दनस्येन्द्विनावरी जीवकुजौ समानौ ।।**
> **मन्दस्य सूर्येन्दुकुजाश्च शत्रवः समः सुरेज्यः सुहृदौ सितेन्दुजौ।**
> **तत्कालनैसर्गिकतश्च पंचधा पुनः प्रकल्प्यास्त्वतिमित्रशत्रवः ।।**

बोध प्रश्न –

१. ग्रहों में परस्पर कितने प्रकार की मैत्री होती है -
   क. २ ख. ३ ग. ४ घ. ५

२. नैसर्गिक मैत्री होता है –
   क. परिवर्तनीय ख. अपरिवर्तनीय ग. दोनों घ. कोई नहीं

३. सम + मित्र = ?
   क. मित्र ख. शत्रु ग. अतिमित्र घ. अतिशत्रु

४. अर्की किसे कहा जाता है –
   क. मंगल ख. बुध ग. शनि घ. गुरू

५. ग्रह जिस स्थान में होता है उससे किन स्थानों में बलवान होता है –
   क. 2,3,4 ख. 4,5,6 ग. 5,6,7 घ. 7,8,9,

5.4 सारांशः -

ग्रहमैत्री फलित ज्योतिष शास्त्र का एक अभिन्न अंग है। सम्पूर्ण ज्योतिष शास्त्र ग्रहों पर आधारित है। जातक स्कन्ध में ग्रहों की मित्रामित्र के ही आधार पर किसी जातक के उसके जन्म कुण्डली में शुभाशुभ ग्रहों की स्थिति की जानकारी प्राप्त करते हैं। कौन ग्रह किसका मित्र है, सम है अथवा शत्रु है तथा फलाफल क्या होगा। इसकी जानकारी हेतु ग्रहमैत्री का अध्ययन होना आवश्यक है। इस इकाई में आपको ग्रहमैत्री के मूलभूत सिद्धान्त का ज्ञान हो जायेगा। ग्रहों के मैत्री के आधार पर उनकी सामंजस्यता का बोध कर तत्काल फलादेश करने पर यह बोध हो जाता है कि भावों में स्थित ग्रह का फल जातक के उपर क्या होगा।

5.5 पारिभाषिक शब्दावली

ग्रहदृष्टि – प्रत्येक ग्रह की अपनी – अपनी दृष्टि होती है। ग्रहों की दृष्टि ग्रह दृष्टि कहलाती है।

पूर्ण दृष्टि – प्रत्येक ग्रह अपने से सप्तम स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखता है। पूर्ण दृष्टि का अर्थ है 100 प्रतिशत दृष्टि।

शुभग्रह - पूर्ण चन्द्र, बुध, गुरू एवं शुक्र शुभ ग्रह कहलाते है।

पापग्रह - क्षीण चन्द्र, मंगल, सूर्य एवं शनि को पापग्रह कहते है।

नीच राशि – प्रत्येक ग्रह अपने स्थान से 180^0 पर नीच का माना जाता है।

उच्च राशि - सभी ग्रहों का अपना – अपना उच्च राशि है – यथा – सूर्य - मेष, चन्द्र – वृष, मंगल – मकर, बुध – कन्या , गुरू – कर्क, शुक्र – मीन, शनि – तुला आदि।

5.6 बोधप्रश्नों के उत्तर

1. क

2. ख

3. क

4. ग

5. क

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वृहज्जातकम् - चौखम्भा प्रकाशन

वृहत्पराशरहोराशास्त्र - चौखम्भा प्रकाशन

ज्योतिष सर्वस्व – चौखम्भा प्रकाशन

होराशास्त्रम् - चौखम्भा प्रकाशन

जातकपारिजात – चौखम्भा प्रकाशन

5.8 सहायक पाठ्यसामग्री

लघुजातक

फलदीपीका

ज्योतिर्विद्याभरणम्

5.9 निबन्धात्मक प्रश्न -

1. ग्रहमैत्री से आप क्या समझते है। उनके विभिन्न स्वरूपों का विवेचन करें।
2. ग्रहमैत्री को परिभाषित करते हुये उनके शुभाशुभ फल का विस्तृत व्याख्या करें ।

खण्ड - 3
फलादेश निर्णय

इकाई – 1 पंचांग फल

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0जे0वाई – 201 के तृतीय खण्ड की प्रथम इकाई '**पंचांग फल**' से सम्बन्धित है। पंचांग में समस्त ज्योतिष का सार है। जातक शास्त्र के अन्तर्गत पंचांग फल कहा गया है।

पंचांग फल के अन्तर्गत तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करणोक्त शुभाशुभ फल का विवेचन किया गया है।

इस इकाई के पूर्व आपने ग्रहों के बलाबल, दृष्टि विचार एवं ग्रहमैत्रादि का अध्ययन कर लिया है, यहॉ आप इस इकाई में पंचांग फल का अध्ययन करेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

1. पंचांग को परिभाषित करने में समर्थ हो सकेंगे।
2. पंचांग फल क्या है बता सकेंगे।
3. तिथि, वार का शुभाशुभ फल का विवेचन कर सकेगें ।
4. नक्षत्र, योग एवं करण का शुभाशुभ फल का बोध कर लेंगे ।
5. पंचांग फल के महत्व को समझ सकेंगे ।

1.3 पंचांग परिचय

पंचांग के प्रधान रूप से पॉच अंग होते है - तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण। इसके साथ – साथ संवत्सर, अयन, ऋतु, मास, पक्ष एवं ग्रहणादि भी पंचांग के ही अंग होते है। यथा –

तिथिर्वासरनक्षत्रो योग: करणमेव च।
इति पंचांगमाख्यातं व्रतपर्वनिदर्शकम्॥

जातक शास्त्र में पंचांग फल के अन्तर्गत उपर्युक्त में शुभाशुभ फल का विवेचन यहॉ किया जा रहा है आइए पंचांग फल के अन्तर्गत सर्वप्रथम तिथिफल को जानते है –

तिथिफल –

महोद्योगी जात: प्रतिपदि तिथौ पुण्यचरितो ।
द्वितीयायां तेज: पशुबलयशोवित्तविपुल:॥
तृतीयायां पुण्यप्रबलभयशीलश्च पटुवाक्।
चतुर्थ्यामाशालुस्त्वटनचतुरो मन्त्रनिपुण:॥

पंचम्यामखिलागमश्रुतिरत: कामी कृशाङ्गश्चल:।
षष्ठयामल्पबलो महीपतिसम: प्राज्ञोऽतिकोपानिवत:।।
सप्तम्यां कठिनोरूवाग् जनपति: श्लेष्मप्रधानो बली ।
चाष्टम्यामतिकामुक: सुतवधूलोल: कफात्मा भवेत्।।

यदि किसी जातक का जन्म **प्रतिपदा** तिथि में हो तो वह उद्यमी और पुण्यात्मा, **द्वितीया** तिथि में हो तो तेजस्वी, पशुबलयुक्त, यशस्वी, अतिधनी, **तृतीया** में जन्म हो तो प्रबल पुण्यशाली, भीरू, वाक्पटु, **चतुर्थी** में जन्म हो तो आशान्वित, यायावर, चतुर और मन्त्राभिचारकुशल, **पंचमी** तिथि में जन्म हो तो वेद और आगमादि शास्त्रों में निष्णात, कामातुर, दुर्बल शरीर वाला और चंचल स्वभाव, **षष्ठी** तिथि में जन्म हो तो अल्पबली, राजा के समान बुद्धिमान और क्रोधी होता है। **सप्तमी** तिथि में जन्म हो तो जातक की जंघाएँ पुष्ट होती है और वह कटुभाषी , जनपति या जनप्रतिनिधि होता है तथा श्लेष्माजनित व्याधि से युक्त बलवान होता है। यदि **अष्टमी** तिथि में जन्म हो तो व्यक्ति अतिकामुक, पुत्रवधू के प्रति अनुरक्त एवं कफ प्रधान होता है।

ख्यातो दिव्यतनु: कुदारतनय: कामी नवम्यां तिथौ
धर्मात्मा पटुवाक्कलत्रतनय: श्रीमान दशम्यां धनी।
देवब्राह्मणपूजको हरितिथौ दासान्वितो वित्तवान् ।
द्वादश्यामतिपुण्यकर्मनिरतस्त्यागी धनी पण्डित:।।
त्रयोदश्यां लुब्धप्रकृतिरतिकामी च धनवान्।
चतुर्दश्यां कोपी परधनवधूको गतमना:।
अमायामाशालु: पितृसुरसमाराधनपरो ।।
धनी राकाचन्द्रे यदि कुलयशस्वी च सुमना:।।

नवमी तिथि में जन्म हो तो जातक विख्यात, कान्तिमान शरीरधारी, दुष्टा स्त्री और दुष्ट पुत्रों से युक्त, कामातुर, **दशमी** तिथि में जन्म हो तो जातक धर्मात्मा, वाक्पटु , स्त्री पुत्रादि सुख से सम्पन्न और धनिक, यदि **एकादशी** में जन्म हो जातक देव – ब्राह्मण का पूजक दास – दासियों से युक्त, धनिक होता है। यदि **द्वादशी** तिथि का जन्म हो तो जातक पुण्यकर्मरती, त्यागी, धनवान और पण्डित, **त्रयोदशी** तिथि में जन्म हो तो जातक लोभी प्रकृति का अत्यन्त कामासक्त और धनसम्पन्न , **चतुर्दशी** तिथि में जन्म हो तो क्रोधी, परस्त्री और धन का लोलुप तथा हतोत्साही, **अमावस्या** में जन्म हो तो जातक आशावान, पिता और देवता के अर्चन – पूजन में निरत, **पूर्णिमा तिथि** में जन्म हो तो जातक धनवान, कुल की यश कीर्ति की वृद्धि करने वाला स्वच्छ

निर्मल मानस का पुरूष होता है।

आइए अब तिथि फल के पश्चात् वार फल को समझते है –

वार फल –

मानी पिंगलकेशलोचनतनुश्चादित्यवारे विभुः।
कामी कान्तवपुर्दयालुरनिशं शीतांशुवारोद्भवः।।
क्रूरः साहसवादकार्यनिरतो भूसूनुवारे सदा।
देवब्राह्मणपूजकः सुवचनः सौम्यस्य वारोदये।।
यज्वा भूपतिवल्लभश्च गुणवान् ख्यातो गुरोर्वासरे।
धान्यक्षेत्रधनाश्रितः सितदिने सर्वप्रियः कामधीः।।
मन्दप्रायमतिः परान्नधनभुग् वादप्रवादान्वितो ।
द्वेषी बन्धुजनावरोधकुशलो मन्दस्य वारोद्भवः।।

यदि **रविवार** में जन्म हो तो जातक के केश और नेत्र भूरे होते हैं, वह मानी और धनिक होता है। **सोमवार** के दिन जन्म हो तो जातक कामातुर, कान्तिमान शरीर, दयालु, **भौमवार** के दिन जन्म हो तो जातक निर्मम, साहसी, विवादित कार्यरत, **बुधवार** में जन्म हो तो जातक देव – द्विज में आस्थावान और मिष्टभाषी, **वृहस्पतिवार** में जन्म हो तो जातक यज्ञकर्त्ता, राजा का प्रिय, गुणी और विख्यात होता है, **शुक्रवार** में जन्म हो तो जातक कृषि उत्पादों से धनिक, सर्वप्रिय और कामुक, **शनिवार** में यदि जन्म हो तो बालक परान्न और परधन आश्रित, विवादग्रस्त, विद्वेषी, स्वजनविरोधी और उनके मार्ग में अवरोध उत्पन्न करने वाला होता है।

नक्षत्र फल –

आश्विन्यामतिबुद्धिवित्तविनयप्रज्ञायशस्वी सुखी
याम्यर्क्षे विकलोऽन्यदारनिरतः क्रूरः कृतघ्नी धनी।
तेजस्वी बहुलोद्भवः प्रभुसमोऽमूर्खश्च विद्याधनी
रोहिण्यां पररन्ध्रवित्कृशतनुर्बोधी परस्त्रीरतः।।

अश्विनी नक्षत्र में जन्म हो तो जातक अतिबुद्धिमान, धनिक, विनयी, बुद्धिमान, यशस्वी और सुखी होता है। **भरणी** नक्षत्रोत्पन्न् जातक विकल, पराई स्त्री में अनुरक्त, क्रूरमना, कृतघ्न और धनाढय होता है। जिसका जन्मर्क्ष **कृत्तिका** हो वह तेजस्वी, राजा के समान बुद्धिमान और विद्वान होता है। **रोहिणी** नक्षत्र में जन्म लेने वाला व्यक्ति परछिद्रान्वेषी, कृशांग और परस्त्रीगामी होता है।

चान्द्रे सौम्यमनोऽटनः कुटिलदृक् कामातुरो रोगवान्

आर्द्रायामधनश्चलोऽधिकबलः क्षुद्रक्रियाशीलवान्।

मूढात्मा च पुनर्वसौ धनबलख्यातः कविः कामुक-

स्तिष्ये विप्रसुरप्रियः सघनधी राजप्रियो बन्धुमान्।

मृगशिरा नक्षत्रोत्पन्न् व्यक्ति सौम्य स्वभाव का, यायावर, वक्रदृष्टि, कामातुर और रोगी, **आर्द्रा** नक्षत्र में जन्मा जातक निर्धन, चंचलमति,बलवान्, नीचकर्मी, **पुनर्वसु** नक्षत्र में जन्मा व्यक्ति मूढ जडमति , धन - बलसम्पन्न , वित्व शक्तियुक्त, कामातुर, **पुष्य** जन्मर्क्ष हो तो जातक देव - द्विज का भक्त, अतिबुद्धिमान, राजा का प्रिय और स्वजनों एवं बन्धु - बान्धवों से युक्त होता है।

सार्पे मूढमतिः कृतघ्नवचनः कोपी दुराचारवान्।

गर्वी पुण्यरतः कलत्रवशगो मानी मघायां धनी ।।

फल्गुन्यां चपलः कुकर्मचरितस्त्यागी दृढः कामुको।

भोगी चोत्तरफल्गुनीभजनितो मानी कृतज्ञः सुधीः ।।

आश्लेषा नक्षत्रोत्पन्न् व्यक्ति मूर्ख, कृतघ्न, क्रोधी और दुराचारी होता है। **मघा** नक्षत्रोद्भव जातक अभिमानी, पुण्यात्मा, स्त्री के वशीभूत, मान और धन से युक्त होता है। **पूर्वाफाल्गुनी** नक्षत्र में जन्मा जातक चंचलमन, दुष्कर्मरत, त्यागी और अतिकामी होता है। **उत्तराफाल्गुनी** नक्षत्र में जन्म लेने वाला व्यक्ति भोगयुक्त, अभिमानी, कृतज्ञ और बुद्धिसम्पन्न होता है।

हस्तर्क्षे यदि कामधर्मनिरतः प्राज्ञोपकर्ता धनी।

चित्रायामतिगुप्तशीलनिरतो मानी परस्त्रीरतः।।

स्वातयां देवमहीसुरप्रियकरो भोगी धनी मन्दधी।

गर्वी दारवशो जितारिरधिकक्रोधी विशाखोद्भवः ।।

हस्त नक्षत्र में जन्म हो तो जातक काम और धर्म में लीन, बुद्धिमान, परोपकारी और धनी होता है। जिसका जन्मर्क्ष **चित्रा** हो वह गोपनीयता रखने वाला, मानयुक्त और परस्त्रीरत होता है। **स्वाती** नक्षत्रोद्भव जातक देव – द्विज भक्त, सांसारिक भोगों से युक्त और मन्दबुद्धि होता है। **विशाखा** नक्षत्रोपन्न जातक घमण्डी, स्त्री के वश में रहने वाला, शत्रुञ्जयी और अत्यन्त क्रोधी होता है।

मैत्रे सुप्रियवाग् धनीः सुखरतः पूज्यो यशस्वी विभु –

र्ज्येष्ठायामतिकोपवान् परवधूसक्तो विभुर्धार्मिकः।

मूलर्क्षे पटुवाग्विधूतकुशलो धूर्तः कृतघ्नो धनी

पूर्वाषाढभवो विकारचरितो मानी सुखी शान्तधीः।।

अनुराधा नक्षत्रोत्पन्न जातक प्रियभाषी, धनिक, सुखी, पूजनीय, यशस्वी और वैभवसम्पन्न होता है। **ज्येष्ठा** नक्षत्र में जन्मा जातक अत्यन्त क्रोधी, परस्त्री में आसक्त, वैभवशाली और धार्मिक होता है। **मूल** नक्षत्रोत्पन्न जातक वाक्चतुर , अविश्वसनीय , धूर्त, कृतघ्न और धनवान् होता है। **पूर्वाषाढा** नक्षत्र में उत्पन्न व्यक्ति विकृत चरित्र, मानयुक्त , सुखसम्पन्न और शान्त बुद्धि का व्यक्ति होता है।

मान्य: शान्तगुण: सुखी च धनवान् विश्वर्क्षज: पण्डित:।
श्रोणायां द्विजदेवभक्तिनिरतो राजा धनी धर्मवान् ।।
आशालुर्वसुमान वसूडुजनित: पीनोरूकण्ठ: सुखी।
कालज्ञ: शततारकोद्भवनर: शान्तोऽल्पभुक् साहसी ।।

उत्तराषाढा नक्षत्र में उत्पन्न व्यक्ति मान्य, शान्त, गुणवान, सुखी, धनिक और विद्वान होता है। **श्रवणर्क्षोत्पन्न** जातक द्विज – देवभक्त, राजा, धनी और धर्मानुरागी होता है। **धनिष्ठा** नक्षत्र में जन्मा व्यक्ति आशावान्, धनिक होता है और उसके कण्ठ एवं उरू प्रदेश स्थूल होते हैं। **शतभिषा** नक्षत्रोद्भव व्यक्ति काल को जानने वाला, शान्तचित्त, अलपभोजी और साहसी होता है।

बोध प्रश्न –

१. यदि किसी जातक का जन्म पंचमी तिथि को हुआ हो तो, वह होता है –
   क. वेदज्ञ ख. उद्यमी ग. यायावर घ. अल्पबली
२. शुक्रवार को जन्म लेने वाला जातक -
   क. अभिमानी होता है ख.विद्वेषी होता है ग. सर्वप्रिय होता है घ. कोई नहीं
३. मृगशिरा नक्षत्रोत्पन जातक होता है –
   क. सौम्य स्वभाव का ख. यायावर ग. दोनों घ. दोनों नहीं
४. मान्य: शान्तगुण: सुखी च .... विश्वर्क्षज: पण्डित:।
   क. धर्मवान ख. धनवान ग. सुखी घ. साहसी
५. योगों की संख्या होती है –
   क. २५ ख. २६ ग. २७ घ. २८

पूर्वप्रोष्ठपदि प्रगल्भवचनो धूर्तो भयार्तो मृदु
श्चाहिर्बुध्न्यजमानवो मृदुगुणस्त्यागी धनी पण्डित:।
रेवत्यामुरूलाञ्छनोपगतनु: कामातुर: सुन्दरो

मन्त्री पुत्रकलत्रमित्रसहितो जातः स्थिरः श्रीरतः ।।

पूर्वाभाद्रपद नक्षत्रोपन्न जातक शौर्ययुक्त वचन वक्ता, धूर्त, भीरू और मृदु स्वभाव का होता है। **उत्तराभाद्रपद** नक्षत्र में जन्म लेने वाला व्यक्ति सात्विक वृत्ति का, त्यागी, धनवान और विद्वान होता है। **रेवती** नक्षत्र में जन्म लेने वाले व्यक्ति की जंघाएँ लाञ्छन युक्त होती हैं, वह कामातुर, सुदर्शन, राजमन्त्री, स्त्री और पुत्रों से युक्त, धीर और वैभव सम्पन्न होता है।

चन्द्रमा और सूर्य के योग से विष्कम्भादि कुल २७ योग होते हैं। इनका फल इस प्रकार है –

योग फल –

विष्कम्भे जितशत्रुरर्थपशुमान् प्रीतौ परस्त्रीवश
श्चायुष्मत्प्रभवश्चिरायुरगदः सौभाग्यजातः सुखी।
भोगी शोभनश्योगजो वधरूचिर्जातोऽतिगण्डे धनी
धर्माचाररतः सुकर्मजनितो धृत्यां परस्त्रीधनः ।

यदि व्यक्ति का जन्म विष्कम्भ योग में हो तो वह शत्रुञ्जयी , धन और पशुधन सम्पन्न होता है, प्रीती योग में जन्म हो तो पराई स्त्री के वशीभूत, आयुष्मान योग में जन्म हो तो नैरूज्यता और दीर्घायु प्राप्त, सौभाग्य योग में जन्म हो तो सुखी, शोभन योग में जन्म हो तो हत्या की प्रवृत्ति से युक्त , भोगी, अतिगण्ड योग में जन्म हो तो धनवान, सुकर्मा योग में जन्म हो तो धर्माचारी, धृति योग में जन्म हो तो परस्त्री से धन प्राप्त करने वाला होता है ।

शूले कोपवशानुगः कलहकृद्गण्डे दुराचारवान्
वृद्धौ पण्डितवाग् ध्रुवेऽतिधनवान् व्याघातजो घातकः।
ज्ञानी हर्षणयोगजः पृथुयशा वज्रे धनी कामुकः।
सिद्धौ सर्वजनाश्रितः प्रभुसमो मायी व्यतीपातजः ।।

शूल योग में जन्म हो तो जातक क्रोधी, कलही, गण्ड योग में जन्म हो तो दुराचारी, वृद्धियोग में जन्म हो तो विद्वान वक्ता, ध्रुव योग में जन्म हो तो अतिधनी, व्याघात योग में जन्म हो तो घातक , हर्षण योग में जन्म हो तो यशस्वी और ज्ञानसम्पन्न, वज्र योग में जन्म हो तो धनिक और कामासक्त, सिद्धि योग में जन्म हो तो बहुजनों का आश्रयदाता, राजा के सदृश, व्यतीपात योग में जन्म हो तो जातक मायावी होता है।

दुष्कामी च वरीयजस्तु परिघे विद्वेषको वित्तवान्
शास्त्रज्ञः शिवयोगजनश्च धनवान् शान्तोऽवनीशप्रियः।
सिद्धे धर्मपरायणः क्रतुपरः साध्ये शुभाचारवान्

चार्वङ्गः शुभयोगजश्च धनवान् कामातुरः श्लेष्मकः ।।

वरीयान योगोत्पन्न जातक अतिकामासक्त होता है, परिघ योग में जन्म हो तो जातक विद्वेषक किन्तु विद्वान होता ह, शिव योग में शास्त्रज्ञ, शान्तचित्त और राजा का प्रियपात्र होता है, सिद्ध योगोत्पन्न जातक धार्मिक और यज्ञकर्ता होता है, साध्य योग में जनम लेने वाला आचारवान, शुभ योग में उत्पन्न जातक सुन्दर देहयष्टि, धनसम्पन्न्, कामातुर और कफ प्रधान प्रकृति का होता है।

शुक्ले धर्मरतः पटुत्ववचनः कोपी चलः पण्डितो
मानी ब्रह्मभवोऽतिगुप्तधनिकस्त्यागी विवेकप्रभुः ।
ऐन्द्रे सर्वजनोपकारचरितः सर्वज्ञधीतिर्वत्तवान्
मायावी परदूषकश्च बलवान् त्यागी धनी वैधृतौ ।।

शुक्ल योगोत्पन्न जातक धर्माचारी, वाक्पटु, क्रोधी, चंचल और विद्वान होता है, ब्रह्म योग में जन्मा व्यक्ति मानी, गुप्तधन का स्वामी, त्यागी और विवेकी होता है, ऐन्द्र योग में जन्म लेने वाला जातक परोपकारी, सर्वज्ञ, बुद्धि और धन से सम्पन्न होता है, वैधृति योग में जन्म हो तो जातक मायावी, परनिन्दक, बलशाली , त्यागी और धनवान् होता है।

इसी क्रम में आइए अब करण फल का ज्ञान करते है –

करण फल -

बवकरणभवः स्याद्बालकृत्यः प्रतापी
विनयचरितवेषो बालवे राजपूज्यः ।
गजतुरगसमेतः कौलवे चारूकर्मा
मृदुपटुवचनः स्यात्तैतिले पुण्यशीलः ।।

बव करण में उत्पन्न व्यक्ति बालकके समान आचरण करने वाला प्रतापी होता है। बालव करण में उत्पन्न जातक विनयी किन्तु राजपूज्य होता है, कौलव करण में जन्म हो तो जातक हाथी – घोड़े से युक्त, सत्कार्यकर्ता होता है, तैतिल करण में जन्म हो तो जातक मृदु वाक्पटु और पुण्यात्मा होता है।

गरजकरणजातो वीतशत्रुः प्रतापी
वणिजि निपुणवक्ता जारकान्ताविलोलः।
निखिलजनविरोधी पापकर्माऽपवादी
परिजनपरिपूज्यो विष्टिजातः स्वतन्त्रः।।

गर करण में उत्पन्न जातक शत्रुहीन, प्रतापी होता है, वणिज करण में उत्पन्न व्यक्ति कुशल वक्ता, वेश्यागामी होता है, विष्टि करण में उत्पन्न व्यक्ति जनविरोधी, पापात्मा, अपवादी और स्वजन एवं परिजनों द्वारा पूजित होता है।

शकुनि योग में उत्पन्न व्यक्ति काल को जानने वाला, चिरसुखी, किन्तु दूसरों के विपत्ति का कारण होता है। चतुष्पद करण में उत्पन्न जातक सर्वज्ञ, सुन्दर बुद्धिवाला, यश और धन से सम्पन्न होता है। नाग करण में जन्म लेने वाला व्यक्ति तेजस्वी, अतिधनसम्पन्न्, बलशाली और वाचाल होता है। किंस्तुघ्न करणोत्पन्न जातक दूसरों का कार्य करने वाला,चपल, बुद्धिमान और हास्यप्रिय होता है।

अयन फल -

एक संवत्सर में दो अयन - सौम्यायन और याम्यायन होते हैं। अपने भ्रमणपथ पर चलते हुए कर्क राशि की संक्रान्ति से मकर राशि की संक्रान्ति पर्यन्त सूर्य दक्षिण अयन में होता है और मकर राशि की संक्रान्ति के बाद से कर्क की संक्रान्ति पर्यन्त सूर्य उत्तर अयन में होता है।

उत्तरायणसमुद्भवः पुमान् ज्ञानयोगनिरतश्च नैष्ठिकः ।
दक्षिणायनभवः प्रगल्भवाग् भेदबुद्धिरभिमानतत्परः ॥

उत्तरायण मासों में उत्पन्न व्यक्ति ज्ञान और योग साधक, निष्ठावान् होता है । दक्षिणायन मासों में उत्पन्न व्यक्ति वाक्पटु, भेदबुद्धि का तथा अभिमानी होता है।

ऋतु फल -

ऋतुऐं छः होती हैं - १. वृष और मिथुन के सूर्य हो तो ग्रीष्म ऋतु २. कर्क और सिंह के सूर्य में वर्षा ऋतु, ३. कन्या और तुला के सूर्य में शरद ऋतु, ४. वृश्चिक और धनु के सूर्य में हेमन्त ऋतु ६. मकर और कुम्भ के सूर्य में शिशिर ऋतु तथा ६. मीन और मेष के सूर्य में वसन्त ऋतु होती है।

दीर्घायुर्धनिको वसन्तसमये जातः सुगन्धप्रियो
ग्रीष्मर्तौ घनतोयसेव्यचतुरो भोगी कृशाङ्गः सुधीः।
क्षारक्षीरकटुप्रियः सुवचनो वर्षर्तुजः स्वच्छधीः
पुण्यात्मा सुमुखः सुखी यदि शरत्कालोद्भवः कामुकः॥
योगी कृशाङ्गः कृषकश्च भोगी हेमन्तकालप्रभवः समर्थः।
स्नानक्रियादानरतः स्वधर्मी मानी यशस्वी शिशिरर्तुजः स्यात् ॥

वसन्त ऋतु में उत्पन्न व्यक्ति दीर्घायु, धनवान और सुगन्धिप्रिय होता है, ग्रीष्म ऋतु में जन्मा

व्यक्ति घनतोय सेवन करने वाला, चतुर, अनेक भोगों से युक्त, कृशतनु और विद्वान होता है। वर्षाऋतु में उत्पन्न व्यक्ति नमकीन और कड़वे स्वादयुक्त पदार्थों और दूध का प्रेमी, निश्छल बुद्धि और मिष्टभाषी, शरद ऋतु में उत्पन्न व्यक्ति पुण्यात्मा, प्रियवक्ता, सुखी और कामातुर, हेमन्त ऋतु में उत्पन्न जातक योगी, कृषतनु, कृषक, भोगादि सम्पन्न और सामर्थ्यवान् , शिशिर ऋतु में व्यक्ति स्वधर्मानुसार आचरण करने वाला, स्नान, दानादिकर्ता, मानयुक्त और यशस्वी होता है।

मासफल -

चैत्रे सर्वकलागमश्रुतिपरो नित्योत्सवः श्रीरतो
वैशाखे यदि सर्वशास्त्रकुशलः स्वातन्त्रिको भूपतिः।
ज्येष्ठे मासि चिरायुरर्थतनयो मन्त्रक्रियाकोविद –
श्चाषाढेऽतिधनी कृपालुरनिशं भोगी परद्वेषकः ।।

चैत्र मास में उत्पन्न जातक समस्त कलाओं में निपुण, आगम और वेदादि शास्त्रों में पटु, नित्य उत्सव मनाने वाला, वैशाख मास में उतपन्न व्यक्ति सभी शास्त्रों में कुशल, स्वतन्त्र विचारों से युक्त, श्रीसम्पन्न राजा, ज्येष्ठमासोत्पन्न व्यक्ति दीर्घायु, धन – धान्य और पुत्रादि से सुखी, मन्त्र विद्या में पारंगत और आषाढ मास में जन्मा व्यक्ति अत्यन्त धनी, नित्य भोगयुक्त और परद्वेषी होता है।

जातः श्रावणमासि देवधरणीदेवार्चने तत्परो
नानादेशरतश्च भाद्रपदजस्तन्त्री मनोराज्यवान्।
मासे चाश्वयुजि स्वकीयजनविद्वेषी दरिद्रश्चलः
पुष्टाङ्गः कृषको विशालनयनो वित्ताधिकः कार्तिके ।।

श्रावण मास में उत्पन्न जातक देवता और ब्राह्मणों में आस्थावान, पूजन – अर्चन में निरत, भाद्रपद मासोत्पन्न जातक अनेक देशों में भ्रमण करने वाला, तन्त्रसाधक और अपने मनोराज्य में विचरण करने वाला, आश्विन मास में जन्मा जातक स्वजनों - परिजनों का विद्वेषी और दरिद्र, कार्तिक मास में उत्पन्न व्यक्ति पुष्ट शरीर, विशालाक्ष और अत्यन्त धनवान कृषक होता है।

सुरगुरूपितृभक्तो मार्गशीर्षे च धर्मी
धनगुणबलशाली तुङ्गनासस्तु पुष्ये।
खलमतिरतिधर्माचारवान् माघमासि
प्रतिदिनमुपकर्ता फाल्गुने गानलोलः ।।

मार्गशीर्ष मास में उत्पन्न जातक देवता, गुरू और पिता में भक्ति युक्त, धर्मात्मा, पौष मास में जन्मा व्यक्ति समुन्नत नासिका, धन, गुण और बल से युक्त, माघ मासोत्पन्न व्यक्ति दुष्ट बुद्धि, अतिधर्म का आचरण करने वाला, फाल्गुन मास में उत्पन्न व्यक्ति संगीत प्रेमी एवं उपकारी होता है।

पक्षफल -

वलक्षपक्षे यदि पुत्रपौत्रधनाधिको धर्मरतः कृपालुः।
स्वकार्यवादी निजमातृभक्तः स्वबन्धुवैरी यदि कृष्णपक्षे ॥

वलक्ष अर्थात् धवल - श्वेत पक्ष में जन्म लेने वाला व्यक्ति पुत्र - पौत्रादि से युक्त, अत्यन्त धनी, धार्मिक और दयालु होता है। कृष्णपक्ष में जन्मा व्यक्ति अपने कार्य में व्यस्त, विवादी, मातृभक्त, स्वजन, बन्धु - बान्धवों का विरोधी होता है।

1.4 सारांशः -

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि पंचांग के प्रधान रूप से पॉच अंग होते है - तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण। इसके साथ – साथ संवत्सर, अयन, ऋतु, मास, पक्ष एवं ग्रहणादि भी पंचांग के ही अंग होते है। पंचांग के प्रधान अंगों में तिथि, वार, नक्षत्र,योग एवं करणादि में उत्पन्न जातक के फल अलग – अलग होते है। यथा तिथि में यदि किसी जातक का जन्म प्रतिपदा तिथि में हो तो वह उद्यमी और पुण्यात्मा, द्वितीया तिथि में हो तो तेजस्वी, पशुबलयुक्त, यशस्वी, अतिधनी, तृतीया में जन्म हो तो प्रबल पुण्यशाली, भीरू, वाक्पटु, चतुर्थी में जन्म हो तो आशान्वित, यायावर, चतुर और मन्त्राभिचारकुशल, पंचमी तिथि में जन्म हो तो वेद और आगमादि शास्त्रों में निष्णात, कामातुर, दुर्बल शरीर वाला और चंचल स्वभाव होता है। इसी प्रकार अन्य तिथियों में। वार फल में यदि रविार में जन्म हो तो जातक के केश और नेत्र भूरे होते हैं, वह मानी और धनिक होता है। सोमवार के दिन जन्म हो तो जातक कामातुर, कान्तिमान शरीर, दयालु, भौमवार के दिन जन्म हो तो जातक निर्मम, साहसी, विवादित कार्यरत, बुधवार में जन्म हो तो जातक देव – द्विज में आस्थावान और मिष्टभाषी, वृहस्पतिवार में जन्म हो तो जातक यज्ञकर्त्ता, राजा का प्रिय, गुणी और विख्यात होता है, शुक्रवार में जन्म हो तो जातक कृषि उत्पादों से धनिक, सर्वप्रिय और कामुक, शनिवार में यदि जन्म हो तोबालक परान्न और परधन आश्रित, विवादग्रस्त, विद्वेषी, स्वजनविरोधी और उनके मार्ग में अवरोध उत्पन्न करने वाला होता है। इसी प्रकार नक्षत्र एवं करणों का भी फल होता है।

1.5 पारिभाषिक शब्दावली

महोद्योगी – उद्यमी

सर्वप्रथम – सबसे पहले

शुभग्रह - पूर्ण चन्द्र, बुध, गुरू एवं शुक्र शुभ ग्रह कहलाते है।

पुण्यात्मा - अच्छे शील आचरण वाला

आशान्वित – भरोसा रखना

आगम – शास्त्र

सौम्यवार – बुधवार

शीतांशुवार – सोमवार

अवरोध – बाधा

स्वजनविरोध – अपने लोगों का विरोध करने वाला

कृतघ्न – किये हुए उपकार को भूल जाने वाला

धीर – गम्भीर

सात्विक – सत्य का आचरण करने वाला

शौर्ययुक्त – साहसी

1.6 बोधप्रश्नों के उत्तर

1. क

2. ग

3. ग

4. ख

5. ग

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वृहज्जातकम् - चौखम्भा प्रकाशन

वृहत्पराशरहोराशास्त्र - चौखम्भा प्रकाशन

ज्योतिष सर्वस्व – चौखम्भा प्रकाशन

होराशास्त्रम् - चौखम्भा प्रकाशन

जातकपारिजात – चौखम्भा प्रकाशन

भारतीय कुण्डली विज्ञान – चौखम्भा प्रकाशन

1.8 सहायक पाठ्यसामग्री

लघुजातक
फलदीपीका
ज्योतिर्विद्याभरणम्
सुलभ ज्योतिष ज्ञान

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न -

1. पंचांग किसे कहते है। पंचांग फल का वर्णन कीजिये।
2. पक्ष, मास एवं अयन फल का विस्तृत वर्णन कीजिये ।

इकाई – 2 भावस्थ ग्रहफल

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0जे0वाई – 201 के तृतीय खण्ड की द्वितीय इकाई '**भावस्थ ग्रहफल**' से सम्बन्धित है। आपने पूर्व की इकाईयों में अध्ययन कर जान लिया है कि भाव क्या है ? उनकी संख्या कितनी होती है।

द्वादश भावों में स्थित समस्त ग्रहों के शुभाशुभ फल का विवेचन जिस प्रकरण में किया जाता हो, उसे भावस्थ ग्रहफल कहते है।

इस पूर्व की इकाई में आपने पंचांग फल का अध्ययन कर लिया है, यहाँ आप इस इकाई में भावस्थ ग्रहफल का अध्ययन करेंगे।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप बता सकेगें कि -

1. भाव क्या है।
2. भावस्थ ग्रहफल में क्या होता है ।
3. समस्त ग्रहों का द्वादश भावों में स्थित शुभाशुभ फल क्या है ।
4. भावस्थ ग्रह से कैसे फलादेश किया जाता है ।
5. भावों में स्थित ग्रहफल का महत्व क्या है ।

2.3 भावस्थ ग्रहफल

जातक शास्त्र के अन्तर्गत जब हम कुण्डली का ज्ञान करते है, तो कुण्डली के जो १२ कोष्ठक होते है, उसे ही 'भाव' की संज्ञा दी गई है। भाव सदैव स्थिर होता है। तन्वादि से लेकर व्यय भाव पर्यन्त द्वादश भाव होते है। तनु, धन,सहज, सुहृत, सुत, रिपु, जाया, मृत्यु, धर्म, कर्म, आय एवं व्यय ये बारह भावों के नाम है।

इन द्वादश भावस्थ ग्रहों का फल भिन्न - 2 प्रकार का होता है। आइए अब क्रमश: सूर्यादि ग्रहों का भावस्थ फल जानते है –

लग्नस्थ सूर्यफल –

मार्तण्डो यदि लग्नगोऽल्पतनयो जातः सुखी निर्घृणः।
स्वल्पाशी विकलेक्षणो रणतलश्लाघी सुशीलो नटः।।
ज्ञानाचाररतः सुलोचनयशः स्वातन्त्रयकस्तूच्चगे
मीने स्त्रीजनसेवितो हरिगते रात्रयन्धको वीर्यवान् ।।

लग्न में यदि सूर्य स्थित हो तो जातक अल्प सन्तति से युक्त, सुखी, निर्मम, अल्पाहारी, नेत्ररोगी, रणोत्सुक, सुशील और रंगमंच का प्रेमी होता है। यदि सूर्य अपनी उच्चराशि का होकर लग्नस्थ हो तो जातक ज्ञानार्जन में तत्पर, सुलोचन, यशस्वी और स्वातन्त्रय प्रिय होता है। यदि मीन राशि का सूर्य लग्नस्थ हो तो जातक अनेक स्त्रियों से सेवित होता है। यदि लग्नस्थ सूर्य स्वराशिगत होकर लग्नस्थ हो तो जातक रात्र्यन्ध और सबल होता है।

लग्नस्थ चन्द्रफल –

> **क्षीणे शशिन्युदयगे बधिरोऽङ्गहीनः।**
> **प्रेष्यश्च पापसहिते तु गतायुरेव ॥**
> **स्वोच्चस्वके धनयशोबहुरूपशाली**
> **पूर्णे तनौ यदि चिरायुरूपैति विद्वान् ॥**

यदि लग्न में क्षीण चन्द्रमा स्थित हो तो जातक बधिर, अपंग, दूत कर्म करने वाला तथा यदि पापयुक्त हो तो अल्पायु होता है। अपनी उच्चराशि अथवा स्वराशि का चन्द्रमा यदि लग्न में स्थित हो तो जातक सुन्दर और धन – यश से सम्पन्न होता है। यदि पूर्ण चन्द्रमा लग्न में स्थित हो तो जातक विद्वान और चिरायु होता है।

लग्नस्थ भौम – बुध - वृहस्पति – शुक्र फल -

> **क्रूरः साहसिकोऽटनोऽतिचपलो रोगी कुजे लग्नगे**
> **विद्यावित्ततपः स्वधर्मनिरतो लग्नस्थिते बोधने।**
> **जीवे लग्नगते चिरायुरमलज्ञानी धनी रूपवान्**
> **कामी कान्तवपुः सदारतनयो विद्वान् विलग्ने भृगौ ॥**

लग्न में यदि मंगल स्थित हो तो जातक क्रूर, साहसी, यायावर, चंचल बुद्धि और रोगी होता है। यदि बुध लग्नगत हो तो जातक विद्याभ्यासी, धनिक,तापसी, अपने धर्म का पालन करने वाला होता है। यदि लग्न में वृहस्पति स्थित हो तो जातक दीर्घायु, विज्ञानी , धनवान और सुदर्शन हाता है। लग्न में यदि शुक्र स्थित हों तो जातक कामातुर, सुन्दर शरीर, स्त्री - पुत्रादि से सुखी और विद्वान होता है।

लग्नस्थ शनिफल -

> **दुर्नासिको वृद्धकलत्ररोगी मन्दे विलग्नोपगतेऽङ्गहीनः।**
> **महीपतुल्यः सुगुणाभिरामो जातः स्वतुङ्गोपगते चिरायुः ॥**

यदि लग्न में शनि स्थित हो तो जातक नासिकारोगी, वृद्धा स्त्री में आसक्त, रोगी एवं अपंग होता है

यदि लग्नस्थ शनि स्वोच्चराशिगत हो तो जातक राजा के समान विभूतियुक्त, सद्गुणों से युक्त तथा चिरायु होता है।

लग्नस्थ राहु – केतु फल –

क्रूरो दयाधर्म विहीनशीलो राहौ विलग्नोपगते तु रोगी।

केतौ विलग्ने सरूजोऽतिलुब्धः सौम्येक्षिते राजसमानभोगी।।

रविक्षेत्रोदये राहू राजभोगाय सम्पदि ।

स्थिरार्थपुत्रान् कुरूते मन्दक्षेत्रोदये शिखी।।

यदि राहु लग्नस्थ हो तो जातक निर्मम, दया – धर्मादिसद्गुणों से हीन, विशील और रोगी होता है। यदि केतु लग्नगत हो तो जातक रोगी और लोभी होता है, किन्तु लग्नस्थ केतु शुभग्रह से दृष्ट हो तो जातक राजा के समान भोगों से युक्त होता है।

द्वितीयभावस्थ ग्रहफल –

त्यागी धातुद्रव्यवानिष्टशत्रुर्वाग्मी वित्तस्थानगे चित्रभानौ ।

कामी कानतश्चारूवागिंगतज्ञो विद्याशीलो वित्तवान् वित्तगेन्दौ ।।

यदि सूर्य द्वितीय भाव में स्थित हो तो जातक त्यागी, शत्रुओं के प्रति विनम्र और वाचाल होता है। यदि चन्द्रमा द्वितीय भावगता हो तो जातक कामातुर, सुन्दर, कान्तिमान् शरीरधारी, मिष्टभाषी, बुद्धि, विद्या और धन से सम्पन्न होता है।

जातकाभरण के अनुसार -

धनसुतोतृतमवाहनवर्जितो हममतिः सुजनोज्झितसौहृदः।

परगृहोपगतो हि नरो भवेद्दिनमणेर्द्रविणे यदि संस्थितः।।

वराहमिहिर के अनुसार द्वितीयभावस्थ सूर्य जातक को अपरिमित धन तो देता है किन्तु वह राजकोप से नष्ट हो जाता है।

भूरिद्रव्यो नृपहतधनो वक्त्ररोगी द्वितीये।

सारावली के अनुसार –

द्विपदचतुष्पदभागी मुखरोगी नष्टविभवसौख्यश्च ।

नृपचोरमुषितसार: कुटुम्बगे स्याद्रवौ पुरूष: ।।

विगतविद्याविनयवित्तं स्खलितवाचं धनगत: ।

सुखात्मजद्रव्ययुतो विनीतो भवेन्नर: पूर्णविभुर्द्वितीये ।।

द्वितीयभावगत भौम- बुध- वृहस्पति – शुक्र फल -

धातोर्वादकृषिक्रियाटनपरः कोपी कुजे वित्तगे
बुद्धयोपार्जितवित्तशीलगुणवान् साधुः कुटुम्बे बुधे।
वाग्मी भोजनसौख्यवित्तविपुलस्त्यागी धनस्थे गुरौ
विद्याकामकलाविलासधनवान्वित्तस्थिते भार्गवे ।।

द्वितीय भाव में यदि मंगल स्थित हो तो जातक धातु या कृषिगत व्यवसाय से सम्बन्धित यात्रा में व्यस्त और उग्र स्वभाव का होता है। यदि बुध द्वितीय भाव में हो तो जातक अपनी बौद्धिक प्रतिभा से अर्जित धन से धनाढय, सुशील, साधु और गुणवान होता है। यदि वृहस्पति द्वितीय भावगत हो तो जातक वाचाल, भोजनादि से सुखी, अति धनाढय और त्यागी होता है। यदि शुक्र द्वितीय भाव में स्थित हो तो जातक विद्वान्, कामातुर,कलाकार, विलासी और धनवान् होता है।

द्वितीयभावस्थ शनि – राहु एवं केतु फल -

असत्यवादी चपलोऽटनोऽधनः शनौ कुटुम्बोपगते तु वञ्चकः।
विरोधवान्वित्तगते विधुन्तुदे जनापराधी शिखिनि द्वितीयगे।।

यदि द्वितीय भाव में शनि स्थित हो तो जातक मिथ्यावादी, चंचल, यायावर, निर्धनऔर वंचक होता है। यदि द्वितीयभाव में राहु स्थित हो तो जातक सामान्यत: सभी का विरोध करने वाला और यदि केतु स्थित हो तो अपराधी होता है।

तृतीयभावस्थ ग्रहफल –

सूर्य – चन्द्र- भौम – बुध फल –

शूरो दुर्जनसेवितोऽतिधनवान् त्यागी तृतीये रवौ ।
चन्द्रे सोदरराशिगेऽल्पधनिको बन्धुप्रियः सात्विकः।।
ख्यातोऽपारपराक्रमः शठमतिर्दुश्चिक्ययाते कुजे
मायाकर्मपरोऽटनोऽतिचपलो दीनोऽनुजस्थे बुधे।।

तृतीय भाव में यदि सूर्य स्थित हो तो जातक शूरवीर, दुष्टों से सेवित, अत्यन्त धनी और त्यागी होता है। यदि चन्द्रमा तृतीय भावस्थ हो तो जातक अल्प धनवान्, बन्धु - बान्धवों का प्रिय और सात्विक बुद्धि का होता है। यदि तृतीय भाव में मंगल स्थित हो तो जातक विख्यात, अत्यन्त पराक्रमी और वंचक होता है। तृतीय भाव में यदि बुध स्थित हो तो जातक मायावी, यायावर, अतिचंचल और दीन – हीन होता है।

शुक्र –शनि - राहु एवं केतु फल -

भ्रातृस्थानगते गुरौ गतधनः स्त्रीनिर्जितः पापकृत्

शुक्रे सोदरगे सरोषवचनः पापी वधूनिर्जितः ।
अल्पाशी धनशीलवंशगुणवान् भ्रातृस्थिते भानुजे
राहौ विक्रमगेऽतिवीर्यधनिकः केतौ गुणौ वितृतवान् ।।

यदि तृतीय भाव में वृहस्पति स्थित हो तो जातक नष्टधन, स्त्रीवर्ग से पराभूत और पापकर्म होता है। तृतीय भाव में यदि शुक्र हो तो जातक कटुभाषी, पापकर्म और स्त्रीवर्ग से पराजित होताहै। तृतीय भाव में यदि शनि स्थित हो तो जातक अल्पभोजी, धनी, सुशील, पारम्परिक वंशानुगत गुणों से युक्त होता है। यदि तृतीय भावगत राहु हो तो जातक बलवान एवं धनिक होता है और यदि केतु हो तो जातक धनवान् और गुणी होता है।

चतुर्थभावस्थ सूर्य-चन्द्र – भौम - बुध फल -

हृद्रोगी धनधान्यबुद्धिरहितः क्रूरः सुखस्थे रवौ।
विद्याशीलसुखान्वितः परवधूलोलश्चतुर्थे विधौ ।।
भौमे बन्धुगते तु बन्धुरतिः स्त्रीनिर्जितः शौर्यवान्
बन्धुस्थे शशिजे विबन्धुरमलज्ञानी धनी पण्डितः ।।

यदि चतुर्थभाव में सूर्य स्थित हो तो जातक हृदरोगी, धन – धान्य से हीन, निर्बुद्ध और क्रूरकर्मा होता है। चतुर्थभाव में यदि चन्द्रमा स्थित हो तो जातक विद्वान, सुशाली,सुखी और परस्त्रीलोलुप होता है। चतुर्थभाव में यदि मंगल हो तो जातक बन्धु - बान्धवों से हीन, स्त्रीवर्ग से पराजित और शौर्यवान होता है। यदि बुध चतुर्थ भावगत हो तो जातक स्वजनों से हीन, विज्ञानी, धनवान और विद्वान होता है।

वृहस्पति – शुक्र फल -

वाग्मी धनी सुखयशोबलरूपशाली
जातः शठप्रकृतिरिन्द्रगुरौ सुखस्थे ।
स्त्रीनिर्जितः सुखयशोधनबुद्धिविद्या
वाचालको भृगुसुते यदि बन्धुयाते ।।

यदि वृहस्पति चतुर्थभावगत हो तो जातक वाचाल, धनवान, सुखी, यशस्वी, सुदर्शन और वंचक प्रवृत्ति का होता है। चतुर्थ भाव में यदि शुक्र स्थित हो तो जातक स्त्रीवर्ग से पराभूत, सुखी, यशस्वी, सम्पन्न , बुद्धिमान, विद्वान और वाचाल होता है।

शनि - राहु – केतु फल -

आचारहीनः कपटी च मातृक्लेशान्वितो भानुसुते सुखस्थे ।

राहौ कलत्रादिजनावरोधी केतौ सुखस्थे च परापवादी ।।

यदि चतुर्थ भाव में शनि स्थित हो तो जातक दुराचारी, कपटी और मातृसुख से हीन होता है। यदि राहु चतुर्थभावगत हो तो जातक स्त्री और स्वजन विरोधी होता है तथा यदि केतु हो तो दूसरों का निन्दक होता है।

पंचम भावस्थ सूर्य – चन्द्र फल -

राजप्रियश्चंचलबुद्धियुक्तः प्रवासशीलः सुतगे दिनेशः ।
मन्त्रक्रियासक्तमना दयालुर्धनी मनस्वी तनये सतीन्दौ ।।

सूर्य यदि पंचम भाव में स्थित हो तो जातक राजप्रिय, चंचल बुद्धि और प्रवासी होता है। यदि चन्द्रमा पंचमभावगत हो तो जातक मन्त्रादि क्रिया में रूचि रखने वाला, दयालु, धनिक और मनस्वी होता है।

बोध प्रश्न -

१. भावों की संख्या होती है –
 क. १० ख. १२ ग.१४ घ. १६
२. कुण्डली के दसवें भाव को कहते हैं –
 क.आय ख. धर्म ग. कर्म घ. सुत
३. यदि लग्न में क्षीणचन्द्रमा हो तो जातक होता है -
 क. चंचल ख. दीर्घायु ग. अल्पायु घ. रोगी
४. राजप्रियश्चंचलबुद्धियुक्तः .... सुतगे दिनेशः।
 क. मनस्वी ख. प्रवासशीलः ग. दयालु घ. कोई नहीं
५. यदि कुण्डली के पंचम भाव में वृहस्पति हो तो जातक –
 क. सेनाधिकारी ख. वैभवादि से सम्पन्न ग. घुड़सवार घ. यशस्वी

मंगल – बुध फल -

क्रूरोऽटनश्चापलसाहसिको विधर्मी
भोगी धनी च यदि पंचमगे धराजे।
मन्त्राभिचारकुशलः सुतदारवितृत -
विद्यायशोबलयुतः सुतगे सति ज्ञे ।।

यदि मंगल पंचम भाव में स्थित हो तो जातक क्रूर, यात्राप्रिय, चंचल, साहसी, धर्माचरण –

विमुख, भोगादि में लिप्त और धनवान होता है। यदि बुध पंचमभावगत हो तो जातक मन्त्राभिचार में पटु, सद्गृहिणी, धन, विद्या, यश और बल से युक्त होता है।

वृहस्पति - शुक्र फल –

मन्त्री गुणी विभवसारसमन्वित: स्या
दल्पात्मज: सुरगुरौ सुतराशियाते
सत्पुत्रमित्रधनवानतिरूपशाली
सेनातुरंगपतिरात्मजगे च शुक्रे ।।

यदि पंचम भाव में वृहस्पति स्थित हो तो जातक वैभवादि से सम्पन्न, मन्त्रादि में पटु और अल्प पुत्रों से युक्त होता है। यदि पंचम भाव में शुक्र स्थित हो तो जातक सत्पुत्र और सन्मित्रों से युक्त, धनी और सुन्दर होता है तथा घुड़सवार सेना का अधिनायक होता है।

शनि, राहु एवं केतु फल -

मत्तश्चिरायुरसुखी चपलश्च धर्मी
ज्ञातो जितारिनिचय: सुतगेऽर्कपुत्रे ।
भीरूर्दयालुरधन: सुतगे फणीशे
केतौ शठ: सलिलभीरूरतीव रोगी ।।

पंचम भाव में यदि शनि स्थित हो तो जातक मस्त, दीर्घायु, दु:खी, चंचल, धर्माचारी, विख्यात और शत्रुंजयी होता है । यदि पंचम भाव में राहु स्थित हो तो जातक भीरू, दयालु और निर्धन होता है तथा यदि केतु हो तो जातक शठ (दुष्ट प्रकृति का) , जल से भयभीत और रोगी होता है।

षष्ठ भावस्थ सूर्य - चन्द्र फल –

कामी शूरो राजपूज्योऽभिमानी ख्यात: श्रीमान् शत्रुयाते दिनेशे ।
अल्पायु: स्यात् क्षीणचन्द्रेऽरिसंस्थे पूर्णे जातोऽतीव भोगी चिरायु: ।।

यदि सूर्य छठे भाव में स्थित हो तो जातक कामातुर, शूरवीर, राजपूजित, अभिमानी, विख्यात और धनपति होता है। यदि छठे भाव में क्षीण चन्द्रमा स्थित हो तो जातक अल्पायु और यदि पूर्ण चन्द्रमा हो तो जातक अनेकश: भोगों से युक्त दीर्घायु होता है।

भौम – बुध फल –

स्वामी रिपुक्षयकर: प्रबलोदराग्नि: ।
श्रीमान् यशोबलयुतोऽवनिजे रिपुस्थे ।।
विद्याविनोदकलहप्रियकृद्विशीलो

बन्धूपकाररहितः शशिजेऽरियाते ।।

छठे भाव में यदि मंगल स्थित हो तो जातक जननायक, शत्रुहन्ता, पबल जठराग्नि से युक्त, धनवान, बलान्वित और यशस्वी होता है। यदि छठे भाव में बुध स्थित हो तो जातक विद्वान, झगड़ालू, शीलरहित और बन्धु – बान्धवों का अपकारकर्ता होता है।

वृहस्पति,शुक्र एवं शनि फल -

कामी जितारिरबलोऽरिगतेऽमरेज्ये
शोकापवादसहितो भृगुजे रिपुस्थे।
बह्वाशनो विषमशीलसपत्नशील:
कामी धनी रविसुते सति शत्रुयाते ।।

यदि छठे भाव में वृहस्पति स्थित हो तो जातक कामातुर, शत्रुंजयी और निर्बल होता है। यदि षष्ठ भाव में शुक्र स्थित हो तो जातक शोक और अपवाद से युक्त होता है। यदि षष्ठ भाव में शनि स्थित हो तो जातक बहुभोजी, शीलरहित, शत्रुओं से युक्त, कामातुर और धनिक होता है।
वृहस्पति छठें भाव में हो तो जातक शत्रुंजयी किन्तु निर्बल होता है। इसमें विरोधाभास प्रतीत होता है। किन्तु वास्तव में विरोधाभास नहीं है। मनुष्य शरीर से निर्बल होकर भी कूटनीति से शत्रुओं के मानमर्दन में सक्षम हो सकता है।

राहु - केतु फल -

राहौ रिपुस्थानगते जितारिश्चिरायुरत्यन्तसुखी कुलीनः।
बन्धुप्रियोदारगुणप्रसिद्धविद्यायशस्वी रिपुगे च केतौ ।।

छठें भाव में यदि राहु स्थित हो तो जातक शत्रुंजयी, दीर्घायं, कुलीन और परमसुखी होता है। यदि छठें भाव में केतु स्थित हो तो जातक स्वजनों एवं बन्धु - बान्धवों का प्रेमी , गुणों से विख्यात, उदार, विद्वान और यशस्वी होता है।

सप्तम भावस्थ ग्रहफल -

सूर्य-चन्द्र - भौम – बुध फल

स्त्रीद्वेषी मदनस्थिते दिनकरेऽतीव प्रकोपी खल –
श्चन्द्रे कामगते दयालुरटनः स्त्रीवश्यको भोगवान् ।
स्त्रीमूलप्रविलापको रणरूचिः कामस्थिते भूमिजे
व्यङ्गः शिल्पकलाविनोदचतुरस्तारासुतेऽस्तं गते।।

सप्तम भाव में यदि सूर्य स्थित हो तो जातक स्त्रीद्वेषी, अत्यन्त क्रोधी और दुष्टाचारी होता है। यदि सप्तम भाव में चन्द्रमा स्थित हो तो जातक दयालु , यायावर, स्त्री के वशीभूत और भोगी होता है। यदि सप्तम भाव में मंगल स्थित हो तो जातक स्त्रीपक्ष से पीडित और युद्धप्रेमी होता है। यदि उक्त स्थान में बुध स्थित हो तो जातक विकलांग, शिल्पकला में पटु होता है।

वृहस्पति - शुक्र – शनि एवं राहु फल –

> **धीरश्चारूकलत्रवान् पितृगुरूद्वेषी मदस्थे गुरौ**
> **वेश्यास्त्रीजनवल्लभश्च सुभगो व्यङ्ग: सिते कामगे।**
> **भाराध्वश्रमतप्तधीरधनिको मन्दे मदस्थानगे**
> **गर्वी जारशिखामणि: फणिपतौ कामस्थिते रोगवान्।।**

यदि सप्तम भाव में वृहस्पति स्थित हो तो जातक धैर्यवान, सुन्दर स्त्री का पति, पिता और गुरू का द्वेषी होता है। यदि सप्तम भाव में शुक्र स्थित हो तो जातक वेश्याओं का प्रियपात्र, भाग्यशाली और अपंग होता है। उक्त भाव में यदि शनि हो तो जातक भारवाहक, धैर्यवान् और धनी होता है। यदि उक्त भाव में राहु स्थित हो तो जातक अहंकारी, अनेक स्त्रियों का भोग करने वाला रोगी होता है।

केतुफल -

> **अनङ्भावोपगते तु केतौ कुदारको वा विकलत्रभोग: ।**
> **निद्री विशील: परिदीनवाक्य: सदाऽटनो मूर्खजनाग्रगण्य: ।।**

यदि सप्तम भाव में केतु स्थित हो तो जातक दुष्टा स्त्री का पति होता है अथवा स्त्री सुख से वंचित, निद्रालु, शीलरहित, दीनवाक् , यायावर और अतिमूर्ख होता है।

अष्टम भावस्थ सूर्य - चन्द्र फल -

> **मनोऽभिराम: कलहप्रवीण: पराभवस्थे च रवौ न तृप्त: ।**
> **रणोत्सुकस्त्यागविनोदविद्याशल: शशांके सति रन्ध्रयाते ।।**

यदि सूर्य अष्टमभावगत हो तो जातक सुन्दर , कलहपटु और सर्वदा अतृप्त रहताहै। यदि चन्द्रमा अष्टम भाव में स्थित हो तो जातक रणोत्सुक, त्यागी, विनोदप्रिय और विद्वान होता है।

मंगल – बुध फल –

> **विनीतवेषो धनवान गणेशे महीसुते रन्ध्रगते तु जात:।**
> **विनीतबाहुल्यगुणप्रसिद्धो धनी सुधारश्मिसुतेऽष्टमस्थे।।**

यदि मंगल अष्टमभावगत हो तो जातक विनीत, धनवान् और गणाधिपति होता है। यदि बुध अष्टम भाव में स्थित हो तो जातक विनीत, अपने सद्गुणों के लिए विख्यात और धनवान होता है।

वृहस्पति – शुक्र - शनि – राहु फल –

मेधावी नीचकर्मा यदि दिविजगुरौ रन्ध्रयाते चिरायु
दीर्घायुः सर्वसौख्यातुलबलधनिको भार्गवे चाष्टमस्थे।
शूरो रोषाग्रगण्यो विगतबलधनो भानुजे रन्ध्रयाते
राहौ क्लेशापवादी परिभवगृहगे दीर्घसूत्रश्च रोगी ।।

यदि अष्टम भाव में वृहस्पति स्थित हो तो जातक मेधावी और नीचकर्मरती होता है। अष्टम भाव में यदि शुक्र हो तो जातक दीर्घायु, परम सुखी और धनसम्पन्न होता है। यदि अष्टम भाव में शनि स्थित हो तो जातक शूरवीर, परम क्रोधी होता है। यदि अष्टम भाव में राहु स्थित हो तो जातक दु:खी, अपवाद युक्त और रोगी होता है।

नवमभावस्थ ग्रहफल -

आदित्ये नवमस्थिते पितृगुरूद्वेषी विधर्माश्रित
श्चन्द्रे पैतृकदेवकार्यनिरतस्त्यागी गुरूस्थे यदा ।
भूसूनौ यदि पित्रयनिष्टसहितः ख्यातः शुभस्थानगे
सौम्ये धर्मगते तु धर्मधनिकः शास्त्री शुभाचारवान् ।।

सूर्य यदि नवम भावगत हो तो जातक पिता और गुरूजनों का विद्वेषी, अन्य धर्म को ग्रहण करने वाला होता है। यदि चन्द्रमा नवम भाव में स्थित हो तो पिता का आज्ञाकारी, देवकार्य में निरत और त्यागी होता है। यदि नवम भाव में मंगल स्थित हो तो जातक पिता का अनिष्ट करने वाला और विख्यात होता है। यदि नवम भाव में बुध स्थित हो तो धर्माचारी, शास्त्रज्ञ और सौम्य आचारयुक्त होता है।

वृहस्पति - शुक्र - शनि - राहु फल -

ज्ञानी धर्मपरो नृपालसचिवौ जीवे तपःस्थानगे।
विद्यावित्तकलत्रपुत्रविभवः शुक्रे शुभस्थे सति ।।
मन्दे भाग्यगृहस्थिते रणतलख्यातो विदारो धनी।
भाग्यस्थे भुजगे तु धर्मजनकद्वेषी यशोवित्तवान् ।।

नवम भाव में यदि वृहस्पति स्थित हो तो जातक ज्ञानी, धार्मिक, राजमन्त्री होता है। यदि नवम भाव में शुक्र हो तो जातक विद्वान, धनिक, स्त्री – पुत्रादि और वैभव से सम्पन्न होता है। यदि

नवम भाव में शनि स्थित हो तो जातक रणभूमि में ख्याति अर्जित करने वाला, स्त्रीसुख से हीन और धनवान होता है। यदि राहु नवमभावगत हो तो जातक धर्म और पितृ द्रोही किन्तु यशस्वी और धनसम्पन्न होता है।

केतु फल -

केतौ गुरूस्थानगते तु कोपी वाग्मी विधर्मी परनिन्दकः स्यात् ।
शूरः पितृद्वेष करोऽतिदम्भाचारो निरूत्साहरतोऽभिमानी ।।

नवम भाव में यदि केतु स्थित हो तो जातक क्रोधी, वाचाल, धर्मच्युत, दूसरों की निन्दा करने वाला, शूरवीर, पितृद्वेषी, अत्यन्त दम्भ युक्त, उत्साहहीन और अभिमानी होता है।

दशम भावस्थ ग्रहफल –

सूर्य – चन्द्र फल –

मानस्थिते दिनकरे पितृवित्तशील -
विद्यायशोबलयुतोऽवनिपालतुल्यः ।
चन्द्रो यदा दशमगो धनधान्यवस्त्र
भूषावधूजनविलासकलाविलोलः ।।

दशम भाव में यदि सूर्य स्थित हो तो जातक पितृसुखी, सुशील, विद्वान, यशस्वी और राजा के समान वैभवशाली होता है। यदि दशम भाव में चन्द्रमा स्थित हो तो धन - धान्य, वस्त्र - आभूषणादि से सम्पन्न , स्त्रीजनों से विलास में निपुण होता है।

भौम – बुध फल -

मेषूरणस्थेऽवनिजे तु जाताः प्रतापवित्तप्रबलप्रसिद्धाः ।
व्यापारगे चन्द्रसुते समस्तविद्यायशोवित्तविनोदशीलः ।।

दशम भाव में यदि भौम स्थित हो तो जातक प्रतापी, आधुनिक, शक्तिशाली और विख्यात होता है। यदि दशम भाव में बुध स्थित हो तो जातक विद्वान्, धनी , यशस्वी और विनोदप्रिय होता है।

वृहस्पति – शुक्र फल –

सिद्धारम्भः साधुवृत्तः स्वधर्मी विद्वानाढयो मानगे चामरेज्ये।
शुक्रे कर्मस्थानगे कर्षकाच्च स्त्रीमूलाद्वा लब्धवित्तो विभुः स्यात् ।।

यदि वृहस्पति दशमभावगत हो तो जातक सिद्धि प्राप्त करने वाला, साधु प्रकृति, धर्मात्मा और विद्वान होता है। यदि शुक्र दशम भाव में स्थित हो तो जातक कर्मठ, कृषिकर्म से अथवा स्त्री के द्वारा धन – धान्यादि विभव प्राप्त करता है।

शनि - राहु फल -

मन्दे यदा दशमगे यदि दण्डकर्ता
मानी धनी निजकुलप्रभवश्च शूरः ।
चोरक्रियानिपुणबुद्धिरतो विशीलो
मानं गते फणिपतौ तु रणोत्सुकः स्यात् ।।

दशम भाव में यदि शनि स्थित हो तो जातक दण्डनायक , अभिमानी, धनिक, स्वकुल के प्रभावसे शक्तिसम्पन्न शूरवीर होता है। यदि दशम भाव में राहु स्थित हो तो जातक चोरबुद्धि, शीलरहित, मूर्ख तथा रणोत्सुक होता है।

एकादशभावस्थ फल -

सूर्य – चन्द्र - भौम – बुध फल –

भानौ लाभगते तु वित्तविपुलस्त्रीपुत्रदासान्वितः ।
सन्तुष्टश्च विवादशीलधनिको लाभस्थिते शीतगौ ।।
आयस्थे धरणीसुते चतुरवाक्कामी धनी शौर्यवान्
सौम्ये लाभगृहं गते निपुणधीर्विद्यायशस्वी धनी ।।

यदि सूर्य एकादश भावगत हो तो जातक अत्यन्त धनी, स्त्री - पुत्रादि से सुखी होता है। यदि चन्द्रमा एकादश भाव में स्थित हो तो जातक सन्तोषी, विवादी, धनवान होता है। यदि मंगल एकादश भाव में स्थित हो तो जातक वाक्पटु , कामासक्त, धनिक और शक्तिमान होता है । यदि बुध एकादश भावगत हो तो जातक कार्यकुशल, बुद्धिमान, विद्वान, यशस्वी और धन सम्पन्न होता है।

वृहस्पति - शुक्र - शनि – राहु फल -

आयस्थेऽमरमन्त्रिणि प्रबलधीर्विख्यातनामा धनी
लाभस्थे भृगुजे सुखी परवधूलोलाटनो वित्तवान्।
भोगी भूपतिलब्धवित्तविपुलः प्राप्तिं गते भानुजे
राहौ श्रोत्रविनाशको रणतलश्लाघी धनी पण्डितः ।।

यदि एकादश भाव में वृहस्पति स्थित हो तो जातक अत्यन्त बुद्धिमान, विख्यात और धनिक होता है। यदि एकादश भाव में शुक्र स्थित हो तो जातक सुखी, परस्त्री - लोलुप, यायावर और धनवान होता है। यदि शनि एकादशभावस्थ हो तो जातक राजा से विपुल धन प्राप्त करता है तथा भोगी होता है। यदि एकादश भाव में राहु स्थित हो तो वह जातक की श्रवणेन्द्रिय का विनाश

करता है तथा वह रणोत्सुक एवं धनवान और विद्वान् होता है।

द्वादशभावस्थ ग्रहफल -

सूर्य – चन्द्र – भौम फल -

व्ययस्थिते पूषणि पुत्रशाली व्यङ्ग: सुधीर: पतितोऽटन: स्यात् ।

चन्द्रेऽन्त्ययाते तु विदेशवासी भौमे विरोधी धनदारहीन: ।।

व्ययभाव में यदि सूर्य स्थित हो तो जातक पुत्रवान्, अपंग, धैर्यवानद्व पतित और यायावर होता है यदि द्वादश भाव में चन्द्रमा स्थित हो तो जातक प्रवासी होता है। यदि मंगल द्वादशभावगत हो तो विरोधी स्वभाव का धन – पुत्रादि से हीन होता है।

बुध – वृहस्पति – शुक्र - शनि फल –

बन्धुद्वेषकरो धनी विगतधीस्तारासुते रिष्फगे

चार्वाकी चपलोऽटन: खलमतिर्जीवे यदाऽन्त्यं गते।

शुक्रे बन्धुविनाशकोऽन्त्यगृहगे जारोपचारोऽधनी

मन्दे रिष्फगृहं गते विकलधीर्मूर्खो धनी वञ्चक: ।।

राहु – केतु फल -

विधुन्तुदे रिष्फगते विशील: सम्पत्तिशाली विकलश्च साधु:।

पुराणवित्तस्थितिनाशक: स्याच्चलो विशील: शिखिनि व्ययस्थे।।

यदि जन्मांग के द्वादश भाव में राहु स्थित हो तो व्यक्ति शीलरहित, सम्पत्तिशाली, विकल और साधु प्रकृति का होता है तथा यदि केतु द्वादशभावगत हो तो जातक संग्रहीत धन का नाश करने वाला, चंचल और शीलरहित होता है।

2.4 सारांश: -

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि जातक शास्त्र के अन्तर्गत जब हम कुण्डली का ज्ञान करते है, तो कुण्डली के जो १२ कोष्ठक होते है, उसे ही 'भाव' की संज्ञा दी गई है भाव सदैव स्थिर होते है। तन्वादि से लेकर व्यय भाव पर्यन्त द्वादश भाव होते है। तनु, धन,सहज, सुहृत, सुत, रिपु, जाया, मृत्यु, धर्म, कर्म, आय एवं व्यय ये बारह भावों के नाम है। इन द्वादश भावस्थ ग्रहों का फल भिन्न - 2 प्रकार का होता है। लग्न में यदि सूर्य स्थित हो तो जातक अल्प सन्तति से युक्त, सुखी, निर्मम, अल्पाहारी, नेत्ररोगी, रणोत्सुक, सुशील और रंगमंच का प्रेमी होता है। यदि सूर्य अपनी उच्चराशि का होकर लग्नस्थ हो तो जातक ज्ञानार्जन में तत्पर, सुलोचन, यशस्वी और स्वातन्त्रय प्रिय होता है। यदि मीन राशि का सूर्य लग्नस्थ हो तो जातक अनेक

स्त्रियों से सेवित होता है। यदि लग्नस्थ सूर्य स्वराशिगत होकर लग्नस्थ हो तो जातक रात्र्यन्ध और सबल होता है। इसी प्रकार अन्य भावों में भी फल होता है।

2.5 पारिभाषिक शब्दावली

सहज – कुण्डली में तृतीय भाव

भाव – कुण्डली के द्वादश कोष्ठक को भाव कहते है। 12 भाव होते है।

मार्तण्ड - सूर्य

सुलोचन - सुन्दर नेत्र

ज्ञानार्जन – ज्ञान को अर्जित करना

स्वराशिगत - अपने राशि में गया हुआ

अल्पाहारी – अल्प आहार लेने वाला

चिरायु – दीर्घायु

विद्याभ्यासी – विद्या का अभ्यास करने वाला

सुदर्शन – सुन्दर दिखना

महीप – राजा

मातृसुख - माता का सुख

दुराचारी – अनुचित व्यवहार करने वाला

2.6 बोधप्रश्नों के उत्तर

1. ख

2. ग

3. ग

4. ख

5. ख

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वृहज्जातकम् - चौखम्भा प्रकाशन

वृहत्पराशरहोराशास्त्र - चौखम्भा प्रकाशन

ज्योतिष सर्वस्व – चौखम्भा प्रकाशन

होराशास्त्रम् - चौखम्भा प्रकाशन

जातकपारिजात – चौखम्भा प्रकाशन

भारतीय कुण्डली विज्ञान – चौखम्भा प्रकाशन

2.8 सहायक पाठ्यसामग्री

लघुजातक

फलदीपीका

ज्योतिर्विद्याभरणम्

सुलभ ज्योतिष ज्ञान

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न -

1. लग्न, द्वितीय एवं तृतीय भावस्थ फल लिखिये।
2. चतुर्थ , पंचम एवं षष्ठ भावस्थ फल लिखिये ।
3. सप्तम - अष्टम- नवम भावस्थ फल लिखिये।

इकाई – 3 भावेश फल

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0जे0वाई – 201 के तृतीय खण्ड की तीसरी इकाई '**भावेश फल**' से सम्बन्धित है। भाव के स्वामी को भावेश कहते है, तत्सम्बन्धित फलों का विवेचन प्रस्तुत इकाई में किया जा रहा है।

भावानां ईश: भावेश: । तत्सम्बिन्धत फलं भावेश फलम् । द्वादश भावों में स्थित ग्रहों के फल सम्बन्धित अध्ययन को भावेश फल कहते है।

इस पूर्व की इकाई में आपने भावस्थ फल का अध्ययन कर लिया है, यहॉ आप भावेश फल का अध्ययन करेंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप बता सकेगें कि -

1. भावेश क्या है।
2. भावेश फल क्या है ।
3. समस्त भावों के स्वामी का फल उनकी स्थिति के अनुसार क्या - क्या होता है ।
4. भावेश फल का महत्व क्या है ।
5. कुण्डली में भावेश फल का विचार किस प्रकार करते है ।

3.3 भावेश फल

भाव के स्वामी को भावेश कहते हैं। इन भावेशों के प्रत्येक भाव में स्थित होने पर जो फल मिलता है उसका विचार कुण्डली का फलादेश करते समय अवश्य ध्यान में रखना चाहिये। आइए अब क्रमश: भावेश फल को जानते है।

लग्नेश फल विचार –

लग्नेश यदि लग्न में स्थित हो तो मनुष्य कुलदीपक, रूपवान, सुदृढ़, शरीर व आत्मविश्वासी होता है और स्वपराक्रम से भाग्य का उदय करता है।

लग्नेश – द्वितीय स्थान में हो तो वह कुटुम्ब का सुख भोगने वाला, धनसंग्रही, देन – लेन व्यवहार में कुशल व सुख से अन्न भक्षण करने वाला होता है।

लग्नेश – तृतीय स्थान में हो तो वह पराक्रमी, साहसी, आग्रही, बन्धु से दूर न रहने वाला, स्वतन्त्रता से अपनी कला – कौशला दिखाने वाला होता है।

लग्नेश – चतुर्थ स्थान में हो तो उसे उत्तम वाहन सुख, घर का नेता, खेती, मकान की प्राप्ति,

आप्तवर्ग पर प्रेम करने वाला व सुख भोगने वाला होता है।

लग्नेश – पंचम स्थान में हो तो पिता को पूर्ण यशप्राप्ति, धनवान, विद्वान, उपासना मार्ग में प्रवीण, सन्तति पर प्रेम करने वाला, मित्रों का मनोरंजन करने वाला होता है ।

लग्नेश - षष्ठ भाव में हो तो वह रोगी व व्यंग शरीर का, शरीर सुख से वंचित ईमानदार, नौकररहित व आचार, कर्तव्यगार होते हुये उसे इच्छानुसार यश व प्रसिद्धि नहीं मिलती ।

लग्नेश - सप्तम भाव में हो तो वह वाद – विवाद का शौकीन, परदेश में भाग्योदय, प्रवासी, दूसरे के दाम पर उद्योग धन्धा करने वाला व विषम लम्पट होता है। साथ ही लग्नेश शुभ ग्रह से युक्त सप्तम भाव में हो तो उसका विवाह उच्चकुल की लड़की से होता है।

लग्नेश – अष्टम भाव में हो तो शरीर सुख से वंचित, कष्ट से आयुष्य का क्रमण,बलहीन, सट्टा,शर्यत, द्यूत आदि मार्ग से गुप्त धन प्राप्त करने वाला होता है।

लग्नेश – नवम भाव में हो तो वह भाग्यवान, कीर्तिमान, धर्माभिमानी, दैविक शक्तिवाला, सन्तसमागमी, तीर्थयात्रा करने वाला व परोपकारी होता है।

लग्नेश - दशम भाव में हो तो राज कार्य में भाग लेने वाला, कौशलयुक्त, कीर्तिमान, सार्वजनिक कार्य में रूचि रखने वाला व अधिकार सम्पन्न होता है।

लग्नेश – एकादश भाव में हो तो उसे धन की पूर्ण प्राप्ति, उत्तम मित्र व अकल्पित लाभ होता है।

लग्नेश – यदि द्वादश भाव में हो तो उसका मन सदा उदास, प्रयत्न में अपयश, व्यवहार में आपत्ति, हाथ में पैसा नहीं टिकता है।

द्वितीयेश फल विचार –

द्वितीयेश - लग्न में स्थित हो तो बिना प्रयत्न किये कुटुम्ब सुख व साधन लाभ, परन्तु द्वितीयेश ग्रह यदि क्रूर हो या लग्नेश शत्रु गृह में हो तो कुटुम्ब व द्रव्यचिन्ता एवं कुटुम्ब की पूर्ण जिम्मेदारी का निर्वहन करता है। द्वितीयेश, तृतीयेश से युक्त होकर लग्न भाव में हो तो भाई को धन का लाभ होता है।

द्वितीयेश - द्वितीय भाव में हो तो कौटुम्बिक धनलाभ, धन के लेन – देन में लाभ, कौटुम्बिक सुख, उत्तम पदार्थ का भोजन, कई लोगों का उदर – पोषण व पितृ धन का लाभ मिलता है।

द्वितीयेश – तृतीय भाव में हो तो द्रव्य प्राप्ति करने वाला, भाईयों को सुखी रखने वाला, द्रव्यार्जन हेतु घोर प्रयत्न कर यश पाने वाला होता है।

द्वितीयेश यदि चतुर्थ भाव में हो तो स्थावर स्टेट की प्राप्ति व सम्पत्ति का उपभोग लेने वाला होता है।

द्वितीयेश पंचम भाव में हो तो गृह – द्रव्य की प्राप्ति, सन्तान के लिये पूर्ण धन संचय, विद्याव्यसनी,

मित्रकार्य में धन का खर्च होता है।

द्वितीयेश षष्ठ भाव में हो तो विरोधी लोगों से धन सम्बन्ध से झगड़े, बखेड़े,धननाश, नौकर से सदा धन का नाश व संकट की प्राप्ति होती है।

द्वितीयेश सप्तम भाव में हो तो भागीदार या प्रतिपक्षी पर खर्च करने वाला, उसके पास संचित धन कम होता है।

द्वितीयेश यदि अष्टम भाव में हो तो अधिक मेहनत करने वाला, अल्प लाभ, धननाश, कुटुम्ब के नित्य खर्च की चिन्ता व कष्ट होता है।

द्वितीयेश यदि नवम भाव में हो तो धर्म व सार्वजनिक कार्य में धन का खर्च, रिश्तेदारों को खुश रखने हेतु व स्वत: गृह में मंगल कार्य निमित्त द्रव्य का व्यय करने वाला होता है।

द्वितीयेश यदि दशमस्थ हो तो साहूकारी धन्धा करने व मान सम्मान पाने वाला, राजकरण में धन व्यय करने वाला व पितृभक्त होता है।

द्वितीयेश यदि एकादशस्थ हो तो जातक को साम्पत्तिक लाभ अधिक प्रमाण पर मिलना निश्चित है

द्वितीयेश यदि द्वादशस्थ हो तो जातक का व्यसन में धन का खर्च, कई बड़े व्यवहार में नुकसान, राजदण्ड, कैद , द्रव्यनाश होना निश्चित है।

तृतीयेश फल विचार -

तृतीयेश लग्नस्थ हो तो जातक साहसी स्वभाव का, झगड़ालु , अनुज को सुख देने वाला व कीर्तिमान हुआ करता है।

तृतीयेश द्वितीय भाव में हो तो भाइयों के लिए धन का व्यय, भाईयों क लिए वैमनस्य व अन्त में धन का व्यर्थ व्यय होगा।

तृतीयेश तृतीय भाव में हो तो साहस, स्वतन्त्र वृत्ति एवं छोटे भाई को सुख देने वाला होता है।

तृतीयेश चतुर्थ भाव में हो तो आप्तवर्ग के आपत्ति का निवारण करने के लिये पराक्रम दिखाना पड़ता है। मकान बॉधना, खेती व गृहस्थी के कामों में यश की प्राप्ति होती है।

तृतीयेश पंचम भाव में हो तो सन्तति, पराक्रमी, ईश्वर प्राप्ति के लिये प्रयत्न करने वाला होता है।

तृतीयेश षष्ठस्थ हो तो पराक्रमहीन, शत्रु के चक्कर में आने वाला व भाईयों से शत्रुता रखने वाला होता है।

तृतीयेश सप्तमस्थ हो तो प्रतिपक्षियों पर छाप, भागीदारों में विजय, प्रवास, उसके पराक्रम से स्त्रियॉ प्रसन्न रहेगी।

तृतीयेश अष्टम में हो तो पराक्रम में अपयश व बन्धुसुखहीन।

तृतीयेश नवम में हो तो पराक्रमी, परदेशगमन, तीर्थयात्रा, कीर्तिलाभ व सत्कीर्ति प्राप्त करने वाला होता है।

तृतीयेश दशम में हो तो सार्वजनिक कार्य में पराक्रम व यश, राजदरबार में मान सम्मान पाने वाला होता है।

तृतीयेश एकादश में हो तो स्वपराक्रम से लाभ, अनेक प्रसंग में इनाम की प्राप्ति, मित्र सुख व ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है।

तृतीयेश द्वादशस्थ हो तो इष्टकार्य में अपयश , बेचैनी व वृथा व्यय एवं दुर्गुणी होगा।

चतुर्थेश फल विचार –

चतुर्थेश लग्नस्थ हो तो मातृसुख, स्टेट प्राप्ति व वाहन सुख प्राप्त होता है।

चतुर्थेश द्वितीयस्थ हो तो धनसंग्रह, साहूकारी, कुटुम्ब व आप्तवर्ग सुख वाला होता है।

चतुर्थेश तृतीयस्थ हो तो स्टेट प्राप्ति क लिये धन का खर्च करने वाला, स्व अल्प धन रखने वाला होगा।

चतुर्थेश चतुर्थस्थ हो तो विद्या में प्रवीण, वाहन सौख्य, मकान की प्राप्ति, बाग – बगीचा, खेती – पशु पालन से लाभ होता है।

चतुर्थेश पंचमस्थ हो तो श्रीमन्त, मातृभक्त, सन्तति के लिये स्थावर स्टेट की व्यवस्था ।

चतुर्थेश षष्ठ में हो तो पशु से अपघात, स्थावार स्टेट रहित, हमेशा सुख के लिये चिन्तित, गृहसौख्यरहित होता है।

चतुर्थेश सप्तम में हो तो धान्य व जानवरों के व्यापार से लाभ, शीघ्र विवाह योग होता है।

चतुर्थेश अष्टम में हो तो शरीर सुखरहित, भाग्यहीनता, मातृसुख कम, भूमिगत धनलाभ, साम्पत्तिक स्थिति सन्तोषजनक।

नवम में हो तो वाहन सुख, स्टेट के लेन देन में नुकसान, आप्तवर्ग से विरोध, रहने के लिये सुन्दर मकान की प्राप्ति।

दशम में हो तो पितृभक्त, राजा से मान सन्मान, खेतीप्रिय, धन की प्राप्ति।

एकादश में हो तो चतुर्थ भाव का अल्पप्रभावकर फल मिलेगा ।

द्वादश में हो तो परदेशवास व दूसरों के गृह में वास्तव्य, खेती बाड़ी के लिये धन का खर्च होता है

पंचमेश फल विचार –

पंचमेश लग्नस्थ हो तो मनुष्य विद्वान, सन्ततियुक्त, विद्या व्यसनी होता है।

द्वितीय भाव में हो तो मनुष्य को उपजीविका का साधन, लौकिक की वृद्धि व धन लाभ।

तृतीय भाव में हो तो परोपकारी, ईश्वरभक्त, पुण्यकर्मी, वाद – विवाद में यश, विद्या में प्रथम श्रेणी का प्रवीण।

चतुर्थ भाव में हो तो स्थावर स्टेट का लाभ व धनवान होता है।

पंचम भाव में हो तो उत्तम सन्तति सुख, विद्याभ्यास में प्रगति, उपासना मार्ग का अवलम्बन करने वाला।

षष्ठ भाव में हो तो विद्या सम्पादन करने में आपत्ति, शत्रु से त्रास, विद्या के कारण मत्सरी लोगों से त्रास, वैद्यक विद्या के लिये रूचि।

सप्तम में हो तो सन्ततिसुख प्राप्ति, व्यापार, वकील, उपदेशक, वाद – विवाद में प्रवीण, स्त्री के मर्जी से चलने वाला होगा ।

अष्टम में हो तो सन्तति से कष्ट, विद्या से विशेष सुख की अप्राप्ति।

नवम में हो तो ग्रन्थकार, तत्ववेत्ता, न्यायी, धार्मिक, उपदेशक, समाज सुधारक व विद्या से ही भाग्य की वृद्धि।

दशम में हो तो संगीत कला में कुशल, चतुर, नौकरी पेशा से धनलाभ।

एकादश में हो तो उत्तम सन्तति सुख, बुद्धिमान , विद्वान मित्रों का प्रिय।

द्वादश में हो तो दुर्व्यसनी, व अनेक संकटों से युक्त , विद्या का दुरूपयोग।

अभ्यास प्रश्न -

१. निम्नलिखित में भाग्य का स्वामी होता है-
   क. भावेश ख. लग्नेश ग. सुखेश घ. लाभेश
२. लग्नेश पापग्रह के साथ त्रिक् स्थानों में हो तो –
   क. शारीरिक सुख होता है। ख. शारीरिक सुख नहीं होता है। ग. दोनों घ. कोई नहीं।
३. द्वितीयेश पंचम भाव में हो तो सन्तान के लिए होता है –
   क. सुखद ख. दु:खद ग. दोनों घ. इनमें से कोई नहीं
४. तृतीयेश स्वगृह में हो तो जातक होता है –
   क. परोपकारी ख. साहसी ग. झगड़ालू घ. धनी
५. सुखेश लग्नस्थ हो तो –
   क. मातृ सुख होता है। ख. स्टेट की प्राप्ति होती है। ग. वाहन की प्राप्ति होती है।
   घ. उपर्युक्त सभी
६. सप्तमेश तृतीयस्थ हो तो, होता है –

क. स्त्री के कारण भाई से विच्छेद ख. स्त्री के कारण परिवार से विच्छेद ग. दोनों घ. कोई नहीं

षष्ठेश फल विचार

षष्ठेश लग्न में हो तो शारीरिक कष्ट, लोगों में शत्रुत्व परन्तु उन पर विजय प्राप्त करने वाला, राहु केतु से युक्त, हो तो शरीर में व्रण पीड़ा होता है।

द्वितीय भाव में हो तो पितृ स्टेट के सम्बन्ध से तकरार व मुकदते , पुत्रों को धन से लाभ, कौटुम्बिक झगड़े होते है।

तृतीय भाव में हो तो परस्वाधीन, बन्धुप्रेमरहित, दूसरे को त्रास, प्रचलित रोग।

चतुर्थ भाव में हो तो नौकर का बेईमान होना, स्थावर स्टेट सम्बन्ध के झगड़े अपमान व पशु से अपघात होता है।

पंचम भाव में हो तो सन्तति सुख से वंचित, समाधानरहित, मित्र व सम्पत्ति का सुख कम, आयुष्य में भयंकर त्रास होता है।

षष्ठ भाव में हो तो सुदृढ़ शरीर परन्तु सदैव त्रास युक्त, आयुष्य क्रमण लड़ाई करार, कलह नित्य परन्तु कभी – कभी विजय प्राप्ति होती है।

सप्तम भाव में हो तो भागीदारी में अड़चन, स्त्री के आप्तवर्ग से धोखा व त्रास, स्त्री सम्बन्ध से तकरार।

अष्टम में हो तो कौटुम्बिक सुखहीन, अपने हक का धन लेने में अड़चन, बुरी प्रकृति , नित्य त्रास होता है।

नवम में हो तो भाग्योदय में बारम्बार आपत्ति व अपकीर्ति का योग ।

दशम भाव में हो तो सार्वजनिक काम में झगड़े व बखेड़े, गुप्त शत्रु से सदा त्रास, अधिकार चलाने में अनेक आपत्ति।

एकादश भाव में हो तो कम लाभ व मित्र शत्रु होंगे। धन प्राप्ति होने पर भी धन का व्यय।

द्वादश में हो तो दुर्व्यसनी, राजकीय संकट भोगने वाला।

सप्तमेश फल विचार -

सप्तमेश लग्न में हो तीव्र विषय वासना, स्त्री सम्बन्धी तकरार, चंचल, प्रवासी, स्वतन्त्र मन वाला

द्वितीय भाव में हो तो स्त्री से धन प्राप्ति, उत्तम व्यापार, भागीदारी से धन का लाभ, कुटुम्ब पर पूर्ण प्रेम होता है।

तृतीय में हो तो स्त्री के कारण भाई से विभक्त, क्रोधी – स्वभाव, कर्तव्यनिष्ठ होता है।

चतुर्थ में हो तो स्थावर स्टेट का लाभ, सद्गुणी व उत्तम संसार करने वाली चतुर स्त्रीलाभ।

पंचम में हो तो स्त्री व संततिहीन, देवता उपासना वाला, सर्वसुख प्राप्ति।

षष्ठ भाव में हो तो शादी में विघ्न, स्त्री पक्ष से नुकसान, शुक्र से युक्त हो तो पत्नी बॉझ रहेगी।

सप्तम भाव में हो तो इच्छित स्त्री से विवाह, आज्ञाधारक स्त्री, विषय वासना में लिप्त।

अष्टम भाव में हो तो स्त्रीसुखरहित।

नवम भाव में हो तो स्त्री भाग्योदय का मूलकारण, घर में धार्मिक विधि का प्राबल्य, उद्योग सम्बन्ध से दूरदेश प्रवास।

दशम से हो तो स्वतन्त्र धंधा, दीर्घोद्योगी, सार्वजनिक काम में स्त्री की विशेष सहायता।

एकादश में हो तो स्त्री संतति सुख, भागीदारी में लाभ, मित्र सुख, हस्त कला कौशल से धन की प्राप्ति ।

द्वादश में हो तो लड़ाई में अपयश, स्त्री सम्बन्ध से त्रास, दुर्व्यसन में अधिक व्यय।

अष्टमेश फल विचार –

अष्टमेश लग्न में हो तो शरीर सुख नहीं होता। कौटुम्बिक धन सम्बन्धी दुःख हमेशा मिलता रहता है।

द्वितीय में हो तो इनाम से धन का लाभ तथा वह मनुष्य लालची, रिश्वत लेने वाला होगा।

तृतीय में हो तो बुरे मार्ग से कारवाई करेगा।

चतुर्थ में हो तो प्रयत्न बिना घर और खेती का लाभ मिलता है।

पंचम में हो तो भूत – प्रेत, पिशाच साधन में चित्त लगा रहता है। जुगार में प्रवीण व संतति दुर्गुणी होता है।

षष्ठ में हो तो लोगों को उपद्रव, त्रास देने वाला व चोर होगा ।

सप्तम में हो तो दुर्व्यसनी व अपव्ययी, शरीर सुखरहित, गुप्त कार्यों में संलिप्त होता है।

अष्टम में हो तो दीर्घायुषी होता है।

नवम में हो तो लोगों का विश्वासपात्र होगा। बड़े स्टेटों का देख – रेख करने वाला होता है।

दशम में हो तो राजा से धनलाभ, सार्वजनिक कार्य में धन प्राप्ति।

एकादश में हो तो आरम्भ का आयुष्य कष्टदायक, किन्तु उत्तरार्ध में सुख , मित्र द्वारा धन लाभ, इनामों की प्राप्ति।

द्वादश में हो तो बुरे कर्म में पैसा का व्यय, दिवालिया होगा।

नवमेश फल विचार -

नवमेश लग्न में हो तो धार्मिक कर्मों का शौकीन व भाग्य उसके पास अपने आप चलकर आता

है।

द्वितीय में हो तो मनुष्य बहुत प्रेमी स्वभाव का व कुटुम्ब को प्रिय होगा।

तृतीय में हो तो पराक्रम से प्रसिद्ध हो, भाइयों को सुखावह होगा।

चतुर्थ में हो तो खेती बाग व बगीचा – मकान प्राप्त करें व श्रीमान की तरह आयुष्य क्रमण करेगा।

पंचम में हो तो स्थावर मिलकियत का भोग, पवित्र आचरण, ईश्वरभक्त, ग्रन्थकर्ता, विद्या व भाग्यसाध्य होगा।

षष्ठ में हो तो हमेशा शत्रु के फन्दे में पड़कर भाग्योदय न होगा।

सप्तम में हो तो विवाह के पश्चात् भाग्योदय, स्त्री के कारण भाग्योदय, उत्तम व्यापार व परदेश में कीर्ति प्राप्त होता है।

अष्टम में हो तो कठोर प्रयत्न से भी भाग्योदय न होगा । मानसिक कष्ट व लोगों में अपकीर्ति होगी।

नवम में हो तो पुण्यवान्, स्वधर्म में निष्ठा, यश व भाग्य सदैव साथ देता रहता है।

दशम में हो तो राजकीय मान – सम्मान प्राप्ति व धुरन्धर राजकारणी ।

एकादश में हो तो विपुल धन की प्राप्ति होती है।

द्वादश में हो तो भाग्योदय के पीछे पड़ने से अपकीर्ति व दारिद्र हाथ लगेगा।

दशमेश फल विचार -

दशमेश यदि लग्न में हो तो दीर्घोद्योगी, व स्वपराक्रम से भाग्योदय प्राप्ति।

यदि द्वितीय में हो उत्तम कुटुम्ब्, सुख व सरकारी काम से भाग्योदय।

तृतीय में हो तो दीर्घोद्योगी, कर्तव्यगार, स्वतन्त्र व श्रेष्ठ व्यापारी होंगे।

चतुर्थ में हो तो स्थावार मिलकियत व गृहसौख्य उत्तम, वैभव का पूर्ण सुख प्राप्त करेगा।

पंचम में हो तो विद्वान व उपदेशक होता है।

षष्ठ में हो तो सार्वजनिक कार्य में शत्रु से झगड़ा व समय का वृथा व्यय।

सप्तम में हो तो परदेश में भाग्योदय, व्यापार उद्योग, भागीदारी, धन्धे में बहुत धन की प्राप्ति।

अष्टम में हो तो घोर कष्ट मिलकर मनोरथ पूर्ण न होगा।

नवम में हो तो यज्ञ – याग व धर्म करने वाला, सदाचरणी, पितृभक्त, स्वतन्त्र धन्धा कर भाग्य का पूर्ण उदय करने वाला होता है।

दशम में हो तो राज्यमान्यता प्राप्त व सम्मान मिलाने वाला, व्यापार धन्धे में कुशल होगा।

एकादश में हो तो दूसरे की नौकरी कर अधिक द्रव्य प्राप्त करने वाला होता है।

द्वादश में हो तो हमेशा साम्पत्तिक समस्या का त्रास, राजकीय संकट व ऐसे लोगों को बड़े धन्धे में न पड़ना ही उत्तम है।

एकादशेश फल विचार –

एकादशेश लग्न में हो तो धनवान व मित्रवान होगा।

द्वितीय में हो तो सम्पत्तिवान व पैसा का लेन देन करने वाला।

तृतीय में हो तो स्वतन्त्र, धनवान व भाइयों पर प्रेम करने वाला।

चतुर्थ में हो तो मातृभक्त, मकान निर्माणकर्ता, स्थावर स्टेट का लाभ होगा।

पंचम में हो तो विद्या, सन्तति - सुख उत्तम, ईश्वर भक्ति प्राप्ति।

षष्ठ में हो तो शत्रु से लाभ का नाश, मित्र भी शत्रु होते हैं । पास में धन नहीं होता। मामा से लाभ योग।

सप्तम में हो स्त्री व भागीदार से भाग्य का उदय होगा।

अष्टम् भाव में हो तो परिश्रम के बिना धन का लाभ, बेवारिस स्टेट का मिलना, गुप्त धन की प्राप्ति किन्तु मन सदा उदास रहेगा।

नवम भाव में हो तो बड़े – बड़े लाभ के प्रसंग आते हैं।

दशम भाव में हो तो व्यापार व उद्योग से धन की प्राप्ति, निर्धनता दूर होती है।

एकादश भाव में हो तो मित्रों से सहायता व अनेक प्रकार के लाभ, सन्तति सुख पूर्णरूपेण मिलता है।

द्वादश भाव में हो तो हमेशा पैसे की अड़चन बनी रहेगी ।

द्वादशेश फल विचार –

द्वादशेश लग्न में हो तो मनुष्य बहुत खर्चिला, मितभाषी, द्रव्य का खर्च मूर्खतापूर्वक करता है।

द्वितीय में हो तो कुटुम्ब के कारण कर्जदार होता है।

तृतीय में हो तो भाइयों के जवाबदारी के कारण कुमार्ग से पैसा प्राप्त करने की ओर चित्त लगा रहता है।

चतुर्थ में हो तो स्थावर स्टेट का नाश, आप्त वर्ग से दगा – धोखा।

पंचम में हो तो विद्या का अपव्यय, संतति धन नष्ट करने वाले होते है।

षष्ठ में हो तो नौकर, शत्रु, चोर आदि से भयंकर नुकसान, दरिद्रता से काल क्रमण।

सप्तम में हो तो अदालती मामलों में धन का व्यय, स्त्री के कारण धन का व्यय क्योंकि स्त्री ऐशो आरामतलब व चैनी रहेगी।

अष्टम में हो तो दुर्व्यसन में धन का नाश तथा अविचार से नुकसान होगा।

नवम में हो तो तीर्थयात्रा, धर्मकृत्य, प्रवास व आप्तवर्ग के कई कर्जों की पूर्ति करने के लिये धन का व्यय होगा ।

दशम में हो तो आर्थिक नुकसान, धन्धा के निमित्त खर्च के अन्दाज में गलती आदि कष्ट।

एकादश में हो तो मित्रों के कारण अनेक संकटों का सामना करना होगा।

द्वादश में हो तो सौख्य नाश, बुरे व्यसन व मूर्खता से धन का व्यय होगा।

3.4 सारांशः -

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि भाव के स्वामी को भावेश कहते हैं। इन भावेशों के प्रत्येक भाव में स्थित होने पर जो फल मिलता है उसका विचार कुण्डली का फलादेश करते समय अवश्य ध्यान में रखना चाहिये। लग्नेश यदि लग्न में स्थित हो तो मनुष्य कुलदीपक, रूपवान, सुदृढ़, शरीर व आत्मविश्वासी होता है और स्वपराक्रम से भाग्य का उदय करता है। द्वितीयेश - लग्न में स्थित हो तो बिना प्रयत्न किये कुटुम्ब सुख व साधन लाभ, परन्तु द्वितीयेश ग्रह यदि क्रूर हो या लग्नेश शत्रु गृह में हो तो कुटुम्ब व द्रव्यचिन्ता एवं कुटुम्ब की पूर्ण जिम्मेदारी का निर्वहन करता है। द्वितीयेश, तृतीयेश से युक्त होकर लग्न भाव में हो तो भाई को धन का लाभ होता है। तृतीयेश लग्नस्थ हो तो जातक साहसी स्वभाव का, झगड़ालु , अनुज को सुख देने वाला व कीर्तिमान हुआ करता है। चतुर्थेश लग्नस्थ हो तो मातृसुख, स्टेट प्राप्ति व वाहन सुख प्राप्त होता है। पंचमेश लग्नस्थ हो तो मनुष्य विद्वान, सन्ततियुक्त, विद्या व्यसनी होता है। षष्ठेश लग्न में हो तो शारीरिक कष्ट, लोगों में शत्रुत्व परन्तु उन पर विजय प्राप्त करने वाला, राहु केतु से युक्त, हो तो शरीर में व्रण पीड़ा होता है। इसी प्रकार अन्य स्थानों का फल होता है।

3.5 पारिभाषिक शब्दावली

स्वपराक्रम – अपना साहस

भावेश – भाव का स्वामी

भाग्योदय - भाग्य का उदय होना

धर्माभिमानी - अपने धर्म का अभिमान रखने वाला

कुटुम्ब – परिवार

द्वितीयेश - कुण्डली में द्वितीय भाव का स्वामी

लग्नेश – कुण्डली में लग्न का स्वामी

सहजेश – तृतीय भाव का स्वामी

दशमस्थ – दशम भाव में स्थित

लौकिक – सांसारिक

विद्याभ्यास – विद्या का अभ्यास करना

षष्ठेश - छठें स्थान का स्वामी

नवमेश – भाग्य स्थान का स्वामी

सन्ततिसुख - संतान सुख

3.6 बोधप्रश्नों के उत्तर

1. क

2. ख

3. क

4. ख

5. घ

6. क

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वृहज्जातकम् - चौखम्भा प्रकाशन
वृहत्पराशरहोराशास्त्र - चौखम्भा प्रकाशन
ज्योतिष सर्वस्व – चौखम्भा प्रकाशन
होराशास्त्रम् - चौखम्भा प्रकाशन
जातकपारिजात – चौखम्भा प्रकाशन
भारतीय कुण्डली विज्ञान – चौखम्भा प्रकाशन

3.8 सहायक पाठ्यसामग्री

लघुजातक
फलदीपीका
ज्योतिर्विद्याभरणम्
सुलभ ज्योतिष ज्ञान

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न -

1. भावेश फल से क्या तात्पर्य है। विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिये।
2. सप्तमेश, अष्टमेश एवं भाग्येश का फल लिखिये ।

3. लग्नेश, धनेश एवं पंचमेश भाव फल लिखिये ।
4. उदाहरण सहित भावेश फल को स्पष्ट कीजिये ।
5. भावेश फल के सारांश अपने शब्दों में लिखिये ।

इकाई – 4 द्विग्रहादि योगफल

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0जे0वाई – 201 के तृतीय खण्ड की चतुर्थ इकाई '**द्विग्रहादि योगफल**' से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने भावस्थ फल, भावेश फल का अध्ययन कर चुके है। यहॉ आप द्विग्रहादि योगफल का अध्ययन करने जा रहे है।

कुण्डली में दो ग्रहों के संयोग से जो योग बनता है, उसे द्विग्रहादि योग कहते है। दो ग्रहों की स्थिति एक साथ होने से क्या -2 फल प्राप्त होता है ?

ज्योतिष शास्त्र के अन्तर्गत जातक स्कन्ध में द्विग्रह, तीन ग्रह, पॉच ग्रहादि के एक साथ होने पर योग बनता है। जिसका प्रभाव मानव जीवन पर भिन्न – भिन्न रूपों से पड़ता है।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप बता सकेगें कि -

1. द्विग्रह क्या है।
2. द्विग्रहादि योग क्या है ।
3. द्विग्रहादि योगफल का विचार कैसे करते है ।
4. द्विग्रहादि योग का महत्व क्या है ।
5. कुण्डली में द्विग्रह योग का विचार किस प्रकार करते है ।

4.3 द्विग्रहादि योगफल

एक भाव में दो ग्रहों की युति से द्विग्रहयोग बनता है। सात ग्रहों में से दो ग्रहों को एक भाव में रखने से कुल २१ द्विग्रहयोग बनते हैं। तीन ग्रह एक ही भाव में स्थित हों तो त्रिग्रह योग बनता है। इस प्रकार त्रिग्रहयोगों की कुल संख्या ३५ होती है। यदि चार ग्रह एक ही भाव में स्थित हों तो चतुर्ग्रहयोग होता है। इनकी कुल संख्या ३५ होती है। एक भाव में पॉच ग्रहों की स्थिति से पंचग्रहयोग होता है। ये २१ प्रकार के होते है। एक ही भाव में छ: और सात ग्रहों की स्थिति से षड्ग्रहयोग और सप्तग्रहयोग होते हैं जिनकी संख्या क्रमश: २७ और १ होती है।

द्विग्रह योगफल -

जात: स्त्रीवशग:क्रियासु निपुणश्चन्द्रान्विते भास्कर,
तेजस्वी बलसत्ववानृतवाक् पापी सभौमे रवौ।
विद्यारूपबलान्वितोऽस्थिरमति: सौम्यान्विते पूषणि,
श्रद्धाकर्मपरो नृपप्रियकरो भानौ सजीवे धनी ॥

सूर्य यदि चन्द्रमा के साथ एक ही भाव में स्थित हो तो जातक स्त्री के वशीभूत और समस्त कार्यों के सम्पादन में दक्ष होता है। सूर्य यदि मंगल के साथ स्थित हो तो जातक तेजस्वी, बलवान, मिथ्यावादी, पापकर्म करने वाला होता है। यदि सूर्य और बुध एक ही राशिगत हों तो जातक विद्या, रूप और बल का धनी तथा अस्थिर चित्तवृत्ति का पुरूष होता है। यदि सूर्य, वृहस्पति के साथ किसी भाव में संयुक्त हो तो जातक श्रद्धावान्, कर्मपरायण तथा राजा का प्रियपात्र और धनी होता है।

सूर्य शुक्र की युति हो तो जातक स्त्रीपक्ष के स्वजनों , बन्धु – बान्धवों के आदर – सम्मान में निरत एवं बुद्धिमान होता है। सूर्य के साथ यदि शनि युत हो तो जातक मन्दबुद्धिऔर शत्रुओं से सन्तप्त रहता है। चन्द्र और मंगल संयुक्त हो तो जातक सत्कुलोत्पन्न, शूरवीर, धार्मिक और धन एवं गुण से सम्पन्न होता है। यदि चन्द्रमा बुध से युत हो तो जातक धर्मात्मा, शास्त्रपरायण, विविध गुणों से युक्त होता है।

जातः साधुजनाश्रयोऽतिमतिमानार्येण युक्ते विधौ,
पापात्मा क्रयविक्रयेषु कुशलः शुक्रे सशीतद्युतौ।
कुस्त्रीजः पितृदूषको गतधनस्तारापतौ सार्कजे
वाग्मी चौषधशिल्पशास्त्रकुशलः सौम्यान्विते भूसुते।।

चन्द्रमा और वृहस्पति संयुक्त हों तो जातक साधुजनों का पालक तथा अत्यन्त बुद्धिमान होता है। यदि चन्द्रमा के साथ शुक्र युत हो तो जातक पापात्मा, क्रय – विक्रय के व्यापार में पटु होता है। यदि चन्द्रमा शनि से युत हो तो जातक दुष्टा स्त्री का पति, पितृद्रोही, पिता की निन्दा करने वाला तथा धनहीन होता है। मंगल और बुध की युति हो तो जातक वाचाल, औषधिकर्म और शिल्प विद्या में पटु होता है।

त्रिग्रह योग फल –

सूर्येन्दुक्षितिनन्दनैररिकुलध्वंसी धनी नीतिमान्।
जातश्चन्द्ररवीन्दुजैर्नृपसमो विद्वान् यशस्वी भवेत्।।
सोमार्कामरमन्त्रिभिर्गुणनिधिर्विद्वान् नृपालप्रियः।
शुक्रार्केन्दुभिरन्यदारनिरतः क्रूरोऽरिभीतो धनी।।

यदि सूर्य, चन्द्र और मंगल एक ही भाव में संयुक्त हो तो जातक शत्रुसमूह का विनाश करने वाला, धनी और नीतिज्ञ होता है। सूर्य, चन्द्रमा और बुध यदि एक ही भाव में संयुक्त हों तो जातक राजा के समान और विद्या के क्षेत्र में यशस्वी होता है। एक ही भाव में यदि सूर्य, चन्द्रमा और वृहस्पति

संयुक्त हो तो जातक गुणी, विद्या का धनी और राजा का प्रियपात्र होता है। यदि सूर्य – चन्द्रमा शुक्र के साथ एक ही भाव में स्थित हों तो जातक धनिक, परस्त्रीगामी और क्रूरमना होती है।

मन्देन्द्वर्कसमागमे खलमतिर्मायी विदेशप्रियो
भास्वद्भूसुतबोधनैर्गतसुखः पुत्रार्थदारान्वितः ।
जीवार्कावनिजैरतिप्रियकरो मन्त्री चमूपोऽथवा
भौमर्कासुरवन्दितैर्नयनरूग् भोगी कुलीनोऽर्थवान् ।।

यदि सूर्य, चन्द्रमा और शनि का एक ही भाव में समागम हो तो जातक दुष्टबुद्धि, मायावी और विदेशप्रिय होता है। सूर्य, मंगल और बुध यदि एक ही भावगत हों तो जातक पुत्र, स्त्री और धन से युक्त होकर भी दुःखी रहता है। यदि जन्मांग में सूर्य, मंगल और वृहस्पति की युति हो तो जातक परोपकारी, मन्त्री या सेनापति होता है। एक ही भाव में यदि सूर्य, मंगल और शुक्र हों तो जातक कुलीन, धनवान, भोगी और नेत्ररोगी होता है।

यदि सूर्य, भौम और शनि एक ही भाव में स्थित हो तो जातक स्वजनों से हीन, मूर्ख, धनवान और रोगी होता है। यदि सूर्य, बुध और वृहस्पति एक ही भाव में संयुक्त हों तो जातक बुद्धिमान, विद्या, यश और धन से सम्पन्न होता है। सूर्य, बुध और शुक्र यदि एक ही भाव में एकत्र हों तो जातक कोमल शरीर, विद्या के क्षेत्र में यशस्वी और सुखी होता है। यदि एक ही भाव में सूर्य, बुध और शनि युत हों तो जातक स्वजनविहीन, विद्वेषी तथा दुराचारी होता है।

शुक्रारेन्द्रपुरोहितैर्नरपतेरिष्टः सुपुत्रः सुखी।
जीवारार्कसुतैः कृशोऽसुखतनुर्मानी दुराचारवान्।।
सौरारासुरपूजितैः कुतनयो नित्यं प्रवासान्वितः
शुक्रज्ञामरमन्त्रिभिर्जितरिपुः कीर्तिप्रतापान्वितः।।

यदि शुक्र के साथ मंगल और वृहस्पति संयुक्त हों तो जातक राजा का प्रिय और सत्पुत्र एवं सुख से युक्त होता है। यदि वृहस्पति मंगल और शनि से युक्त हो तो जातक दुर्बल, रोगयुक्त शरीर, अभिमानी और दुराचारी होता है। मंगल यदि शुक्र और शनि से संयुक्त हो तो जातक प्रवासी और कुपुत्रों से युक्त होता है। शुक्र, बुध और वृहस्पति यदि संयुक्त हों तो जातक शत्रुंजयी, कीर्ति और प्रताप युक्त होता है।

चतुर्ग्रहयोग फल –

एकर्क्षगैरिनसुधाकरभूसुतज्ञै
र्मायी प्रपञ्चकुशलो लिपिकश्च रोगी ।

चन्द्रारभानुगुरूभिर्धनवान् यशस्वी
धीमानृपप्रियकरो गतशोकरोग: ।।

सूर्य, चन्द्रमा, मंगल और बुध यदि एक ही भाव में स्थित हो तो जातक मायावी, आडम्बर करने में कुशल, लेखक और रोगी होता है। सूर्य, चन्द्रमा, मंगल और वृहस्पति यदि एक ही भाव में संयुक्त हों तो जातक धनिक, यशस्वी, रोग और शोक से रहित, राजा का प्रिय पात्र और श्रीसम्पन्न होता है।

आरार्कचन्द्रभृगुजै: सुतदारसम्पद्
विद्वान् मिताशनसुखी निपुण: कृपालु: ।
सूर्येन्दुभानुसुतभूमिसुतैरशान्त -
नेत्रोऽटनश्च कुलटापतिरर्थहीन: ।।

सूर्य, चन्द्रमा, मंगल और शुक्र यदि एक ही भाव में संयुक्त हो तो जातक स्त्री – पुत्रादि से सुखी, विद्वान, अल्पभोजी, सुखी, कार्यकुशल, और दयावान होता है। सूर्य, चन्द्रमा, मंगल और शनि यदि एक ही भावगत हों तो जातक यायावर, धनहीन तथा दुश्चरित्र स्त्री का पति होता है।

यदि सूर्य, चन्द्रमा और बुध के साथ वृहस्पति एक ही भाव में स्थित हो तो जातक अभीष्ट स्त्री, पुत्र और धन से सम्पन्न, गुणवान, यशस्वी, बलशाली और उदार होता है। यदि सूर्य, चन्द्रमा, बुध और शुक्र यदि संयुक्त हों तो जातक विकल और वाचाल होता है । यदि सूर्य, चन्द्रमा और बुध के साथ शनि युत हो तो जातक निर्धन और कृतघ्न होता है।

यदि सूर्य, चन्द्रमा, वृहस्पति और शुक्र एक साथ संयुक्त हों तो जातक जल के समीप अथवा वन प्रदेश का निवासी, राजपूज्य, भोगी होता है। यदि सूर्य, चन्द्रमा और वृहस्पति के साथ शनि संयुक्त हो तो जातक विशालनयन, अनेक धन और पुत्रों से युक्त वेश्या का पति होता है।

पंचग्रहयोग फल –

एकर्क्षगैरिनशशिक्षितिजज्ञजीवै
र्जातस्तु युद्धकुशल: पिशुन: समर्थ: ।
शुक्रारभानुबुधशीतकरैर्विधर्म
श्रद्धालुरन्यजनकार्यपरो विबन्धु: ।।

सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बुध और वृहस्पति यदि संयुक्त हो तो जातक रणपटु, चुगलखोर और सामर्थ्यवान होता है। सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बुध और शुक्र यदि एकभावगत हों तो जातक अन्य धर्मानुरागी, श्रद्धालु, दूसरे के कार्य का सम्पादन करने वाला और बन्धु – बान्धवों से हीन होता है।

सूर्य , चन्द्रमा, मंगल, वृहस्पति और शनि यदि संयुक्त हों तो जातक आशावादी होता है तथा वांछित रमणी के वियोग से विरहाकुल होता है। यदि सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बुध के साथ शनि संयुक्त हो तो जातक अल्पायु, धनार्जन में रत, स्त्री – पुत्रादि के सुख से वंचित होता है।

सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, वृहस्पति और शुक्र यदि एक भावगत हों तो जातक आततायी, माता पिता एवं स्वजनों , बन्धु – बान्धवों से परित्यक्त और नेत्रहीन होता है। यदि सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, शुक्र और शनि एक भाव में संयुक्त हों तो जातक तिरस्कृत , धन और प्रभाव में समर्थ, कलुषित चरित्र और परस्त्री में अनुरक्त होता है।

षड्ग्रहयोग फल –

> **सूर्येन्द्वारबुधामरेज्यभृगुजैरेकर्क्षगैस्तीर्थकृ**
> **ज्जातोऽरण्यगिरिप्रदेशनिलयः स्त्रीपुत्रवित्तान्वितः ।**
> **शुक्रेन्द्वर्कबुधामरेज्यदिनकृत्पुत्रैः शिरोरोगवा –**
> **नुन्मादप्रकृतिश्च निर्जनधरावासो विदेशं गतः ।।**

यदि सूर्य, चन्द्रमा, बुध, वृहस्पति और शुक्र एक ही राशि में स्थित हो तो जातक तीर्थाटन करने वाला, वन एवं पर्वतीय प्रदेशों में विचरण करने वाला, स्त्री – पुत्र और धन – धान्य से सम्पन्न होता है।

यदि सूर्य, चन्द्रमा, बुध, वृहस्पति, शुक्र एवं शनि एक ही भाव में संयुक्त हो तो जातक शिरोव्याधि से पीडित , उन्मादी प्रकृति का प्रवासी होता है।

यदि सूर्य, मंगल, बुध, वृहस्पति, शुक्र और शनि परस्पर संयुक्त हो तो जातक भ्रमणशील और बुद्धिमान होता है।

चन्द्रमा, मंगल, बुध, वृहस्पति के साथ यदि शुक्र और शनि संयुक्त हों तो जातक तीर्थाटन करने वाला धर्मात्मा होता है।

यदि सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बुध, वृहस्पति और शनि एक ही भाव में संयुक्त हों तो जातक चोर, परस्त्री में आसक्त, कुष्ठरोगी, बन्धु – बान्धवों से विरूद्ध, मृतपुत्र , मूर्ख और प्रवासी होता है।

यदि सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बुध, शुक्र और शनि का योग जन्मांग में उपस्थित हो तो जातक नीच प्रकृति, दूसरों के कार्य करने वाला, क्षय और पीनस रोग से पीडित और निन्दा का पात्र होता है।

यदि जन्मांग में सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, वृहस्पति, शुक्र और शनि संयुक्त हो तो जातक स्त्री – पुत्र धनादि के सुख से वंचित, शान्त प्रकृति का और राजमन्त्री होता है।

पॉच अथवा छः ग्रहों के एक ही भाव में संयुक्त होने पर जातक प्रायः मूर्ख, दरिद्र, अडियल स्वभाव

का , शान्त, सत्यनिष्ठ, निर्भीक और दु:साहसी प्रकृति का होता है ।

बोध प्रश्न –

१. एक भाव में दो ग्रहों की युति कहलाता है –

क. त्रिग्रह योग ख. द्विग्रह योग ग. चतुर्ग्रह योग घ. पंचग्रहयोग

२. चतुर्ग्रहयोग की कुल संख्या होती है –

क. २१ ख. ३५ ग. २७ घ. ३०

३. चन्द्रमा और गुरू की युति से जातक होता है –

क. मूर्ख ख. विद्वान ग. आलसी घ. दम्भी

४. सूर्य, मंगल एवं शनि की युति से जातक होता है।

क. स्वजनों से हीन ख. मूर्ख ग. रोगी घ. उपर्युक्त सभी

५. सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बुध और वृहस्पति यदि संयुक्त हो तो जातक –

क. आलसी ख. दुराचारी ग. सामर्थ्यवान घ. कोई नहीं

द्विग्रह योग फल –

रवि, चन्द्र योग - कार्यकुशल, कपटी, यंत्रादि की रूचि वाला।

रवि मंग्रल योग - पुरूषार्थी, शीघ्र क्रोधी, साहसी, उद्धत होगा ।

रवि, बुध योग - शास्त्रज्ञ, प्रियवक्ता, सम्पत्तिवान, दास वृत्ति।

रवि गुरू योग - मंत्री, सम्पन्न, चतुर व परोपकारी

रवि शुक्र योग - गायनवादन का शौकीन व शास्त्राभ्यासी।

रवि शनि योग – व्यापारी, गुणज्ञ, धन सम्पन्न, श्रद्धावान।

चन्द्र मंगल योग - कुटिल, पराक्रमी, कलहप्रिय, माता पिता विरोधी।

चन्द्र बुध योग – सुन्दर, दयालु, नम्र, उत्तम वक्ता।

चन्द्र गुरू योग – अत्यन्त कारस्थानी, लोकोपकारी, कार्यनिमग्न।

चन्द्र शुक्र योग – चतुर व्यापारी, व्यसनी, सुगन्धी चीजों का शौकीन।

चन्द्र शनि योग - दुर्वर्तनी, आलसी, अनेक स्त्रियों को संभोग करने वाला।

मंगल बुध योग - वैध, ज्ञानी, व्यापारी, स्त्रीलोलुप।

मंगल गुरू योग - मंत्र शास्त्रज्ञ, कुशल व श्रेष्ठ।

मंगल शुक्र योग – स्त्रियों का शौकीन, विलासी, गर्विष्ट, जुगारप्रिय।

मंगल शनि योग - अन्याय से द्रव्य प्राप्ति करने वाला, कलहप्रिय सुखरहित ।

बुध गुरू योग – उदार, प्रसन्नचित्त, संगीतज्ञ, नीतिमान्।

बुध शुक्र योग - कुटुम्ब पालक, गुणी, अधिक बोलने वाला।

बुध शनि योग - चंचल स्वभाव, कलहप्रिय, दयालु।

गुरू शुक्र योग - सर्व प्रकार से सुखी व विद्वान।

शुक्र शनि योग - कला में कुशल, उत्तम शरीर, मन्त्रविद्या निपुण।

त्रिग्रह योग फल –

रवि, चन्द्र मंगल योग – शूर, यंत्रविद्या में निपुण व पापी होगा।

रवि, चन्द्र बुध योग – साहसी , तेजस्वी, मुत्सदी।

रवि, चन्द्र गुरू योग – मायावी, क्रोधी, सुबुद्ध, प्रवासी

रवि, चन्द्र शुक्र योग – शास्त्रों में निपुण, परधनाभिलाषी

रवि , चन्द्र शनि योग – निर्धन, कलहप्रिय, परतन्त्र।

4.4 सारांशः -

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि एक भाव में दो ग्रहों की युति से द्विग्रहयोग बनता है। सात ग्रहों में से दो ग्रहों को एक भाव में रखने से कुल २१ द्विग्रहयोग बनते हैं। तीन ग्रह एक ही भाव में स्थित हों तो त्रिग्रह योग बनता है। इस प्रकार त्रिग्रहयोगों की कुल संख्या ३५ होती है। यदि चार ग्रह एक ही भाव में स्थित हों तो चतुर्ग्रहयोग होता है। इनकी कुल संख्या ३५ होती है। एक भाव में पॉच ग्रहों की स्थिति से पंचग्रहयोग होता है। ये २१ प्रकार के होते है। एक ही भाव में छ: और सात ग्रहों की स्थिति से षड्ग्रहयोग और सप्तग्रहयोग होते हैं जिनकी संख्या क्रमशः २७ और १ होती है। सूर्य यदि चन्द्रमा के साथ एक ही भाव में स्थित हो तो जातक स्त्री के वशीभूत और समस्त कार्यो के सम्पादन में दक्ष होता है। सूर्य यदि मंगल के साथ स्थित हो तो जातक तेजस्वी, बलवान, मिथ्यावादी, पापकर्म करने वाला होता है। यदि सूर्य और बुध एक ही राशिगत हों तो जातक विद्या, रूप और बल का धनी तथा अस्थिर चित्तवृत्ति का पुरूष होता है। यदि सूर्य, वृहस्पति के साथ किसी भाव में संयुक्त हो तो जातक श्रद्धावान्, कर्मपरायण तथा राजा का प्रियपात्र और धनी होता है। इसी प्रकार त्रिग्रह, चतुर्ग्रह, पंचग्रह एवं षड्बल ग्रह फल होता है।

4.5 पारिभाषिक शब्दावली

द्विग्रह – एक भाव में दो ग्रहों की युति

त्रिग्रह – एक भाव में तीन ग्रहों की युति

युति - योग

षड्ग्रहयोग - एक भाव में छ: ग्रहों का योग

पंचग्रह – पॉच ग्रह

चतुर्ग्रह योग - एक भाव में चार ग्रहों का योग

नृप – राजा

भानु – सूर्य

सौम्य – शुभ

परस्त्रीगामी – दूसरे की स्त्रियों पर दृष्टि रखने वाला

क्रूर ग्रह – पापग्रह

धनिक - धनवान

खल – **नीच**

4.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. ख

2. ख

3. ख

4. घ

5. ग

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वृहज्जातकम् - चौखम्भा प्रकाशन

वृहत्पराशरहोराशास्त्र - चौखम्भा प्रकाशन

ज्योतिष सर्वस्व – चौखम्भा प्रकाशन

होराशास्त्रम् - चौखम्भा प्रकाशन

जातकपारिजात – चौखम्भा प्रकाशन

भारतीय कुण्डली विज्ञान – चौखम्भा प्रकाशन

4.8 सहायक पाठ्यसामग्री

लघुजातक

फलदीपीका

ज्योतिर्विद्याभरणम्

सुलभ ज्योतिष ज्ञान

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न -

1. द्विग्रह योग फल लिखिये।
2. त्रिग्रह एवं चतुर्ग्रह योग फल लिखिये ।
3. पंच एवं षड्ग्रह योग फल का उल्लेख कीजिये।

इकाई – 5 दृष्टि फल

इकाई की संरचना

5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0जे0वाई – 201 के तृतीय खण्ड की पॉचवीं इकाई **'दृष्टि फल'** से सम्बन्धित है। ग्रहों की अपनी – अपनी दृष्टि होती है। स्वदृष्टि अनुसार वह शुभाशुभ फल भी देते है।

दृष्टि फल से तात्पर्य ग्रहों की दृष्टि फल से है। ग्रहों की दृष्टि का क्या फल होता है ? तत्सम्बन्धित शुभाशुभ फल का ज्ञान प्रस्तुत इकाई में करने जा रहे है।

इस पूर्व की इकाई में आपने द्विग्रहादि योगफल का अध्ययन कर लिया है, यहॉ आप दृष्टि फल का अध्ययन करेंगे।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप बता सकेगें कि -

1. दृष्टि क्या है।
2. दृष्टि फल क्या है ।
3. समस्त ग्रहों के दृष्टि फल क्या – क्या होता है ।
4. कुण्डली में दृष्टि फल की क्या उपयोगिता है ।
5. दृष्टि फल का क्या महत्व है ।

5.3 दृष्टि फल

पापेक्षिते गगनगामिनि दुष्टरोगी
जातः स्वधर्म गुणवित्तयशोविहीनः।
पापान्विते तु परवित्तवधूविलोलः
पारूष्यवाक्कपटबुद्धियुतोऽलसः स्यात्॥

जिस जातक के जन्मांग में ग्रह यदि पापग्रहों से दृष्ट हो तो जातक दुष्टरोग से ग्रस्त, अपने धर्म, गुण, धन और यश से हीन होता है। यदि पापग्रहों से युक्त हो तो दूसरों के धन और स्त्री का लोलुप, क्रूरभाषी, कपटाचारी और आलसी होता है।

यदि शुभकरदृष्टे खेचरे जातमर्त्यः
सुतधनयुतभोगी सुन्दरो राजपूज्यः।
परिभवरहितः स्यात्सौम्यखेटोपयाते
जितरिपुरिह धर्माचारवानिगिंतज्ञः॥

यदि ग्रह शुभग्रहों से दृष्ट हो तो जातक पुत्रवान्, धनिक, भोगों से युक्त, सुन्दर और राजा द्वारा सम्मानित होता है। शुभग्रहों से युत हो तो पराभव से हीन, शत्रुंजय, धर्म और आचरण में शुद्ध, बुद्धिमान होता है।

मेषादि राशिगत चन्द्रमा पर दृष्टिफल -

> **चन्द्रे मेषगते कुजादिखचरैरालोकिते भूपति**
> **र्विद्वान् राजसमः समस्तगुणवान् चोरो दरिद्रो भवेत्।**
> **निस्वस्थेयनृमान्यभूपधनिकप्रेष्यो वृषस्थे तथा**
> **युग्मस्थे विकलो नृपः सुमतिमान् धीरः खलो निर्धनः॥**

मेष राशिस्थ चन्द्रमा यदि भौम से दृष्ट हो तो जातक राजा,बुध से दृष्ट हो तो विद्वान, वृहस्पति से दृष्ट हो तो राजतुल्य, शुक्र से दृष्ट हो तो अनेक गुणों से युक्त, शनि से दृष्ट हो तो चोर और यदि सूर्य से दृष्ट हो तो जातक दरिद्र होता है।

वृषराशिगत चन्द्रमा यदि मंगल से दृष्ट हो तो जातक दरिद्र, बुध से दृष्ट हो तो दण्डाधिकारी, वृहस्पति से दृष्ट हो तो पूज्य श्रेष्ठ पुरूष, शुक्र से दृष्ट हो तो राजा, शनि से दृष्ट हो तो धनिक और यदि सूर्य से दृष्ट हो तो जातक दूत संवादवाहक होता है।

मिथुनराशिस्थ चन्द्रमा यदि भौमदृष्ट हो तो जातक विकल, बुध से दृष्ट हो तो राजा, वृहस्पति से दृष्ट हो तो बुद्धिमान, शुक्र से दृष्ट हो तो धैर्यवान, शनि से दृष्ट हो तो दुष्ट और यदि सूर्य से दृष्ट हो तो निर्धन होता है।

> **कर्किस्थे शशिनि क्षमासुतमुखैरालोकिते शौर्यवा -**
> **नार्यश्रेष्ठकविर्महीपतिरयोजीवी सनेत्रामयः।**
> **भूपः पण्डितवाग् धनी परपतिः पापी विभुः सिंहगे**
> **कन्यायां धनिको विभुः प्रभुसमो विद्वान् विशीलः सुखी ॥**

कर्कराशिस्थ चन्द्रमा यदि भौम से दृष्ट हो तो जातक शौर्यवान्, बुध की दृष्टि हो तो श्रेष्ठ, वृहस्पति की दृष्टि हो तो श्रेष्ठ कवि, शुक्र की दृष्टि हो तो राजा, शनि की दृष्टि हो तो लोहे से सम्बन्धित व्यवसाय से आजीविका अर्जित करने वाला और यदि सूर्य की दृष्टि हो तो नेत्ररोगी होता है।

सिंहस्थ चन्द्रमा पर यदि भौम की दृष्टि हो तो जातक राजा, बुध की दृष्टि हो तो विद्वान्, तार्किक, वृहस्पति की दृष्टि हो तो धनिक, शुक्र से दृष्ट हो तो राजा, शनि से दृष्ट हो तो पापात्मा तथा सूर्य से दृष्ट हो तो वैभवशाली होता है।

कन्याराशिस्थ चन्द्रमा यदि मंगल से दृष्ट हो तो धनवान, बुध से दृष्ट हो तो वैभवशाली,

वृहस्पति से दृष्ट हो तो राजा के समान, शुक्र से दृष्ट हो तो विद्वान, शनि से दृष्ट हो तो शीलरहित और यदि सूर्य की दृष्टि हो तो सुखी होता है।

तौलिस्थे हिमगौ बुधादिशुभदैरालोकिते स्यात् क्रमाद्
भूपः स्वर्णकरो वणिक्कुजरविच्छज्ञयासुतैर्वञ्चकः ।
कीटस्थे शशिनि द्विमातृपितृको राजप्रियो नीचकृद्
रोगी निर्धनिको नृपालसचिवो दृष्टे बुधादिग्रहैः ।।

तुलाराशिगत चन्द्रमा यदि बुध से दृष्ट हो तो राजा, वृहस्पति से दृष्ट हो तो स्वर्णकार, शुक्र से दृष्ट हो तो व्यापारी, सूर्य, भौम और शनि से दृष्ट हो तो वंचक होता है।

यदि वृश्चिकराशिगत चन्द्रमा पर बुध की दृष्टि हो तो जातक दो माता और दो पिता से युक्त, वृहस्पति से दृष्ट हो तो राजा का प्रिय पात्र, यदि शुक्र से दृष्ट हो तो नीचकर्मी, यदि शनि से दृष्ट हो तो रोगी, यदि सूर्य से दृष्ट हो तो निर्धन, यदि मंगल से दृष्ट हो तो राजमन्त्री होता है।

चन्द्रे धनुःस्थे शुभदृष्टियुक्ते विद्याधनज्ञज्ञनयशोबलाढयः।
दृष्टे कुजादित्यदिनेशपुत्रैः सभाशठः पण्यवधूरतः स्यात् ।।

यदि चन्द्रमा धनुराशि में स्थित होकर शुभग्रहों से दृष्ट हो तो जातक धनिक,विद्वान, ज्ञानवान, बलवान और यशस्वी होता है। वही चन्द्रमा यदि सूर्य, मंगल और शनि से दृष्ट हो तो जातक सभा – शठ और वेश्यागामी होता है।

राजा महीपतिर्विद्वान् धनी निर्धनिको विभुः।
कुजादिग्रहसन्दृष्टे मकरस्थे निशाकरे ।।

मकरराशिगते चन्द्रमा यदि मंगल से दृष्ट हो तो जातक राजा होता है , बुध से दृष्ट हो तो भी राजा, वृहस्पति से दृष्ट हो तो विद्वान, यदि शुक्र से दृष्ट हो तो धनवान, शनि से दृष्ट हो तो दरिद्र और यदि सूर्य से दृष्ट हो तो वैभवादि से सम्पन्न होता है।

कुम्भस्थिते निशानाथे शुभदृष्टे यशोधनः ।
जातः परवधूलोलः पापखेटनिरीक्षिते ।।

कुम्भराशिगत चन्द्रमा यदि शुभग्रहों से दृष्ट हो तो जातक धन और यश से युक्त होता है और यदि वह चन्द्रमा पापग्रहों से अवलोकित हो तो जातक परस्त्री में आसक्त होता है।

मीनस्थे शुभवीक्षिते हिमकरे हास्यप्रियो भूपति
र्विद्वान् पापनिरीक्षिते परूषवाक् पापात्मको जायते।
पापांशे खलवीक्षिते शठमतिर्जातोऽन्यजायारतः

सौम्यांशे शुभवीक्षिते हिमकरे जातो यशस्वी भवेत् ।।

मीनराशिगत चन्द्रमा पर यदि शुभग्रह की दृष्टि हो तो जातक आमोद – प्रमोद में लिप्त, राजा और विद्वान होता है। यदि उस चन्द्रमा पर पापग्रह की दृष्टि हो तो जातक दुष्टात्मा और कटुभाषी होता है। यदि पापग्रह के नवांश में स्थित चन्द्रमा को पापग्रहों की दृष्टि प्राप्त हो तो जातक दुष्टबुद्धि और परस्त्री में अनुरक्त होता है। यदि वह चन्द्रमा शुभग्रह के नवांश में स्थित हो और शुभग्रहों से दृष्ट हो तो जातक यशस्वी होता है ।

राशिदृष्टिफलं यत्तदंशकेषु च योजयेत् ।

भवन्ति शुभदा: सर्वे शुभदृग्योगसंयुता: ।।

राशि और दृष्टि वशात् ग्रहों के जो फल कहे गये हैं उनकी योजना उनके नवांशों में भी करनी चाहिए। शुभग्रह के दृष्टि योग से सभी उत्तम फल को देते हैं।

अर्थात् जिस राशि में अवस्थित ग्रह का जो फल पूर्व में कहा गया है यदि उक्त ग्रह उस राशि के नवांश में स्थित हो तब भी वही फल समझना चाहिए। जैसे मेष राशि में यदि सूर्य स्थित हो तो जातक स्वल्प धनी होता है। अत: अन्य राशिगत सूर्य यदि मेष राशि के नवांश में स्थित हो तब भी जातक अल्प धनी होगा।

बोध प्रश्न –

१. जन्मांग में यदि ग्रह पापग्रहों से दृष्ट हो तो –
   क. जातक दुष्ट होता है। ख. जातक बुद्धिमान होता है। ग. जातक भाग्यशाली होता है
   घ. कोई नहीं
२. यदि कुण्डली के ग्रह शुभग्रहों से दृष्ट हो तो जातक होता है –
   क. सुन्दर और धनवान ख. कपटी ग. दरिद्र घ. आचारणहीन
३. वृषराशिगत चन्द्रमा यदि मंगल से दृष्ट हो तो जातक –
   क. दरिद्र ख. धनवान ग. सुन्दर घ. विद्वान
४. सिंहस्थ चन्द्रमा पवर यदि भौम की दृष्टि हो तो निम्न में जातक होता है
   क. राजा ख. आलसी ग. गरीब घ. धनवान
५. मीन राशिगत चन्द्रमा पर यदि शुभग्रह की दृष्टि हो तो –
   क. कृपण ख. विद्वान ग. सुन्दर घ. राजा

5.4 सारांशः -

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि जिस जातक के जन्मांग में ग्रह यदि पापग्रहों से दृष्ट हो तो जातक दुष्टरोग से ग्रस्त, अपने धर्म, गुण, धन और यश से हीन होता है। यदि पापग्रहों से युक्त हो तो दूसरों के धन और स्त्री का लोलुप, क्रूरभाषी, कपटाचारी और आलसी होता है। यदि ग्रह शुभग्रहों से दृष्ट हो तो जातक पुत्रवान्, धनिक, भोगों से युक्त, सुन्दर और राजा द्वारा सम्मानित होता है। शुभग्रहों से युत हो तो पराभव से हीन, शत्रुंजय, धर्म और आचरण में शुद्ध व बुद्धिमान होता है। मेष राशिस्थ चन्द्रमा यदि भौम से दृष्ट हो तो जातक राजा,बुध से दृष्ट हो तो विद्वान, वृहस्पति से दृष्ट हो तो राजतुल्य, शुक्र से दृष्ट हो तो अनेक गुणों से युक्त, शनि से दृष्ट हो तो चोर और यदि सूर्य से दृष्ट हो तो जातक दरिद्र होता है। वृषराशिगत चन्द्रमा यदि मंगल से दृष्ट हो तो जातक दरिद्र, बुध से दृष्ट हो तो दण्डाधिकारी, वृहस्पति से दृष्ट हो तो पूज्य श्रेष्ठ पुरूष, शुक्र से दृष्ट हो तो राजा, शनि से दृष्ट हो तो धनिक और यदि सूर्य से दृष्ट हो तो जातक दूत संवादवाहक होता है। मिथुनराशिस्थ चन्द्रमा यदि भौमदृष्ट हो तो जातक विकल, बुध से दृष्ट हो तो राजा, वृहस्पति से दृष्ट हो तो बुद्धिमान, शुक्र से दृष्ट हो तो धैर्यवान, शनि से दृष्ट हो तो दुष्ट और यदि सूर्य से दृष्ट हो तो निर्धन होता है।

5.5 पारिभाषिक शब्दावली

क्रूरभाषी – कड़ा बोलने वाला
स्वधर्म – अपना धर्म
मार्तण्ड - सूर्य
वित्तविहीन - धन से हीन
कुज – मंगल
खचर - ग्रह
भूपति – राजा
राजसमः – राजा के समान
नृप – राजा
धीर – स्थिरचित्त वाला
निर्धन – गरीब
मातृसुख - माता का सुख
दुराचारी – अनुचित व्यवहार करने वाला

5.6 बोधप्रश्नों के उत्तर

1. ख

2. ग

3. ग

4. ख

5. ख

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वृहज्जातकम् - चौखम्भा प्रकाशन
वृहत्पराशरहोराशास्त्र - चौखम्भा प्रकाशन
ज्योतिष सर्वस्व – चौखम्भा प्रकाशन
होराशास्त्रम् - चौखम्भा प्रकाशन
जातकपारिजात – चौखम्भा प्रकाशन
भारतीय कुण्डली विज्ञान – चौखम्भा प्रकाशन

5.8 सहायक पाठ्यसामग्री

लघुजातक
फलदीपीका
ज्योतिर्विद्याभरणम्
जातकभरणम्

5.9 निबन्धात्मक प्रश्न -

1. दृष्टि फल का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिये।
2. लग्न एवं द्वितीय भाव का दृष्टि फल लिखिये ।
3. सूर्य एवं चन्द्र ग्रहों की दृष्टि फल लिखिये ।

खण्ड - 4

दशा फल विचार

इकाई – 1 विंशोत्तरी दशा फल

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई तृतीय खण्ड दशाफल विचार के प्रथम इकाई '**विंशोत्तरी दशाफल**' शीर्षक से संबंधित है। सामान्यत: जन्म कुण्डली में ग्रहों का जो भी शुभाशुभ फल होता है, वह उन ग्रहों की दशान्तर्दशाओं में जातक को प्राप्त होता है।

दशा का शाब्दिक अर्थ होता है – स्थिति। '**कलौ पाराशरीदशा**' के अनुसार कलियुग में विंशोत्तरी दशा का विशेष महत्व है। अभीष्ट काल में किसी जातक के स्थिति का शुभाशुभ ज्ञान दशा के आधार पर किया जाता है।

इससे पूर्व की इकाईयों में आपने लग्न, राशि, नक्षत्र, भाव, ग्रहस्पष्ट, फलादेश कर्म, कारकादि विषयों का विस्तृत अध्ययन कर लिया हैं। यहॉं हम इस इकाई में विंशोत्त्री दशा साधन एवं उसके फलादेश सम्बन्धित विषयों का अध्ययन विस्तार पूर्वक करेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

1. दशा को परिभाषित करने में समर्थ हो सकेंगे।
2. विंशोत्तरी दशा के महत्त्व को समझा सकेंगे।
3. विंशोत्तरी दशा का निरूपण करने में समर्थ होंगे।
4. विंशोत्त्री दशा का स्वरूप वर्णन करने में समर्थ होंगे।
5. विंशोत्त्री दशा से फलादेशादि को निरूपित करने में समर्थ होंगे।

1.3 विंशोत्तरी दशा परिचय -

समस्त चराचर प्राणियों के जीवनकाल में उनका कौन सा समय शुभ है, अथवा कौन सा समय अशुभ हैं, इसका विवेक ज्योतिष शास्त्र के उस अभीष्ट कालावधि में प्रचलित दशा व महादशा के आधार पर होता है। जन्माङ्ग चक्र में ग्रहों की जो शुभाशुभ फल की स्थिति होती है, वही फल उन ग्रहों की दशान्तर्दशाओं में जातक को प्राप्त होता है। विंशोत्तरी दशाओं का प्रचलन विन्ध्य से उत्तर दिशाओं के प्रान्तों में है। दशाओं के सम्बन्ध में **आचार्य पराशर ने वृहत्पराशरहोराशास्त्र** के दशाध्याय में प्रतिपादित किया है –

दशा: बहुविधास्तासु मुख्या विंशोत्तरी मता।
कैश्चिदष्टोत्तरी कैश्चित् कथिता षोडशोत्तरी॥
द्वादशाब्दोत्तरी विप्र दशा पञ्चोत्तरी तथा।

दशा शतसमा तद्वत् चतुराशीतिवत्सरा ।।

द्विसप्ततिसमा षष्टिसमा षट्त्रिंशवत्सरा ।

नक्षत्राधाररिकाश्चैता: कथिता: पूर्वसूरिभि: ।।

अर्थात् दशा के अनेक भेद है, परन्तु उनमें भी मुख्य दशा **विंशोत्तरीय** दशा है, जो सर्वसाधारण के लिए हितकारी है । अन्य विद्वानों ने अष्टोत्तरी, षोडशोत्तरी, द्वादशोत्तरी, पञ्चोत्तरी, शताब्दि, चतुरशीतिसमा, द्विसप्ततिसमा, षष्टिसमा, षट्त्रिंशत्समा आदि ये सभी जन्मनक्षत्राधारित दशाओं की चर्चा की हैं।

एवं च –

अथ कालदशा चक्रदशा प्रोक्ता मुनीश्वरै: ।

कालचक्रदशा चाऽन्या मान्या सर्वदशासु या ।।

दशाऽथ चरपर्याया स्थिराख्या च दशा द्विज ।

केन्द्राद्या च दशा ज्ञेया कारकादिग्रहोद्भवा ।।

ब्रह्मग्रहाश्रितर्क्षाद्या दशा प्रोक्ता तु केनचित् ।

माण्डूकी च दशा नाम तथा शूलदशा स्मृता ।।

योगार्धजदशा विप्र दृग्दशा च तत: परम् ।

त्रिकोणाख्या दशा नाम तथा राशिदशा स्मृता ।।

पञ्चस्वरदशा विप्र विज्ञेया योगिनीदशा ।

दशा पिण्डी तथांशी च नैसर्गिकदशा तथा ।।

उपर्युक्त प्रसङ्ग के अनुसार दशाओं में कालदशा, चक्रदशा है तथा सभी दशाओं में मान्य कालचक्र दशा कही गयी है। इनके अतिरिक्त चरदशा, स्थिरदशा, केन्द्रदशा, कारकदशा एवं ब्रह्मग्रहदशा भी कही गई है । किसी ने मण्डूकदशा, शूलदशा, योगार्धदशा, दृग्दशा, त्रिकोणदशा, राशिदशा, पञ्चस्वरदशा, योगिनीदशा, पिण्डदशा, नैसर्गिक दशा, अष्टवर्ग दशा, सन्ध्या दशा, पाचक दशा एवं अन्य तारादि विभिन्न दशाभेद कहा है। परन्तु सभी दशायें सर्वसम्मत नहीं हैं अर्थात् व्यवहारोपयोगी नहीं है।

पराशरोक्त सभी दशाओं में नक्षत्र दशा तथा उनमें भी विंशोत्तरी दशा सर्वश्रेष्ठ है। कलौ पाराशरी दशा की प्रसिद्धि के साथ – साथ कलियुग में विंशोत्तरी को ही प्रत्यक्ष फलदायक कहा है -

कलौ प्रत्यक्ष फलदा दशा विंशोत्तरी स्मृता ।

अष्टोत्तरी न संग्राह्या मारकार्थं विचक्षणै: ।।

साथ ही लघुपराशरी में स्पष्टतया '**दशा विंशोत्तरी चात्र ग्राह्या नाष्टोत्तरी मता**' कहकर

विंशोत्तरी दशा को सर्वदशा शिरोमणि कहा है।

दशा, अन्तर्दशा, महादशा का ज्ञान सर्वतोभावेन लोककल्याणकारी है, जिसके ज्ञान से हम किसी भी चराचर प्राणी का व सृष्टि के समस्त पदार्थ का शुभाशुभ फल का ज्ञान करने में समर्थ हो सकते है। विंशोत्तरी दशा साधन की गणितीय विधि आचार्यों ने नक्षत्रों के आधार पर कहा है, तथा उसके आधार पर किसी जातक के उसके सम्पूर्ण जीवन में होनेवाली शुभाशुभ फल का विधान प्रतिपादित किया है।

विंशोत्तरी दशा साधन -

कृत्तिकात: समारभ्य त्रिरावृत्तय दशाधिपा:।
आ- चं- कु – रा- गु- श- बु -के शुपूर्वा विहगा: क्रमात्॥
वह्निभाज्जन्मभं यावद् या संख्या नवतष्टिता।
शेषाद्दशाधिपो ज्ञेयस्तमारभ्य दशां नयेत्॥
विंशोत्तरशतं पूर्णमायु: पूर्वमुदाहृतम्।
कलौ विंशोत्तरी तस्माद् दशा मुख्या द्विजोत्तम॥

कृत्तिका नक्षत्र से आरम्भ करके क्रम से सूर्य, चन्द्र, भौम, राहु, गुरू, शनि, बुध, केतु और शुक्र – ये तीन आवृत्ति में दशाधिकारी होते है। कृत्तिका नक्षत्र से जन्म नक्षत्र तक गिनकर जो संख्या हो, उसमें 9 का भाग दें, शेष तुल्य पूर्वोक्त दशा – क्रम से दशाधिप होते हैं। कृत्तिका नक्षत्र से आरम्भ करके पूर्वकथित दशाक्रम से ग्रहों की दशा लगानी चाहिये। कलियुग में 120 वर्ष की पूर्णायु कही गई है। अत: अन्य दशाओं की अपेक्षा विंशोत्तरी दशा ही प्रमुख मानी जाती है।

नक्षत्रों से दशा बोधक चक्र –

दशेश	आ(सूर्य)	चन्द्र	भौम	राहु	गुरू	शनि	बुध	केतु	शुक्र
वर्ष	6	10	7	18	16	19	17	7	20
नक्षत्र	कृ. उ.फा. उ.षा.	रो. ह. श्र.	मृ. चि. ध.	आ. स्वा. श.	पु. वि. पू. भा.	पुष्य अ. उ. भा.	श्ले. ज्ये. रे.	म. मू. अ.	पू. फा. पू. षा. भ.

रव्यादि ग्रहों के दशावर्ष -

दशासमा: क्रमादेषां षड् दशाऽश्वा गजेन्दव:।
नृपाला: नवचन्द्राश्च नगचन्द्रा नगा नखा:॥

सूर्यादि नवग्रहों के दशावर्ष संख्या क्रम से ये हैं – 6, 10, 7, 18, 16, 19,17,7, 20 ।

अर्थात् सूर्य – 6 वर्ष, चन्द्रमा के – 10 वर्ष, मंगल – 7 वर्ष, राहु – 18 वर्ष, गुरू – 16 वर्ष, शनि – 19 वर्ष, बुध – 17 वर्ष, केतु – 7 वर्ष, शुक्र – 20 वर्ष।

लग्न और सूर्यादि ग्रहों के दशाक्रम –

उदयरविशशांकप्राणिकेन्द्रादिसंस्था: ।
प्रथमवयसि मध्येऽन्त्ये च दद्यु: फलानि ।।
नहि न फलविपाक: केन्द्रसंस्थाद्यभावे ।
भवति हि फलपक्ति: पूर्वमापोक्लिमेऽपि ।।

अर्थात् सूर्य – चन्द्र इन तीनों में जो अधिक बलवान हो पहले उसकी दशा होती है फिर उसके बाद केन्द्र स्थान में स्थित ग्रहों की दशा होती है। यह दशा जीवन के प्रथमवय में होती है। उसके बाद मध्यवय में प्रथमवय में होती है। उसके बाद मध्यवय में प्रथमदशाप्रद से पणफरस्थित ग्रहों की दशा होती है। उसके बाद अन्तवय में प्रथमदशा प्रद से आपोक्लिम स्थित ग्रहों की दशा होती है।

दशा वर्ष –

आयु: कृतं येन हि यत्तदेव
कल्प्या दशा सा प्रबलस्य पूर्वा ।
साम्ये बहूनां बहुवर्षदस्य
तेषां च साम्ये प्रथमोदितस्य ।।

जिस ग्रह की जितनी आयुर्दाय हो, उसकी उतनी ही दशा होती है। यह दशा भी बलानुसार होती है। इसमें सबसे बली ग्रह की दशा पहले होती है।

यदि दो – तीन आदि ग्रहों में बल साम्य हो तो उनमें जिसके अधिक वर्ष हों उसकी दशा प्रथम होती है। अगर वर्ष में भी समानता हो तो सूर्य के सान्निध्य वश जिसका प्रथम उदय हुआ हो उसी की दशा पहले होती है।

बोध प्रश्न

1. दशा का शाब्दिक अर्थ होता है।

क. आयु ख. स्थिति ग. शुभ घ. दुर्दशा

2. विंशोत्तरी महादशा में कितने वर्षों की दशाओं की चर्चा है।

क. 20 ख. 40 ग. 60 घ. 120

3. विंशोत्तरी दशा का प्रचलन कहॉ है।

क. मध्य देश में ख. विन्ध्य से दक्षिण के प्रान्तों में ग. विन्ध्य से उत्तर के प्रान्तों में घ. कोई नही।

4. चन्द्रमा ग्रह की दशा वर्ष है।

क. 6 वर्ष ख. 10 वर्ष ग. 18 वर्ष घ. 16 वर्ष

5. शुक्र की दशायु है।

क. 17 वर्ष की ख. 7 वर्ष की ग. 20 वर्ष की घ. 19 वर्ष की

दशा साधन विधि – अभिजित् रहित 27 नक्षत्रों में कृत्तिका से जन्म नक्षत्र गणना करें। तत्संख्या में 9 का भाग देने पर शेष निम्नोक्त क्रम से विंशोत्तरी दशेश होते है। अर्थात् 1 शेष बचे तो सूर्य, 2 शेष बचे तो चन्द्रमा, 5 शेष बचे तो गुरू 8 शेष बचे तो केतु व 0 शेष बचे तो शुक्र की दशा होती है।

विंशोत्तरी दशा फल –

रवि दशा फल –

मूलत्रिकोणे स्वक्षेत्रे स्वोच्चे वा परमोच्चगे।
केन्द्रत्रिकोणलाभस्थे भाग्यकर्माधिपैर्युते ।।
सूर्ये बलसमायुक्ते निजवर्गबलैर्युते।
तस्मिन्दाये महत् सौख्यं धनलाभादिकं शुभम् ।।
अत्यन्तं राजसन्मानमश्वसन्दोल्यादिकं सुखम्।
सुताधिपसमायुक्ते पुत्रलाभं च विन्दति ।।
धनेशस्य च सम्बन्धे गजान्तैश्वर्यमादिशेत्।
वाहनाधिपसम्बन्धे वाहनत्रयलाभकृत् ।।
नृपालतुष्टिर्वित्ताढयः सेनाधीशः सुखो नरः।
बलवाहनलाभश्च दशायां बलिनो रवेः ।।

यदि सूर्य जन्मसमय में अपने मूलत्रिकोण में, अपने क्षेत्र में अपने उच्च में अपने परमोच्च में केन्द्र, त्रिकोण, लाभभाव में, भाग्येश कर्मेश के साथ में निज वर्ग में बलवान होकर बैठा हो तो उसकी दशा में धनलाभ, अधिक सुख, राजसम्मानादि की प्राप्ति होती है। सन्तानेश के साथ हो तो पुत्रलाभ, धनेश के साथ सूर्य हो तो हाथी आदि धनों का लाभ और वाहनेश के साथ हो तो वाहन का लाभ कराता है। ऐसा जातक राजा की अनुकम्पा से धनाढय होकर सेनानायक बनकर सुखी होता है। इस प्रकार बलयुत रवि की महादशा में बल, वाहन, और धन का लाभ होता है।

अन्य स्थिति में फल - यदि जातक के जन्मसमय में सूर्य अपने नीच राशि का हो, 6,8,12 भाव में

में निर्बल पापग्रहों से युत हो या राहु – केतु से युत हो या दु:स्थान 6,8,12 के अधिपति से युत हो तो सूर्य की महादशा में महान कष्ट, धन- धान्य का विनाश, राजक्रोध, प्रवास, राजदण्ड, धनक्षय, ज्वरपीड़ा, अपयश, स्वबन्धुओं से वैमनश्यता, पितृकष्ट, भय, गृह में अशुभ, चाचा को कष्ट, मानसिक अशान्ति और अकारण जनों से द्वेष होता है। यदि सूर्य के पूर्वोक्त नीचादि स्थानों में रहने पर भी उस शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो कभी – कभी बीच – बीच में सुख भी होता है। यदि केवल पापग्रहों की ही दृष्टि हो तो सदैव पाप फल ही कहना चाहिये।

चन्द्रफल –

एवं सूर्यफलं विप्र संक्षेपाददुदितं मया।
विंशोत्तरीमतेनाऽथ ब्रुवे चन्द्रदशाफलम् ॥
स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे चैव केन्द्रे लाभत्रिकोणगे।
शुभग्रहेण संयुक्ते पूर्णे चन्द्रे बलैर्युते ॥
कर्मभाग्यधिपैर्युक्ते वाहनेशबलैर्युते।
आद्यन्तैश्वर्य सौभाग्य धन धान्यादिलाभकृत्।
गृहे तु शुभकार्याणि वाहनं राजदर्शनम् ॥
यत्नकार्यार्थसिद्धिः स्याद् गृहे लक्ष्मीकटाक्षकृत्।
मित्रप्रभुवशाद् भाग्यं राज्यलाभं महत्सुखम् ॥
अश्वान्दोल्यादिलाभं च श्वेतवस्त्रादिकं लभेत्।
पुत्रलाभादिसन्तोषं गृहगोधनसङ्कुलम् ॥
धनस्थानगते चन्दे तुङ्गे स्वक्षेत्रगेऽपि वा।
अनेकधनलाभं च भाग्यवृद्धिर्महत्सुखम् ॥
निक्षेपराजसन्मानं विद्यालाभं च विन्दति।

जन्मकाल में यदि चन्द्रमा अपने उच्च राशि का हो या अपने क्षेत्र में हो, केन्द्र, 11, त्रिकोण में हो और पूर्ण बली चन्द्र शुभ ग्रहों से युत हो, 4,9,10 भावों के स्वामी से युक्त हो तो उसकी महादशा में प्रारम्भ से अन्त तक धन – धान्य, सौभाग्यादि की वृद्धि, गृह में मांगलिक कार्य, वाहनसुख, राजदर्शन, यत्न से कार्य सिद्धि, घर में धनागम, मित्रों के द्वारा भाग्योदय, राज्यलाभ, सुख, वाहनप्राप्ति एवं धन और वस्त्रादि का लाभ होता है। जातक पुत्रलाभ, मानसिक शान्ति एवं घर में गौओं द्वारा सुशोभित होता है। चन्द्रमा द्वितीय भाव में अपने उच्च या स्वगृहगत हो तो अनेक प्रकार से धनलाभ, भाग्यवृद्धि, राजसम्मान तथा विद्या का लाभ होता है।

अन्य स्थिति में फल - चन्द्रमा अपने नीच का हो या क्षीण हो तो धन की हानि होती है। बलयुत चन्द्र तृतीय भाव में हो तो कभी – कभी सुख और धन की प्राप्ति होती है। निर्बल चन्द्र पापग्रह से युत होकर तृतीय में हो तो जड़ता, मानसिक रोग, नौकरों से पीड़ा, धनहानि और माता या मामा से कष्ट होता है। दुर्बल चन्द्रमा पापग्रह से युत होकर 6,8,12 स्थान में स्थित हो तो राजद्वेष, मानसिक दुःख, धन- धान्यादि का विनाश, मातृकष्ट, पश्चाताप, शरीर की जड़ता एवं मनोव्यथा होती है। बलयुत चन्द्रमा के दुःस्थान में रहने से बीच – बीच में कभी – कभी लाभ और सुख भी होता है। अशुभकारक रहने पर शान्ति करने से शुभ का निर्देश करना चाहिये।

भौम दशा फल –

स्वभोच्चादिगतस्यैवं नीचशत्रुभगस्य च।
ब्रवीमि भूमिपुत्रस्य शुभाऽशुभदशाफलम्॥
परमोच्चगते भौमे स्वोच्चे मूलत्रिकोणगे।
स्वर्क्षे केन्द्रत्रिकोणे वा लाभे वा धनगेऽपि वा॥
सम्पूर्णबलसंयुक्ते शुभदृष्टे शुभांशके।
राज्यलाभं भूमिलाभं धनधान्यादिलाभकृत्॥
आधिक्यं राजसम्मानं वाहनाम्बरभूषणम्।
विदेशे स्थानलाभं च सोदराणां सुखं लभेत्॥
केन्द्रे गते सदा भौमे दुश्चिक्ये बलसंयुते।
पराक्रमाद्वित्तलाभो युद्धे शत्रुञ्जयो भवेत्॥
कलत्रपुत्रविभवं राजसम्मानमेव च।
दशादौ सुखमाप्नोति दशान्ते कष्टमादिशेत्॥

मंगल अपने परमोच्च में हो, अपने उच्च में हो या अपने मूल त्रिकोण में हो, स्वगृह में हो या केनद्रत्रिकोण में हो, लाभ भाव में हो, धनभाव में हो, पूर्णबल युत हो, शुभ ग्रहों से अवलोकित हो, शुभ नवमांश में हो तो राज्यलाभ, भूमिप्राप्ति, धन – धान्यादि का लाभ, राजसम्मान, वाहन, वस्त्र, आभूषणादि का लाभ, प्रवास में भी स्थानलाभ और सहोदर बन्धु सौख्य होता है। यदि मंगल बलयुत होकर केन्द्र या तृतीय भाव में हो तो पराक्रम से धनलाभ, युद्ध में शत्रु की पराजय, स्त्री – पुत्रादि का सुख और राजसम्मान प्राप्त होता है , परन्तु भौम दशा के अन्त में सामान्य कष्ट भी होता है।

अन्य स्थिति में फल - भौम अपने नीचादि दुष्ट भाव में निर्बल होकर स्थित हो या पापग्रह से युत या दृष्ट हो तो उसकी दशा में धन- धान्य का विनाश, कष्ट आदि अशुभ फल कहना चाहिये।

बुध दशा फल –

अथ सर्वनभोगेषु यः कुमारः प्रकीर्तितः।
तस्य तारेशपुत्रस्य कथयामि दशाफलम् ॥
स्वोच्चे स्वक्षेत्रसंयुक्ते केन्द्रलाभत्रिकोणगे।
मित्रक्षेत्रसमायुक्ते सौम्ये दाये महत्सुखम् ॥
धनधान्यादिलाभं च सत्कीर्तिधनसम्पादाम्।
ज्ञानाधिक्यं नृपप्रीतिं सत्कर्मगुणवर्द्धनम् ॥
पुत्रदारादि सौख्यं व्यापाराल्लभते धनम्।
क्षीरेण भोजनं सौख्यं व्यापाराल्लभते धनम् ॥
शुभदृष्टियुते सौम्ये भाग्ये कर्माधिपे दशा।
आधिपत्ये बलवती सम्पूर्णफलदायिका ॥

सभी ग्रहों में जिसको कुमार कहा जाता है, उस बुध की महादशा का फल इस प्रकार है – यदि बुध अपने उच्च में हो या स्वक्षेत्र में हो या केन्द्र - त्रिकोण मित्रगृह में बैठा हो तो उसकी दशा में सुख, धन – धान्य का लाभ, सुकीर्ति, ज्ञानवृद्धि, राजा की सहानुभूति, शुभ कार्य की वृद्धि, पुत्र – स्त्रीजन्य सुख, रोगहीनता, दुग्धयुत भोजन एवं व्यापार से धनलाभ होता है। यदि बुध पर शुभ ग्रह की दृष्टि हो या शुभ ग्रह से युत हो, कर्मेश होकर भाग्य स्थान में बैठा हो और पूर्ण बली हो तो उक्त फल पूर्ण होगा, अन्यथा सामान्य फल की प्राप्ति होती है।

अन्य फल - यदि बुध पापग्रह से युत दृष्ट हो तो राजद्वेष, मानसिक रोग, अपने बन्धु – बान्धवों से वैर, विदेश – भ्रमण, दूसरे की नौकरी, कलह एवं मूत्रकच्छ्र रोग से परेशानी होती है। यदि बुध 6,8,12 वें स्थान में हो तो लाभ तथा भोग एवं धन का नाश होता है। वात, पाण्डुरोग, राजा, चोर, और अग्नि से भय, कृषि सम्बन्धी भूमि और गाय का विनाश होता है। सामान्यतया दशा के प्रारम्भ में धन – धान्य, विद्या लाभ, सुख पुत्र कलत्रादि लाभ, सन्मार्ग में धन व्यय आदि शुभ होता है। मध्य काल में राजा से आदर प्राप्त होता है, और अन्त में दु:ख प्राप्त होता है।

गुरू दशा फल –

स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे जीवे केन्द्र लाभत्रिकोणगे।
मूलत्रिकोणलाभे वा तुङ्गाशे स्वांशगेऽपि वा ॥
राज्यलाभं महत्सौख्यं राजसन्मानकीर्तनम्।
गजवाजिसमायुक्तं देवब्राह्मणपूजनम् ॥

दारपुत्रादिसौख्यं च वाहनाम्बरलाभजम् ।
यज्ञादिकर्मसिद्धिः स्याद्वेदान्तश्रवणादिकम् ।।
महाराजप्रसादेनाऽभीष्टसिद्धिः सुखावहा ।
आन्दोलिकादिलाभश्च कल्याणं च महत्सुखम् ।।
पुत्रदारादिलाभश्च अन्नदानं महत्प्रियम् ।

गुरू यदि स्वोच्च, स्वक्षेत्र, केन्द्र, त्रिकोण या लाभ, मूल त्रिकोण, अपने उच्च नवमांश या अपने नवमांश में बैठा हो तो राज्य की प्राप्ति, महासुख, राजा से सम्मान, यश- घोड़े हाथी आदि की प्राप्ति, देव – ब्राह्मण में निष्ठा, स्त्री - पुत्रादि से सुख, वाहन वस्त्रलाभ, यज्ञादि धार्मिक कार्य की सिद्धि, वेद – वेदान्तादि का श्रवण, महाराजा की कृपा से अभीष्ट की प्राप्ति, सुख, पालकी आदि की प्राप्ति, कल्याण, महासुख, पुत्र कलत्रादि का लाभ, अन्नदान आदि शुभ फल प्राप्त होता है।

अन्य फल – यदि गुरू नीच या अस्त, पापग्रहों से युत या 8,12 भावों में स्थित हो तो स्थाननाश, चिन्ता, पुत्रकष्ट, महाभय, पशु – चौपायों की हानि, तीर्थयात्रा आदि होता है। गुरू की दशा आरम्भ में कष्टकारक, मध्य तथा अन्त में चतुष्पदों से लाभदायक, राजसम्मान, ऐश्वर्य, सुख आदि का अभ्युदय कराने वाली होती है।

शुक्रदशाफल –

परमोच्चगते शुक्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रगे ।
नृपाऽभिषेक – सम्प्राप्तिर्वाहनाऽम्बरभूषणम् ।।
गजाश्वपशुलाभं च नित्यं मिष्टान्नभोजनम् ।
अखण्डमण्डलाधीश राजसन्मानवैभवम् ।।
मृदंगवाद्यघोषं च गृहे लक्ष्मीकटाक्षकृत् ।
त्रिकोणस्थे निजे तस्मिन् राज्यार्थगृहसम्पदः ।।
विवाहोत्सवकार्याणि पुत्रकल्याणवैभवम् ।
सेनाधिपत्यं कुरूते इष्टबन्धुसमागम् ।।
नष्टराज्याद्धनप्राप्तिं गृहे गोधनसङ्ग्रहम् ।।

यदि शुक्र अपने परम उच्च, उच्च स्वराशि या केन्द्र में बैठा हो तो उसकी दशा में जीवों को राज्याभिषेक की प्राप्ति, वाहन, वस्त्र, आभूषण, हाथी, घोड़े, पशु आदि का लाभ, सदा सुस्वादु भोजन, सम्पूर्ण पृथ्वी के स्वामी से सम्मान एवं स्वगृह में लक्ष्मी की अनुकम्पा से मृदंग वाद्य – वादनपूर्ण उत्सव होता है। यदि शुक्र त्रिकोण में हो तो उस शुक्र की दशा में राज्य, धन, गृह का लाभ,

गृह में विवाहादि मांगलिक कार्य, पुत्र – पौत्रादि का जन्म, सेनानायक, घर में शुभ चिन्तक मित्र का समागम, गौ आदि पशुओं की वृद्धि एवं नष्ट राज्य या धन की पुन: प्राप्ति होती है।

अन्य फल – यदि शुक्र 6,8,12 वें भाव में या स्वनीच राशिस्थ हो तो उसकी दशा में स्वबन्धु – बान्धवों में वैमनश्यता, पत्नी को पीड़ा, व्यवसाय में हानि, गाय, भैंस आदि पशुओं से हानि, स्त्री – पुत्रादि या अपने बन्धु – बान्धवों का विछोह होता है।

यदि शुक्र भाग्येश या कर्मेश होकर लग्न या चतुर्थ स्थान में स्थित हो तो उसकी दशा में महत् सौख्य, देश या ग्राम का पालक, देवालय – जलाशयादि का निर्माण, पुण्य कर्मों का संग्रह, अन्नदान, सदैव सुमधुर भोजन की प्राप्ति, उत्साह, यश एवं स्त्री – पुत्र आदि से सुखानुभूति होती है।

शनि दशा फल –

स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे मन्दे मित्रक्षेत्रेऽथ वा यदि।
मूलत्रिकोणे भाग्ये वा तुंगाशे स्वांशगेऽपि वा ।।
दुश्चिक्ये लाभगे चैव राजसम्मानवैभवम्।
सत्कीर्तिर्धनलाभश्च विद्यावादविनोदकृत् ।।
महाराजप्रसादेन गजवाहनभूषणम्।
राजयोगं प्रकुर्वीत सेनाधीशान्महत्सुखम् ।।
लक्ष्मीकटाक्षचिह्नानि राज्यलाभं करोति च।
गृहे कल्याणसम्पत्तिर्दारपुत्रादिलाभकृत् ।।

यदि शनि अपने उच्च, स्वक्षेत्र, मित्रक्षेत्र, मूलत्रिकोण, भाग्य, अपने उच्चांश, अपने नवमांश, तृतीय, लाभस्थान में बैठा हो तो राजसम्मान, सुन्दर यश, धनलाभ, विद्याध्ययन से स्वान्त सुख, महाराजा की कृपा से सेनानायक, हाथी, वाहन, आभूषण आदि का लाभ, परम सुख, गृह में लक्ष्मी की कृपा, राज्यलाभ, पुत्र कलत्र धनादि का लाभ, गृह में कल्याण आदि का शुभ फल प्रदान करने वाला होता है।

षष्ठाष्टमव्यये मन्दे नीचे वाऽस्तंगतेऽपि वा।
विषशस्त्रादिपीडा च स्थानभ्रंशं महद्भयम् ।।
पितृमातृवियोगं च दारपुत्रादिपीडनम्।
राजवैषम्यकार्याणि ह्यनिष्टं बन्धनं तथा ।।
शुभयुक्तेक्षिते मन्दे योगकारकसंयुते।
केन्द्रत्रिकोणलाभे वा मीनगे कार्मुके शनौ ।।
राज्यलाभं महोत्साहं गजाश्वाम्बरसंकुलम्।

यदि शनि 6,8,12 में हो, नीच या अस्तंगत हो तो विष या शस्त्र से पीड़ा, स्थान का विनांश, महाभय, माता – पिता से वियोग, पुत्र कलत्रादि को पीड़ा, राजवैमनश्यता से कार्य में अनिष्ट, बन्धन आदि प्राप्त होता है। यदि शनि शुभग्रह से युत या दृष्ट हो, योगकारक ग्रहों से सम्बन्ध रखता हो या केन्द्र - त्रिकोण लाभ में हो या मीन, धन राशिस्थ हो तो राज्यलाभ, हाथी, घोड़े, वस्त्र, महोत्सवादि का कार्य कराता है।

राहु का दशा फल –

राहोस्तु वृषभं केतुर्वृश्चिकं तुंगसंज्ञकम्।
मूलत्रिकोणकं ज्ञेयं युग्मं चापं क्रमेण च।।
कुम्भाली च गृहौ चोक्तौ कन्या मीनौ च केनचित्।
तद्दाये बहुसौख्यं च धनधान्यादिसम्पदाम्।।
मित्रप्रभुवशादिष्टं वाहनं पुत्रसम्भवः।
नवीनगृहनिर्माणं धर्मचिन्ता महोत्सवः।।
विदेशराजसन्मानं वस्त्रालंकारभूषणम्।
शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे योगकारकसंयुते।।
केन्द्रत्रिकोणलाभे वा दुश्चिक्ये शुभराशिगे।
महाराजप्रसादेन सर्वसम्पत्सुखावहम्।।
यवनप्रभुसन्मानं गृहे कल्याणसम्भवम्।

राहु का उच्च राशि वृष और केतु का वृश्चिक है। राहु का मूलत्रिकोण मिथुन और केतु का धनराशि है। राहु का कुम्भ और केतु का वृश्चिक स्वगृह राशि है। अन्य मत से कन्या और मीन भी राशिगृह है। राहु या केतु अपने उच्चादि स्थानगत हैं तो उनकी महादशा में धन – धान्यादि सम्पत्ति का अभ्युदय, मित्र एवं मान्य जनों की सहानुभूति से कार्यसिद्धि, वाहन, पुत्रलाभ, नवीन गृहनिर्माण, धार्मिक चिन्ता, महोत्सव, विदेश में भी राजसम्मान, वस्त्र, अलंकार एवं आभूषण की प्राप्ति होती है। राहु केतु योगकारक ग्रहों के साथ हों या शुभग्रह से युत दृष्ट होकर केन्द्र, त्रिकोण, लाभ तृतीय भाव में शुभ राशिगत हों तो राजा – महाराजा की कृपा से सभी सम्पत्तियों का आगमन और विदेशीय यवनराज से भी धनागम तथा अपने घर में कल्याण होता है।

यदि राहु 8,12 भाव में हो तो उसकी दशा कष्टकारक होती है, यदि पापग्रह से सम्बन्ध रखता हो या मारकेश से युत हो या अपने नीच राशिगत हो तो स्थानभ्रष्ट, मानसिक रोग, पुत्र – स्त्री, का विनाश एवं कुभोजन की प्राप्ति होती है। दशा – प्रारम्भ में शारीरिक कष्ट, धन – धान्य का विनाश, दशा के मध्य में सामान्य सुख और अपने देश में धनलाभ तथा दशा के अन्त में स्थानभ्रष्ट, मानसिक व्यथा एवं कष्ट की प्राप्ति होती है।

केतु दशाफल –

केन्द्रे लाभे त्रिकोणे वा शुभराशौ शुभेक्षिते।
स्वोच्चे वा शुभवर्गे वा राजप्रीतिं मनोनुगम्।।
देशग्रामाधिपत्यं च वाहनं पुत्रसम्भवम्।
देशान्तरप्रयाणं च निर्दिशेत् तत्सुखावहम्।।
पुत्रदारसुखं चैव चतुष्पाज्जीवलाभकृत्।
दुश्चिक्ये षष्ठलाभे वा केतुर्दाये सुखं दिशेत्।।
राज्यं करोति मित्रांशं गजवाजिसमन्वितम्।
दशादौ राजयोगाश्च दशामध्ये महद्भयम्।।
अन्ते दूराटनं चैव देहविश्रमणं तथा।
धने रन्ध्रे व्यये केतो पापदृष्टियुतेक्षिते।।
निगडं बन्धुनाशं च स्थानभ्रंशं मनोरूजम्।
शूद्रसंगादिलाभं च कुरूते रोगसंकुलम्।।

यदि केतु केन्द्र, लाभ, त्रिकोण या शुभ राशिगत हो और शुभ ग्रह से दृष्ट हो, अपने उच्च, शुभ वर्ग में स्थित हो तो राजा से प्रेम, मनोनुकूल वातावरण, देश या ग्राम का अधिकारी, वाहनसुख, सन्तानोत्पत्ति, विदेशभ्रमण, सुखकारक, स्त्री – पुत्र सुख एवं पशुओं से लाभ होता है। यदि केतु 3,6,11 भाव में स्थित हो तो उसकी दशा में सुख, राज्यलाभ, मित्रों का सहयोग एवं हाथी, घोड़े आदि सवारी का लाभ होता है। केतु की दशा के आरम्भ में राजयोग, मध्य में भय एवं अन्त में दूरगमन और शारीरिक कष्ट होता है। 2,8,12 वें भाव में केतु स्थित हो तो जातक पराश्रित, बन्धुनाश, स्थानविनाश, मानसिक रोग, अधम व्यक्ति का संग और रोगयुत होता है।

जन्मकालिक दशा का भुक्त भोग्य साधन –

दशामानं भयातघ्नं भभोगेन हृतं फलम्।
दशाया भुक्तवर्षाद्यं भोग्यं मानाद् विशोधितम्।।

जन्मसमय में जिस ग्रह की महादशा हो, उस ग्रह की वर्षसंख्या से भयात् को गुणा करे और उसमें भभोग से भाग देने पर वर्षादि लब्धि प्राप्त होती है, वही उस ग्रह के भुक्त वर्षादि होते है। उसको दशा वर्षसंख्या में घटाने से भोग्य वर्षादि स्पष्ट होते है।

उदाहरण –

माना कि किसी जातक का जन्म संवत् 2049 कार्तिक शुक्ल 10 तिथि बुधवार को है। स्पष्ट सूर्य 6/18/1/4 शतभिषा के दो चरण भयात् 19/15 भभोग 66/32, पलात्मक भयात् $19 \times 60 + 15 =$

1155, तथा पलात्मक भभोग 66 × 60 + 32 = 3992 हुआ । पलात्मक भयात 1155 को राहु दशावर्ष 18 से गुणा करने पर 20790 हुआ, इसमें पलात्मक भभोग 3992 से भाग देने पर भुक्त वर्षादि 5/2/14/51 होता है । इसको दशा वर्ष 18 में घटाने पर राहु का भोग्य वर्षादि 12/9/15/9 होता है ।

महादशा क्रम को स्पष्ट रूप से समझने के लिए सारिणी अधोनिर्मित चक्र को ध्यान से देखें -

स्पष्टार्थ महादशाचक्रम् –

रा. भु.	रा. भो.	वृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	क.	भौ.	ग्रह
5	12	16	19	17	7	20	6	10	7	वर्ष
2	9									मास
14	15									दिन
51	9									घटी
2049	2062	2078	2097	2114	2121	2141	2147	2157	2164	संवत्
6	4	4	4	4	4	4	4	4	4	सू. रा.
18	3	3	3	3	3	3	3	3	3	सू. अं.
1	10	10	10	10	10	10	10	10	10	सू. क.

भावेश सम्बन्ध के अनुसार दशा फल –

लग्नेशस्य दशाकाले सत्कीर्तिर्देहजं सुखम् ।
धनेशस्य दशायां तु क्लेशो वा मृत्युतो भयम् ।।
सहजेशदशाकाले ज्ञेयं पापफलं नृणाम् ।
सुखाधीशदशायां तु गृहभूमिसुखं भवेत् ।।
पञ्चमेशस्य पाके च विद्याप्तिः पुत्रजं सुखम् ।
रोगेशस्य दशाकाले देहपीडा रिपोर्भयम् ।।

लग्नेश के दशाकाल में सुयश और शारीरिक सुख, धनेश की दशा में क्लेश या मृत्युभय, तृतीयेश की दशा अशुभकारक, चतुर्थेश की दशा में गृह – भूमि सुख की प्राप्ति, पंचमेश की दशा में विद्या की प्राप्ति, और पुत्रजन्य सुख एवं षष्ठेश की दशा में शारीरिक कष्ट और शत्रुभय का आभास होता है ।

सप्तमेशस्य पाके तु स्त्रीपीडा मृत्युतो भयम् ।

अष्टमेशदशाकाले मृत्युभीतिर्धनक्षतिः ।।

धर्मेशस्य दशायां च भूरिलाभो यशःसुखम् ।

दशमेशदशाकाले सम्मानं नृपसंसदि ।।

लाभेशस्य दशाकाले लाभे बाधा रूजोभयम् ।

व्ययेशस्य दशा नृणां बहुकष्टप्रदा द्विज ।।

दशारम्भे शुभस्थाने स्थितस्यापि शुभं फलम् ।

अशुभस्थानगस्यैवं शुभस्यापि न शोभनम् ।।

सप्तमेश की दशा में पत्नी को कष्ट और मृत्युभय,अष्टमेश की दशा में मरण की आशंका और धननाश, नवमेश की दशा में अधिक लाभ, यश और सुख, दशमेश की दशा में राजसभा में सम्मान, एकादशेश की दशा में लाभ में अवरोध, रोगभय, एवं द्वादशेश की दशा जातक को बहुत कष्टदायक होती है । दशमेश शुभ स्थान में स्थित हो तो दशाफल शुभ एवं अशुभ स्थान 6,8 आदि में हो तो दशेश शुभ ग्रह होने पर भी अशुभ फल देने वाले होते है ।

पंचमेशेन युक्तस्य कर्मेशस्य दशा शुभा ।

नवमेशेन युक्तस्य कर्मेशस्यातिशोभना ।।

पंचमेशेन युक्तस्य ग्रहस्यापि दशा शुभा ।

तथा धर्मपयुक्तस्य दशा परमशोभना ।।

सुखेशसहितस्यापि धर्मेशस्य दशा शुभा ।

पंचमस्थानगस्यापि मानेशस्य दशा शुभा ।।

एवं त्रिकोणनाथानां केन्द्रस्थानां दशाः शुभाः ।

तथा कोणस्थितानां च केन्द्रेशानां दशाः शुभाः ।।

केन्द्रेशः कोणभावस्थः कोणेशः केन्द्रगो यदि ।

तयोर्दशां शुभां प्राहुर्ज्योर्तिःशास्त्रविदो जनाः ।।

पंचमेश से युत कर्मेश की दशा शुभ फलदायक होती है, भाग्येश से युत कर्मेश की दशा अत्यन्त शुभ फलकारक होती है । अन्य ग्रह भी पंचमेश से युत हों तो उन ग्रहों की दशा भी शुभकारक होती है तथा धर्मेश से युत ग्रह की दशा परमसुखकारक होती है । धर्मेश चतुर्थेश से युत हो तो उसकी दशा भी शुभकारक होती है । दशमेश यदि पंचम स्थान में हो तो भी उसकी दशा शुभकारक होती है । इसी प्रकार केन्द्रेश कोणस्थान में हो या केन्द्रेश त्रिकोण में और त्रिकोणेश केन्द्र में हो तो उनकी दशा भी शुभ फलकारक होती है ।

षष्ठाष्टमव्ययाधीशा अपि कोणेशसंयुता।
तेषां दशाऽपि शुभदा कथिता कालकोविदैः॥
कोणेशो यदि केन्द्रस्थः केन्द्रेशो यदि कोणगः।
ताभ्यां युक्तस्य खेटस्य दृष्टियुक्तस्य चैतयोः॥
दशां शुभप्रदां प्राहुर्विद्वांसो दैवचिन्तकाः।
लग्नेशो धर्मभावस्थो धर्मेशो लग्नगो यदि॥
एतयोस्तु दशाकाले सुखधर्मसमुद्भवः।
कर्मेशो लग्नराशिस्थो लग्नेशः कर्मभावगः॥
तयोर्दशाविपाके तु राज्यलाभो भवेद् ध्रुवम्।
त्रिषडायगतानां च त्रिषडायाधिपैर्युजाम्॥
शुभानामपि खेटानां दशा पापफलप्रदा।
एवं भावेशसम्बन्धादूहनीयं दशाफलम्॥

यदि 6,8,12 भावों के अधिपति भी कोणेश से युत हों तो उनकी दशा भी शुभ फल देने वाली होती है। कोणेश यदि केन्द्र में हों और केन्द्रेश कोणस्थान में हों तो उन केन्द्रेश और कोणेश से युत ग्रहों की दशा भी शुभ फलप्रद होती है और उन दोनों की दृष्टियुत ग्रहों की दशा भी शुभ फल प्रदान करने वाली होती है। लग्नेश धर्मभाव में और धर्मेश लग्न में हो तो दोनों के दशाकाल में जातक को सुख और धर्म की वृद्धि होती है। कर्मेश लग्न में और लग्नेश कर्मभाव में हो तो उन दोनों के दशाकाल में जातक को राज्य का लाभ होता है।

यदि 3,6,11 स्थानों में स्थित ग्रहों या उनके स्वामीयों से युत या दृष्ट शुभ ग्रहों की दशा भी अशुभ फलप्रद होती है। मारक स्थानगत ग्रह या मारकेश से युत ग्रह, अष्टम स्थान में स्थित ग्रह या अष्टमेश से युत दृष्ट शुभ ग्रहों की दशा भी अशुभ फलदायक होती है। इस प्रकार भावेश और स्थानेश के परस्पर सम्बनध, दृष्टि, युति आदि के तारतम्य से शुभ या अशुभ फल का विवेचन करना चाहिये।

प्रत्येक राशियों का नवमांशानुसार दशाफल –

मेषे तु रक्तपीडा च वृषभे धान्यवर्द्धनम्।
मिथुने ज्ञानसम्पन्नश्चान्द्रे धनपतिर्भवेत्॥
सूर्यर्क्षे शत्रुबाधा च कन्या स्त्रीणां च नाशनम्।
तौलिके राजमन्त्रित्वं वृश्चिके मरणं भवेत्॥

अर्थलाभे भवेच्चापे मेषस्य नवभागके।

मेष राशि का फल –

मेषे तु रक्तपीडा च वृषभे धान्यवर्द्धनम्।
मिथुने ज्ञानसम्पन्नश्चान्द्रे धनपतिर्भवेत्।।
सूर्यर्क्षे शत्रुबाधा च कन्या स्त्रीणां च नाशनम्।
तौलिके राजमन्त्रित्वं वृश्चिके मरणं भवेत्।।
अर्थलाभो भवेच्चापे मेषस्य नवभागके।

मेष राशि की मेष के ही नवमांश में कालचक्रदशा हो तो रक्तपीड़ा, वृष के नवमांश में धन – धान्य की वृद्धि, मिथुन में ज्ञानयुति, कर्क के नवमांश में धनाधीश, सिंह के नवमांश में शत्रुपीड़ा, कन्या में स्त्री का विनाश, तुला में राजा का मन्त्री, वृश्चिक में मरण एवं धन के नवमांश में कालचक्रदशा हो तो अर्थ का लाभ होता है।

वृष राशि का फल –

मकरे पापकर्माणि कुम्भे वाणिज्यमेव च।
मीने सर्वार्थसिद्धिश्च वृश्चिकेष्वग्नितो भयम्।।
तौलिके राजपूज्यश्च कन्यायां शत्रुवर्धनम्।
शशिभे दारसम्बाधा सिंहे च त्वक्षिरोगकृत्।।
मिथुने वृत्तिबाधा स्याद् वृषभस्य नवांशके।

वृष राशि में मकर के नवमांश में काल चक्र दशा हो ता पापकार्य में प्रवृत्ति, कुम्भनवमांश दशा में वाणिज्य लाभ, मीन में सभी कार्यों में सफलता, वृश्चिक में अग्निभय, तुला में राजमान्य, कन्या में शत्रुवृद्धि, कर्क की दशा में पत्नी को कष्ट, सिंह में नेत्र रोग, एवं मिथुन में व्यवसाय में बाधायें उत्पन्न होती है।

मिथुनगत नवमांश राशियों के दशाफल –

वृषभे त्वर्थलाभश्च मेषे तु ज्वररोगकृत्।
मीने तु मातुलप्रीतिः कुम्भे शत्रुप्रवर्द्धनम्।।
मृगे चौरस्य सम्बाधा धनुषि शस्त्रवर्धनम्।
मेषे तु शस्त्रसंघातो वृषभे कलहो भवेत्।।
मिथुने सुखमाप्नोति मिथुनस्य नवमांशके।।

मिथुनगत वृष की नवमांश दशा में धनलाभ, मेष में ज्वरपीड़ा, मीन में मामा से प्रीति, कुम्भ में शत्रु

की वृद्धि, मकर में चौर – बाधा, धनु में शस्त्रवृद्धि, मेष में शस्त्र से भय, वृष में कलह, और मिथुन की दशा में सुख की प्राप्ति होती है।

कर्कगत नवमांश राशियों के दशाफल –

कर्कटे संकटप्राप्तिः सिंहे राजप्रकोपकृत्।
कन्यायां भ्रातृपूजा च तौलिके प्रियकृन्नरः ।।
वृश्चिके पितृबाधा स्यात् कुम्भे धान्यविवर्धनम्।
मीने च सुखसुखसम्पत्तिः कर्कटस्य नवांशके ।।

कर्कटगत कर्क की नवमांश दशा में संकट, सिंह में राजक्रोध, कन्या में भ्रातृ आदर, तुला में दूसरे का उपकार, वृश्चिक में पितृबाधा, धनु में ज्ञान और धन का अभ्युद, मकर में जल से भय, कुम्भ में धान्यवृद्धि एवं मीन में सुख और सम्पत्ति की वृद्धि होती है।

सिंहगत राशियों का दशाफल –

वृश्चिके कलहः पीडा तौलिके ह्यधिकं फलम्।
कन्यायामतिलाभश्च शशांके मृगबाधिका ।।
सिंहे च पुत्रलाभश्च मिथुने शत्रुवर्द्धनम्।
वृषे चतुष्पादाल्लाभे मेषांशे पशुतो भयम् ।।
मीने तु दीर्घयात्रा स्यात् सिंहस्य नवभागके।

सिंह राशिगत वृश्चिक के नवमांश में कालचक्रदशा हो तो कलह और पीड़ा, तुला में अधिक लाभ, कन्या में विशेष लाभ, कर्क में मृगादिन्य जन्तुओं से बाधा, सिंह में पुत्रलाभ, मिथुन में शत्रुवृद्धि , वृष में गौ आदि चतुष्पदों से लाभ, मेष में पशुओं से भय और मीन में लम्बी यात्रा होती है ।

कन्यागत नवांश राशियों के दशाफल –

कुम्भे तु धनलाभश्च मकरे द्रव्यलाभकृत्।
धनुषि भ्रातृसंसर्गो मेषे मातृविवर्द्धनम् ।।
वृषभे पुत्रवृद्धिः स्यान्मिथुने शत्रुवर्द्धनम्।
शशिभे तु स्त्रियां प्रीतिः सिंहे व्याधिविवर्द्धनम् ।।
कन्यायां पुत्रवृद्धिः स्यात्कन्याया नवमांशके।

कन्यागत नवमांश में कुम्भ की दशा हो तो धनलाभ, मकर में भी धनलाभ, धनु में भाइयों का संसर्ग, मेष में माता का सुख, वृष मे सन्तानवृद्धि, मिथुन में शत्रुवृद्धि, कर्कट में स्त्री से प्रीति, सिंह में रोगाधिक्य और कन्या में पुत्र की प्राप्ति होती है।

तुलागत नवमांश राशियों के दशाफल –

तुलायामर्थलाभश्च वृश्चिके भ्रातृवर्द्धनम् ।
चापे च तातसौख्यं च मृगे मातृविरोधिता ।
कुम्भे पुत्रार्थलाभश्च मीने शत्रुविरोधिता ।।
अलौ जायाविरोधश्च तुले च जलबाधता ।
कन्यायां धनवृद्धिः स्यात तुलाया नवभागके ।।

तुला में तुला के ही नवमांश में कालचक्रदशा हो तो धनलाभ, वृश्चिक में भातृ की वृद्धि, धनु में पितृसुख, मकर में मातृविरोध, कुम्भ में पुत्र एवं धन का लाभ, मीन में शत्रु से विरोध, वृश्चिक में पत्नी से विरोध, तुला में जल से भय एवं कन्या में धनागम होता है।

वृश्चिकगत नवमांश राशियों के दशाफल –

कर्कटे ह्यर्थनाशश्च सिंहे राजविरोधिता ।
मिथुने भूमिलाभश्च वृषभे चाऽर्थलाभकृत् ।।
मेषे सर्पादिभीतिः स्यान्मीने चैव जलाद् भयम् ।
कुम्भे व्यापारतो लाभो मकरेऽपि रूजोभयम् ।
चापे तु धनलाभः स्यात् वृश्चिकस्य नवांशके ।।

वृश्चिकगत कर्कट की नवमांश में कालचक्रदशा हो तो धननाश, सिंह में राजा से वैमनश्यता, मिथुन में भूमिलाभ, वृष में अर्थलाभ, मेष में सर्पभय, मीन में जलभय, कुम्भ में व्यापार से लाभ, मकर में रोगभय और धनु में धनलाभ होता है।

धनुराशिगत नवमांश राशियों के दशाफल –

मेषे तु धनलाभः स्यात् वृषे भूमिविवर्द्धनम् ।
मिथुने सर्वार्थसिद्धिः स्यात्कर्कटे सर्वसिद्धिकृत् ।।
सिंहे तु पूर्ववृद्धिः स्यात्कन्यायां कलहो भवेत् ।
तौलिके चार्थलाभः स्यात् वृश्चिके रोगमाप्नुयात् ।।
चापे तु सुतवृद्धिः स्याच्चापस्य नवमांशके ।

धनुगत मेष राशि के नवमांश में कालचक्र दशा हो तो धनलाभ, वृष में भूमि की प्राप्ति, मिथुन में सर्वसिद्धि, कर्कट में सभी कार्य सफल, सिंह में पूर्वागत धन की वृद्धि, कन्या में कलह, तुला में अर्थलाभ, वृश्चिक में रोगप्राप्ति एवं धनु में पुत्रवृद्धि होती है।

मकरगत नवमांश राशियों के दशाफल –

मकरे पुत्रलाभः स्यात्कुम्भे धान्यविवर्द्धनम् ।
मीने कल्याणमाप्नोति वृश्चिके विषबाधिता ।।
तौलिके त्वर्थलाभश्च कन्यायां शत्रुवर्द्धनम् ।
शशिभे श्रियमाप्नोति सिंहे तु मृगबाधिता ।।
मिथुने वृक्षबाधा च मृगस्य नवभागके ।

मकरगत मकर के नवमांश में कालचक्र दशा हो तो पुत्रलाभ, कुम्भ में धान्यवृद्धि, मीन में कल्याणप्राप्ति, वृश्चिक में विषभय, तुला में अर्थलाभ, कन्या में शत्रुवृद्धि, कर्क में लक्ष्मी की प्राप्ति, सिंह में वन्य जन्तुओं का भय एवं मिथुन में वृक्षों से गिरने का भय होता है ।

कुम्भगत नवमांश राशियों के दशाफल –

वृषभे त्वर्थलाभश्च मेषभे त्वक्षिरोगकृत् ।
मीने तु दीर्घयात्रा स्यात्कुम्भे धनविवर्द्धनम् ।।
मकरे सर्वसिद्धिः स्याच्चापे शत्रुविवर्द्धनम् ।
मेषे सौख्यविनाशश्च वृषभे मरणं भवेत् ।।
युग्मे कल्याणमाप्नोति कुम्भस्य नवमांशके ।

कुम्भ राशि में वृष के नवमांश में कालचक्र दशा हो तो धन – वृद्धि, मेष में नेत्र में रोग, मीन में लम्बी यात्रा, कुम्भ में धन – धान्य की वृद्धि, मकर में सभी कार्यों की सिद्धि, धन में शत्रुवृद्धि, मेष में सुख का विनाश, वृष में मरण एवं मिथुन में कल्याण की प्राप्ति होती है ।

मीनगत नवमांश राशियों के दशाफल –

कर्कटे धनवृद्धिः स्यात् सिंहे तु राजपूजनम् ।
कन्यायामर्थलाभस्तु तुलायां लाभमाप्नुयात् ।।
वृश्चिके ज्वरमाप्नोति चापे शत्रुविवर्द्धनम् ।
मृगे जायाविरोधश्च कुम्भे जलविरोधिता ।।
मीने तु सर्वसौभाग्यं मीनस्य नवभागके ।

मीन राशि में कर्कट के नवमांश में कालचक्र दशा हो तो धनवृद्धि, सिंह में राजा से पूजन, कन्या में धनलाभ, तुला में अपने व्यवसाय से लाभ, वृश्चिक में ज्वरपीड़ा, धन में शत्रुवृद्धि, मकर में पत्नी से वैमनश्यता, कुम्भ में जल से भय और मीन में सभी प्रकार से सौभाग्य की प्राप्ति होती है ।

1.4 सारांशः-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि समस्त चराचर प्राणियों के जीवनकाल में उनका कौन सा समय शुभ है, अथवा कौन सा समय अशुभ हैं, इसका विवेक ज्योतिष शास्त्र के उस अभीष्ट कालावधि में प्रचलित दशा व महादशा के आधार पर होता है। जन्माङ्ग चक्र में ग्रहों की जो शुभाशुभ फल की स्थिति होती है, वही फल उन ग्रहों की दशान्तर्दशाओं में जातक को प्राप्त होता है। विंशोत्तरी दशाओं का प्रचलन विन्ध्य से उत्तर दिशाओं के प्रान्तों में है। दशा के अनेक भेद है, परन्तु उनमें भी मुख्य दशा **विंशोत्तरीय** दशा है, जो सर्वसाधारण के लिए हितकारी है। अन्य विद्वानों ने अष्टोत्तरी, षोडशोत्तरी, द्वादशोत्तरी, पञ्चोत्तरी, शताब्दि, चतुरशीतिसमा, द्विसप्ततिसमा, षष्टिसमा, षट्त्रिंशत्समा आदि ये सभी जन्मनक्षत्राधारित दशाओं की चर्चा की हैं। दशाओं में कालदशा, चक्रदशा है तथा सभी दशाओं में मान्य कालचक्र दशा कही गयी है। इनके अतिरिक्त चरदशा, स्थिरदशा, केन्द्रदशा, कारकदशा एवं ब्रह्मग्रहदशा भी कही गई है। किसी ने मण्डूकदशा, शूलदशा, योगार्धदशा, दृग्दशा, त्रिकोणदशा, राशिदशा, पञ्चस्वरदशा, योगिनीदशा, पिण्डदशा, नैसर्गिक दशा, अष्टवर्ग दशा, सन्ध्या दशा, पाचक दशा एवं अन्य तारादि विभिन्न दशाभेद कहा है। परन्तु सभी दशायें सर्वसम्मत नहीं हैं अर्थात् व्यवहारोपयोगी नहीं है। पराशरोक्त सभी दशाओं में नक्षत्र दशा तथा उनमें भी विंशोत्तरी दशा सर्वश्रेष्ठ है।

1.5 पारिभाषिक शब्दावली

दशा – दशा का शाब्दिक अर्थ है – स्थिति।

विंशोत्तरी महादशा – 120 वर्षों की दशा को विंशोत्तरी महादशा कहा जाता है। यह विन्ध्य से उत्तर प्रचलित है।

कालचक्र – समय सम्बन्धित चक्र।

नवमांश – राशि के नवें भाग को नवमांश कहते है। 3^0 20 कला का एक नवमांश होता है।

1.6 बोधप्रश्नों के उत्तर

1. ख
2. घ
3. ग
4. ख
5. ग

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वृहत्पराशरहोराशास्त्र – आचार्य पराशर

ज्योतिष सर्वस्व – सुरेश चन्द्र मिश्र

वृहज्जातक – वराहमिहिर

जातकपारिजात – वैद्यनाथ

1.8 सहायक पाठ्यसामग्री

ज्योतिर्विद्याभरणम्

लघुजातक

फलदीपिका

जातकभरणम्

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. दशा किसे कहते है। विंशोत्तरी महादशा का साधन की विधि बतलाते हुए विस्तार से उसका उल्लेख कीजिये।

2. विंशोत्तरी महादशा के सूर्यादि ग्रहों में होने वाली शुभाशुभ फल का विवेचन कीजिये।

इकाई – 2 अष्टोत्तरी दशा फल

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई दशाफल विचार के द्वितीय इकाई '**अष्टोत्तरी दशाफल**' शीर्षक से संबंधित है। जातक के सम्पूर्ण जीवन का विचार कुण्डली में स्थित ग्रहों के अनुसार होता है, और उनके जीवन में जो भी शुभाशुभ फल होता है, वह उन ग्रहों की दशान्तर्दशाओं में ही उनको प्राप्त होता है।

अष्टोत्तरी से तात्पर्य है - 108 वर्षों की दशा। भारतवर्ष के गुजरात, सौराष्ट्र, कच्छ, पांचाल, अल्मोड़ा क्षेत्र, सिन्धादि स्थलों पर अष्टोत्तरी दशा मुख्य रूप से प्रचलित है। विन्ध्य से दक्षिण भारत में इसका अधिक प्रचार – प्रसार है। अभीष्ट काल में किसी जातक के स्थिति का शुभाशुभ ज्ञान दशा के आधार पर ही किया जाता है।

इससे पूर्व की इकाईयों में आपने विंशोत्तरी दशा फल का विस्तृत अध्ययन कर लिया हैं। यहॉ हम इस इकाई में अष्टोत्तरी दशा साधन एवं उसके फलादेश सम्बन्धित विषयों का अध्ययन विस्तार पूर्वक करेंगे

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

1. दशा को परिभाषित करने में समर्थ हो सकेंगे।
2. अष्टोत्तरी दशा के महत्त्व को समझा सकेंगे।
3. अष्टोत्तरी दशा का निरूपण करने में समर्थ होंगे।
4. अष्टोत्तरी दशा का स्वरूप वर्णन करने में समर्थ होंगे।
5. अष्टोत्तरी दशा से फलादेशादि को निरूपित करने में समर्थ होंगे।

2.3 अष्टोत्तरी दशा परिचय -

गुर्जरकच्छसौराष्ट्रे पांचाले सिन्धुपर्वते।
एतेष्वष्टोत्तरी श्रेष्ठा प्रत्यक्षफलदायिनी ।।

मानसागरी में प्रतिपादित हैं कि शुक्लपक्ष में जन्म लेने वालों के लिए अष्टोत्तरी दशा तथा कृष्ण पक्ष में उत्पन्न व्यक्तियों के लिए विंशोत्तरी दशा का ग्रहण करना चाहिये। दूसरी बात यह है कि शुक्ल पक्ष में रात्रि में जन्म हो तथा कृष्ण पक्ष में दिन में जन्म हो तो विंशोत्तरी तथा शुक्ल पक्ष के दिन में व कृष्ण पक्ष की रात्रि में जन्म हो तो अष्टोत्तरी दशा का ग्रहण करना चाहिये।

कुछ लोगों ने मानसागरी के मत के साथ एक शर्त और जोड़ दी है। शुक्ल पक्ष में या दिन में या सूर्य की होरा में जन्म हो तो विंशोत्तरी तथा कृष्ण पक्ष में या रात्रि में या चन्द्रमा की होरा में जन्म हो तो

अष्टोत्तरी दशा ग्रहण करना चाहिये। यथा –

शुक्लेऽगेऽर्कस्य होरायां दिवा विंशोत्तरी मता।

कृष्णे चन्द्रस्य होरायां रात्रावष्टोत्तरी मता ।।

ग्रहफल और मारकादि विचार में विंशोत्तरी दशा सर्वत्र उपयोगी व प्रामाणिक है।

अष्टोत्तरी दशा में केवल आठ ही ग्रहों की दशा होती है। केतु का इसमें ग्रहण नहीं है। दशाओं का क्रम व दशा वर्ष भी विंशोत्तरी से बहुत भिन्न है। दशेशों का क्रम याद रखने के लिये अधोलिखित श्लोक को कण्ठस्थ रखें –

सूर्यचन्द्र: कुज: सौम्य: शनिर्जीवस्तमोभृगु: ।

एते दशाधिपा: प्रोक्ता: बिना केतुं क्रमाद् ग्रहा: ।।

अर्थात् सूर्य, चन्द्र, भौम, बुध, शनि, गुरू, राहु शुक्र ये क्रमश: अष्टोत्तरी में दशेश होते हैं। इनके दशा वर्ष क्रमश: 6,15,8,17,10,19,12,21 हैं।

षडादित्ये च वर्षाणि चन्द्रे पंचदशैव च।

मंगले चाष्टवर्षाणि बुधे सप्तदशैव तु ।।

शनौ च दशवर्षाणि गुरोरेकोनविंशति: ।

राहोर्द्वादश वर्षाणि शुक्रस्याप्येकविंशति: ।।

अर्थात् सूर्य की 6 वर्ष, चन्द्रमा की 15 वर्ष, भौम की 8 वर्ष, बुध की 17 वर्ष, शनि की 10 वर्ष, गुरू की 19 वर्ष, राहु की 12 वर्ष, शुक्र की 21 वर्ष तक अष्टोत्तरी दशा होती है। इन सभी वर्षों का योग 108 वर्ष होता है।

अष्टोत्तरी दशा ज्ञान के दो प्रकार – आजकल प्राय: सर्वत्र नक्षत्र आर्द्रा से ही गणना कर अष्टोत्तरी दशा का विचार किया जाता है। इसे आर्द्रादिदशा कहते हैं। इसी का सर्वाधिक प्रचार है। लेकिन एक अन्य व्यवस्था कृत्तिका नक्षत्र से भी है । इसे कृत्तिकादशा कहते है।

अष्टोत्तरी द्विधा प्रोक्ता शिवादि कृत्तिकादित: ।

लग्ने सग्रहे शैवाद् विग्रहे कृत्तिकादित: ।।

अर्थात् लग्न में कोई ग्रह हो तो आर्द्रादि और लग्न ग्रहरहित हो तो कृत्तिकादि अष्टोत्तरी दशा होगी। ऐसा वृहत्पराशर होराशास्त्र में उल्लेखित किया गया है। प्रचलित वृहत्पराशर के संस्करणों में एक बिल्कुल अलग व्यवस्था दी गई है। यदि लग्नेश से 4,7,10,5,9 भावों में राहु हो तो आर्द्रादि अष्टोत्तरी दशा होगी तथा कृत्तिकादि व्यवस्था का वहॉं नाम नहीं लिया गया है। लेकिन भारतवर्ष में कुछ स्थलों पर कृत्तिकादि मत का भी आदर किया जाता है।

प्रसिद्ध प्रकार से दशा जानने के लिए आर्द्रादि जन्म नक्षत्र पर्यन्त गिनना चाहिये तथा पापग्रहों के 4 व

सौम्य ग्रहों के 3 नक्षत्र मानकर अभिजित सहित गणना करना चाहिये। अर्थात् **'चतुष्कं त्रितयं'** क्रमानुसार नक्षत्र स्थापित कर दशेश जानेंगे।

इसके विपरीत कृत्तिकादि व्यवस्था में त्रितयं चतुष्कं क्रमानुसार अभिजित् सहित 28 नक्षत्र स्थापित किए जायेंगे। इसमें सौम्य ग्रह को चार नक्षत्र व पापग्रह को तीन नक्षत्र मिलते हैं। दशा वर्ष दोनों विधियों में समान हैं।

अष्टोत्तरी दशा बोधक चक्र आर्द्रादि

दशेश	**सूर्य**	**चन्द्र**	**मंगल**	**बुध**	**शनि**	**गुरू**	**राहु**	**शुक्र**
वर्ष	6	15	8	17	10	19	12	21
नक्षत्र	आर्द्रा	मघा	हस्त	अनुराधा	पू0षा0	धनिष्ठा	उ0भा0	कृत्तिका
	पुनर्वसु	पू0फा0	चित्रा	ज्येष्ठा	उ0षा0	शतभिषा	रेवती	रोहिणी
	पुष्य	उ0फा0	स्वाती	मूल	अभि0	पू0भा0	अश्विनी	मृगशिरा
	आश्लेषा		विशाखा		श्रवण		भरणी	

अष्टोत्तरी साधन प्रकार -

लग्नेशात् केन्द्रकोणस्थे राहौ लग्नं विना स्थिते।
अष्टोत्तरी दशा विप्र विज्ञेया रौद्रभादित: ।।
चतुष्कं त्रितयं तस्मात् चतुष्कं त्रितयं पुन:।
एवं स्वजन्मभं यावद् विगणय्य यथाक्रमम् ।।
सूर्यश्चन्द्र: कुज: सौम्य: शनिर्जीवस्तमो भृगु:।
एते दशाधिपा विप्र ज्ञेया: केतुं विना ग्रहा: ।।
रसा: पंचन्देवो नागा: सप्तचन्द्राश्च खेन्दव:।
गोऽब्जा: सूर्या: कुनेत्राश्च रव्यादीनां दशासमा: ।।

यदि लग्नाधिप से राहु लग्न को छोड़कर अन्य केन्द्र त्रिकोणस्थान में बैठा हो तो अष्टोत्तरी दशा ग्रहण करनी चाहिये, ऐसा कुछ प्राचीनाचार्यो का मत है। उस अष्टोत्तरी में आर्द्रा से 4 नक्षत्राधिप सूर्य, अनन्तर के 3 नक्षत्र चन्द्र, पश्चात् के 4 नक्षत्र भौम, उसके बाद 3 नक्षत्र शुक्र – इस प्रकार गणना कर अपना जन्मनक्षत्र जिस ग्रह में पड़े, वही प्रारम्भकालिक जन्मदशा होगी। दशावर्ष रवि का 6, चन्द्र का 15, भौम का 8, बुध का 17, शनि का 10, गुरू का 19 राहु का 12 वर्ष और शुक्र का 21 वर्ष है। इस प्रकार केतु को छोड़कर शेष 8 ग्रह ही दशाधिपति होते है।

अष्टोत्तरी दशानयन –

दशाब्दांघ्रिश्च पापानां शुभानां त्र्यंश एव हि।
एकैकभे दशामानं विज्ञेयं द्विजसत्तम ।।
ततस्तद्यातभोगाभ्यां भुक्तं भोग्यं च साधयेत्।
विंशोत्तरीवदेवात्र ततस्तत्फलमादिशेत्।।

पूर्वोक्त अष्टोत्तरी दशा वर्ष संख्या में से पापग्रहों के दशामान के चतुर्थांश एक – एक नक्षत्र में दशावर्ष होते हैं। शुभ ग्रहों में तृतीयांश एक – एक नक्षत्र में दशामान होते हैं। इस प्रकार अपने जन्मनक्षत्र में जो दशा हो और उसका जो भी दशामान उत्पन्न हो उस पर से भयात्, भभोग के माध्यम से विंशोत्तरी के अनुरूप दशा का भुक्त – भोग्य वर्षादि साधन करना चाहिये।

विशेष – यदि उत्तराषाढ़ा में जन्म हो तो उत्तराषाढा के प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय चरणों का योग करके उसको भभोग मानकर दशा का भुक्त – भोग्य वर्षादि साधन करना चाहिये एवं उत्तराषाढा के चतुर्थ चरण में या श्रवण के 15 वें भाग के प्रारम्भ काल में जन्म हो तो उत्तराषाढा के चतुर्थ चरण तथा श्रवण के 15 वें भाग का योग करके जो हो, उसे भभोग मानकर दशा का भुक्त – भोग्य वर्षादि साधन करना चाहिये। यदि श्रवण में जन्म हो तो 15 वॉं भाग श्रवण के भभोग में घटाकर शेष को भभोग मानकर दशा का भुक्त – भोग्य वर्षादि साधन करना चाहिये। उत्तराषाढा के चतुर्थ चरण और श्रवण का 15 वॉं भाग मिला करके अभिजित नामक नक्षत्र होता है।

उदाहरण –

जैसे उत्तराषाढा का सम्पूर्ण मान 60।16 घटयादि है यथा भयात् 20।8 है तो उत्तराषाढा के द्वितीय चरण में जन्म हुआ। उत्तराषाढा के कुल भोग मान 60।16 में इसके चतुर्थांश 15। 4 को घटाने से 45।12 होता है, यही भभोग हुआ तथा 20।8 भयात् हुआ। उत्तराषाढा शनि का द्वितीय नक्षत्र है। उसका मान 30 माह है, क्योंकि शनि के 4 नक्षत्र में 10 वर्ष हैं तो 1 नक्षत्र में क्या। इस प्रकार आनयन करने पर 30 माह आता है। अत: इस 30 माह से विंशोत्तरी दशानयनवत् भयात् 20।8 पलात्मक 1208 को 30 माह से गुणा किया तो 36240 हुआ, इसमें पलात्मक 2712 भभोग से भाग देने पर लब्ध मासादि 13।10।53 यह भुक्त हुआ, इसको 30 में घटाने से लब्ध मासादि शनि का 16।19।7 भोग्य हुआ। इसमें अभिजित् तथा श्रवण नक्षत्र के 30-30 माह जोड़ने से मासादि 76।19।7 हुआ, पुन: इसको वर्षादि बनाने से 6।4।19।7 हुआ, यह अष्टोत्तरी दशा में शनि का भोग्य वर्षादि हुआ।

उपर्युक्त गणनानुसारेण अष्टोत्तरी दशा चक्र –

श.	वृ.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.		दशाधिप
6	19	12	21	6	15	8	17		वर्ष
4									मास
19									दिन
7									घटी
2049	2055	2074	2086	2107	2113	2118	2136	2153	संवत्
4	9	9	9	9	9	9	9	9	सू.रा
18	7	7	7	7	7	7	7	7	सू.अं.
15	22	22	22	22	22	22	22	22	सू. क.

2.4 बोध प्रश्न –

1. **अष्टोत्तरी से तात्पर्य है।**
   क. 104 ख. 108 ग. 120 घ. 100
2. **अष्टोत्तरी का प्रचलन है।**
   क. विन्ध्य के उत्तर ख. विन्ध्य के पूर्व ग. विन्ध्य से पश्चिम घ. विन्ध्य से दक्षिण
3. **अष्टोत्तरी दशा में चन्द्रमा की दशावर्ष है।**
   क. 12 वर्ष ख. 13 वर्ष ग. 14 वर्ष घ. 15 वर्ष
4. **शुक्लपक्ष में विचार करने वाली दशा है।**
   क. विंशोत्तरी ख. अष्टोत्तरी ग. दोनों घ. इनमें से कोई नही
5. **अष्टोत्तरी दशा में शुक्र की दशावर्ष है।**
   क. 18 वर्ष ख. 21 वर्ष ग. 25 वर्ष घ. 19 वर्ष

अष्टोत्तरी दशा फल विचार – अष्टोत्तरी दशा फल का विचार भी विंशोत्तरी के समान ही होता है। इसके दशाफल विचार में कोई स्वतन्त्र रूप से अलग विचार आचार्यों के द्वारा ज्योतिष के ग्रन्थों में प्रतिपादित नहीं किये गये है। अत: तदनुसार यहाँ प्रत्येक ग्रहों का दशा फल क्रमवत् इस प्रकार से है -

रवि दशा फल –

मूलत्रिकोणे स्वक्षेत्रे स्वोच्चे वा परमोच्चगे।
केन्द्रत्रिकोणलाभस्थे भाग्यकर्माधिपैर्युते ।।

सूर्ये बलसमायुक्ते निजवर्गबलैर्युते।
तस्मिन्दाये महत् सौख्यं धनलाभादिकं शुभम् ।।
अत्यन्तं राजसन्मानमश्वसन्दोल्यादिकं सुखम् ।
सुताधिपसमायुक्ते पुत्रलाभं च विन्दति ।।
धनेशस्य च सम्बन्धे गजान्तैश्वर्यमादिशेत् ।
वाहनाधिपसम्बन्धे वाहनत्रयलाभकृत् ।।
नृपालतुष्टिर्वित्ताढय: सेनाधीश: सुखो नर: ।
बलवाहनलाभश्च दशायां बलिनो रवे: ।।

यदि सूर्य जन्मसमय में अपने मूलत्रिकोण में, अपने क्षेत्र में अपने उच्च में अपने परमोच्च में केन्द्र, त्रिकोण, लाभभाव में, भाग्येश कर्मेश के साथ में निज वर्ग में बलवान होकर बैठा हो तो उसकी दशा में धनलाभ, अधिक सुख, राजसम्मानादि की प्राप्ति होती है। सन्तानेश के साथ हो तो पुत्रलाभ, धनेश के साथ सूर्य हो तो हाथी आदि धनों का लाभ और वाहनेश के साथ हो तो वाहन का लाभ कराता है। ऐसा जातक राजा की अनुकम्पा से धनाढय होकर सेनानायक बनकर सुखी होता है। इस प्रकार बलयुत रवि की महादशा में बल, वाहन, और धन का लाभ होता है।

अन्य स्थिति में फल - यदि जातक के जन्मसमय में सूर्य अपने नीच राशि का हो, 6,8,12 भाव में में निर्बल पापग्रहों से युत हो या राहु – केतु से युत हो या दु:स्थान 6,8,12 के अधिपति से युत हो तो सूर्य की महादशा में महान कष्ट, धन- धान्य का विनाश, राजक्रोध, प्रवास, राजदण्ड, धनक्षय, ज्वरपीड़ा, अपयश, स्वबन्धुओं से वैमनश्यता, पितृकष्ट, भय, गृह में अशुभ, चाचा को कष्ट, मानसिक अशान्ति और अकारण जनों से द्वेष होता है। यदि सूर्य के पूर्वोक्त नीचादि स्थानों में रहने पर भी उस शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो कभी – कभी बीच – बीच में सुख भी होता है। यदि केवल पापग्रहों की ही दृष्टि हो तो सदैव पाप फल ही कहना चाहिये।

चन्द्रफल –

एवं सूर्यफलं विप्र संक्षेपाददुदितं मया।
विंशोत्तरीमतेनाऽथ ब्रुवे चन्द्रदशाफलम् ।।
स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे चैव केन्द्रे लाभत्रिकोणगे।
शुभग्रहेण संयुक्ते पूर्णे चन्द्रे बलैर्युते ।।
कर्मभाग्यधिपैर्युक्ते वाहनेशबलैर्युते।
आद्यन्तैश्वर्य सौभाग्य धन धान्यादिलाभकृत् ।

गृहे तु शुभकार्याणि वाहनं राजदर्शनम् ।।
यत्नकार्यार्थसिद्धिः स्याद् गृहे लक्ष्मीकटाक्षकृत् ।
मित्रप्रभुवशाद् भाग्यं राज्यलाभं महत्सुखम् ।।
अश्वान्दोल्यादिलाभं च श्वेतवस्त्रादिकं लभेत् ।
पुत्रलाभादिसन्तोषं गृहगोधनसङ्कुलम् ।।
धनस्थानगते चन्दे तुङ्गे स्वक्षेत्रगेऽपि वा ।
अनेकधनलाभं च भाग्यवृद्धिर्महत्सुखम् ।।
निक्षेपराजसन्मानं विद्यालाभं च विन्दति ।

जन्मकाल में यदि चन्द्रमा अपने उच्च राशि का हो या अपने क्षेत्र में हो, केन्द्र, 11, त्रिकोण में हो और पूर्ण बली चन्द्र शुभ ग्रहों से युत हो, 4,9,10 भावों के स्वामी से युक्त हो तो उसकी महादशा में प्रारम्भ से अन्त तक धन – धान्य, सौभाग्यादि की वृद्धि, गृह में मांगलिक कार्य, वाहनसुख, राजदर्शन, यत्न से कार्य सिद्धि, घर में धनागम, मित्रों के द्वारा भाग्योदय, राज्यलाभ, सुख, वाहनप्राप्ति एवं धन और वस्त्रादि का लाभ होता है। जातक पुत्रलाभ, मानसिक शान्ति एवं घर में गौओं द्वारा सुशोभित होता है। चन्द्रमा द्वितीय भाव में अपने उच्च या स्वगृहगत हो तो अनेक प्रकार से धनलाभ, भाग्यवृद्धि, राजसम्मान तथा विद्या का लाभ होता है।

अन्य स्थिति में फल - चन्द्रमा अपने नीच का हो या क्षीण हो तो धन की हानि होती है। बलयुत चन्द्र तृतीय भाव में हो तो कभी – कभी सुख और धन की प्राप्ति होती है। निर्बल चन्द्र पापग्रह से युत होकर तृतीय में हो तो जड़ता, मानसिक रोग, नौकरों से पीड़ा, धनहानि और माता या मामा से कष्ट होता है। दुर्बल चन्द्रमा पापग्रह से युत होकर 6,8,12 स्थान में स्थित हो तो राजद्वेष, मानसिक दुःख, धन- धान्यादि का विनाश, मातृकष्ट, पश्चाताप, शरीर की जड़ता एवं मनोव्यथा होती है। बलयुत चन्द्रमा के दुःस्थान में रहने से बीच – बीच में कभी – कभी लाभ और सुख भी होता है। अशुभकारक रहने पर शान्ति करने से शुभ का निर्देश करना चाहिये।

भौम दशा फल –

स्वभोच्चादिगतस्यैवं नीचशत्रुभगस्य च ।
ब्रवीमि भूमिपुत्रस्य शुभाऽशुभदशाफलम् ।।
परमोच्चगते भौमे स्वोच्चे मूलत्रिकोणगे ।
स्वर्क्षे केन्द्रत्रिकोणे वा लाभे वा धनगेऽपि वा ।।
सम्पूर्णबलसंयुक्ते शुभदृष्टे शुभांशके ।

राज्यलाभं भूमिलाभं धनधान्यादिलाभकृत् ॥
आधिक्यं राजसम्मानं वाहनाम्बरभूषणम् ।
विदेशे स्थानलाभं च सोदराणां सुखं लभेत् ॥
केन्द्रे गते सदा भौमे दुश्चिक्ये बलसंयुते ।
पराक्रमाद्वित्तलाभो युद्धे शत्रुञ्जयो भवेत् ॥
कलत्रपुत्रविभवं राजसम्मानमेव च ।
दशादौ सुखमाप्नोति दशान्ते कष्टमादिशेत् ॥

मंगल अपने परमोच्च में हो, अपने उच्च में हो या अपने मूल त्रिकोण में हो, स्वगृह में हो या केनद्रत्रिकोण में हो, लाभ भाव में हो, धनभाव में हो, पूर्णबल युत हो, शुभ ग्रहों से अवलोकित हो, शुभ नवमांश में हो तो राज्यलाभ, भूमिप्राप्ति, धन – धान्यादि का लाभ, राजसम्मान, वाहन, वस्त्र, आभूषणादि का लाभ, प्रवास में भी स्थानलाभ और सहोदर बन्धु सौख्य होता है । यदि मंगल बलयुत होकर केन्द्र या तृतीय भाव में हो तो पराक्रम से धनलाभ, युद्ध में शत्रु की पराजय, स्त्री – पुत्रादि का सुख और राजसम्मान प्राप्त होता है , परन्तु भौम दशा के अन्त में सामान्य कष्ट भी होता है ।

अन्य स्थिति में फल - भौम अपने नीचादि दुष्ट भाव में निर्बल होकर स्थित हो या पापग्रह से युत या दृष्ट हो तो उसकी दशा में धन- धान्य का विनाश, कष्ट आदि अशुभ फल कहना चाहिये ।

बुध दशा फल –

अथ सर्वनभोगेषु यः कुमारः प्रकीर्तितः ।
तस्य तारेशपुत्रस्य कथयामि दशाफलम् ॥
स्वोच्चे स्वक्षेत्रसंयुक्ते केन्द्रलाभत्रिकोणगे ।
मित्रक्षेत्रसमायुक्ते सौम्ये दाये महत्सुखम् ॥
धनधान्यादिलाभं च सत्कीर्तिधनसम्पादाम् ।
ज्ञानाधिक्यं नृपप्रीतिं सत्कर्मगुणवर्द्धनम् ॥
पुत्रदारादि सौख्यं व्यापाराल्लभते धनम् ।
क्षीरेण भोजनं सौख्यं व्यापाराल्लभते धनम् ॥
शुभदृष्टियुते सौम्ये भाग्ये कर्माधिपे दशा ।
आधिपत्ये बलवती सम्पूर्णफलदायिका ॥

सभी ग्रहों में जिसको कुमार कहा जाता है, उस बुध की महादशा का फल इस प्रकार है – यदि बुध

अपने उच्च में हो या स्वक्षेत्र में हो या केन्द्र - त्रिकोण मित्रगृह में बैठा हो तो उसकी दशा में सुख, धन – धान्य का लाभ, सुकीर्ति, ज्ञानवृद्धि, राजा की सहानुभूति, शुभ कार्य की वृद्धि, पुत्र – स्त्रीजन्य सुख, रोगहीनता, दुग्धयुत भोजन एवं व्यापार से धनलाभ होता है। यदि बुध पर शुभ ग्रह की दृष्टि हो या शुभ ग्रह से युत हो, कर्मेश होकर भाग्य स्थान में बैठा हो और पूर्ण बली हो तो उक्त फल पूर्ण होगा, अन्यथा सामान्य फल की प्राप्ति होती है।

अन्य फल - यदि बुध पापग्रह से युत दृष्ट हो तो राजद्वेष, मानसिक रोग, अपने बन्धु – बान्धवों से वैर, विदेश – भ्रमण, दूसरे की नौकरी, कलह एवं मूत्रकच्छ्र रोग से परेशानी होती है। यदि बुध 6,8,12 वें स्थान में हो तो लाभ तथा भोग एवं धन का नाश होता है। वात, पाण्डुरोग, राजा, चोर, और अग्नि से भय, कृषि सम्बन्धी भूमि और गाय का विनाश होता है। सामान्यतया दशा के प्रारम्भ में धन – धान्य, विद्या लाभ, सुख पुत्र कलत्रादि लाभ, सन्मार्ग में धन व्यय आदि शुभ होता है। मध्य काल में राजा से आदर प्राप्त होता है, और अन्त में दुःख प्राप्त होता है।

गुरू दशा फल –

स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे जीवे केन्द्र लाभत्रिकोणगे।
मूलत्रिकोणलाभे वा तुङ्गाशे स्वांशगेऽपि वा॥
राज्यलाभं महत्सौख्यं राजसन्मानकीर्तनम्।
गजवाजिसमायुक्तं देवब्राह्मणपूजनम्॥
दारपुत्रादिसौख्यं च वाहनाम्बरलाभजम्।
यज्ञादिकर्मसिद्धिः स्याद्वेदान्तश्रवणादिकम्॥
महाराजप्रसादेनाऽभीष्टसिद्धिः सुखावहा।
आन्दोलिकादिलाभश्च कल्याणं च महत्सुखम्॥
पुत्रदारादिलाभश्च अन्नदानं महत्प्रियम्।

गुरू यदि स्वोच्च, स्वक्षेत्र, केन्द्र, त्रिकोण या लाभ, मूल त्रिकोण, अपने उच्च नवमांश या अपने नवमांश में बैठा हो तो राज्य की प्राप्ति, महासुख, राजा से सम्मान, यश- घोड़े हाथी आदि की प्राप्ति, देव – ब्राह्मण में निष्ठा, स्त्री - पुत्रादि से सुख, वाहन वस्त्रलाभ, यज्ञादि धार्मिक कार्य की सिद्धि, वेद – वेदान्तादि का श्रवण, महाराजा की कृपा से अभीष्ट की प्राप्ति, सुख, पालकी आदि की प्राप्ति, कल्याण, महासुख, पुत्र कलत्रादि का लाभ, अन्नदान आदि शुभ फल प्राप्त होता है।

अन्य फल – यदि गुरू नीच या अस्त, पापग्रहों से युत या 8,12 भावों में स्थित हो तो स्थाननाश, चिन्ता, पुत्रकष्ट, महाभय, पशु – चौपायों की हानि, तीर्थयात्रा आदि होता है। गुरू की दशा आरम्भ

में कष्टकारक, मध्य तथा अन्त में चतुष्पदों से लाभदायक, राजसम्मान, ऐश्वर्य, सुख आदि का अभ्युदय कराने वाली होती है।

शुक्रदशाफल –

परमोच्चगते शुक्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रगे।
नृपाऽभिषेक – सम्प्राप्तिर्वाहनाऽम्बरभूषणम् ।।
गजाश्वपशुलाभं च नित्यं मिष्टान्नभोजनम् ।
अखण्डमण्डलाधीश राजसन्मानवैभवम् ।।
मृदंगवाद्यघोषं च गृहे लक्ष्मीकटाक्षकृत् ।
त्रिकोणस्थे निजे तस्मिन् राज्यार्थगृहसम्पदः ।।
विवाहोत्सवकार्याणि पुत्रकल्याणवैभवम् ।
सेनाधिपत्यं कुरूते इष्टबन्धुसमागम् ।।
नष्टराज्याद्धनप्राप्तिं गृहे गोधनसङ्ग्रहम् ।।

यदि शुक्र अपने परम उच्च, उच्च स्वराशि या केन्द्र में बैठा हो तो उसकी दशा में जीवों को राज्याभिषेक की प्राप्ति, वाहन, वस्त्र, आभूषण, हाथी, घोड़े, पशु आदि का लाभ, सदा सुस्वादु भोजन, सम्पूर्ण पृथ्वी के स्वामी से सम्मान एवं स्वगृह में लक्ष्मी की अनुकम्पा से मृदंग वाद्य – वादनपूर्ण उत्सव होता है। यदि शुक्र त्रिकोण में हो तो उस शुक्र की दशा में राज्य, धन, गृह का लाभ, गृह में विवाहादि मांगलिक कार्य, पुत्र – पौत्रादि का जन्म, सेनानायक, घर में शुभ चिन्तक मित्र का समागम, गौ आदि पशुओं की वृद्धि एवं नष्ट राज्य या धन की पुन: प्राप्ति होती है।

अन्य फल – यदि शुक्र 6,8,12 वें भाव में या स्वनीच राशिस्थ हो तो उसकी दशा में स्वबन्धु – बान्धवों में वैमनश्यता, पत्नी को पीड़ा, व्यवसाय में हानि, गाय, भैंस आदि पशुओं से हानि, स्त्री – पुत्रादि या अपने बन्धु – बान्धवों का विछोह होता है।

यदि शुक्र भाग्येश या कर्मेश होकर लग्न या चतुर्थ स्थान में स्थित हो तो उसकी दशा में महत् सौख्य, देश या ग्राम का पालक, देवालय – जलाशयादि का निर्माण, पुण्य कर्मों का संग्रह, अन्नदान, सदैव सुमधुर भोजन की प्राप्ति, उत्साह, यश एवं स्त्री – पुत्र आदि से सुखानुभूति होती है।

शनि दशा फल –

स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे मन्दे मित्रक्षेत्रेऽथ वा यदि।
मूलत्रिकोणे भाग्ये वा तुंगाशे स्वांशगेऽपि वा ।।
दुश्चिक्ये लाभगे चैव राजसम्मानवैभवम् ।

सत्कीर्तिर्धनलाभश्च विद्यावादविनोदकृत् ।।
महाराजप्रसादेन गजवाहनभूषणम् ।
राजयोगं प्रकुर्वीत सेनाधीशान्महत्सुखम् ।।
लक्ष्मीकटाक्षचिह्नानि राज्यलाभं करोति च ।
गृहे कल्याणसम्पत्तिर्दारपुत्रादिलाभकृत् ।।

यदि शनि अपने उच्च, स्वक्षेत्र, मित्रक्षेत्र, मूलत्रिकोण, भाग्य, अपने उच्चांश, अपने नवमांश, तृतीय, लाभस्थान में बैठा हो तो राजसम्मान, सुन्दर यश, धनलाभ, विद्याध्ययन से स्वान्त सुख, महाराजा की कृपा से सेनानायक, हाथी, वाहन, आभूषण आदि का लाभ, परम सुख, गृह में लक्ष्मी की कृपा, राज्यलाभ, पुत्र कलत्र धनादि का लाभ, गृह में कल्याण आदि का शुभ फल प्रदान करने वाला होता है।

षष्ठाष्टमव्यये मन्दे नीचे वाऽस्तंगतेऽपि वा ।
विषशस्त्रादिपीडा च स्थानभ्रंशं महद्भयम् ।।
पितृमातृवियोगं च दारपुत्रादिपीडनम् ।
राजवैषम्यकार्याणि ह्यनिष्टं बन्धनं तथा ।।
शुभयुक्तेक्षिते मन्दे योगकारकसंयुते ।
केन्द्रत्रिकोणलाभे वा मीनगे कार्मुके शनौ ।।
राज्यलाभं महोत्साहं गजाश्वाम्बरसंकुलम् ।

यदि शनि 6,8,12 में हो, नीच या अस्तंगत हो तो विष या शस्त्र से पीड़ा, स्थान का विनांश, महाभय, माता – पिता से वियोग, पुत्र कलत्रादि को पीड़ा, राजवैमनश्यता से कार्य में अनिष्ट, बन्धन आदि प्राप्त होता है। यदि शनि शुभग्रह से युत या दृष्ट हो, योगकारक ग्रहों से सम्बन्ध रखता हो या केन्द्र - त्रिकोण लाभ में हो या मीन, धन राशिस्थ हो तो राज्यलाभ, हाथी, घोड़े, वस्त्र, महोत्सवादि का कार्य कराता है।

राहु का दशा फल –

राहोस्तु वृषभं केतुर्वृश्चिकं तुंगसंज्ञकम् ।
मूलत्रिकोणकं ज्ञेयं युग्मं चापं क्रमेण च ।।
कुम्भाली च गृहौ चोक्तौ कन्या मीनौ च केनचित् ।
तद्दाये बहुसौख्यं च धनधान्यादिसम्पदाम् ।।
मित्रप्रभुवशादिष्टं वाहनं पुत्रसम्भवः ।

नवीनगृहनिर्माणं धर्मचिन्ता महोत्सवः ।।
विदेशराजसन्मानं वस्त्रालंकारभूषणम् ।
शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे योगकारकसंयुते ।।
केन्द्रत्रिकोणलाभे वा दुश्चिक्ये शुभराशिगे ।
महाराजप्रसादेन सर्वसम्पत्सुखावहम् ।।
यवनप्रभुसन्मानं गृहे कल्याणसम्भवम् ।

राहु का उच्च राशि वृष और केतु का वृश्चिक है। राहु का मूलत्रिकोण मिथुन और केतु का धनराशि है। राहु का कुम्भ और केतु का वृश्चिक स्वगृह राशि है। अन्य मत से कन्या और मीन भी राशिगृह है। राहु या केतु अपने उच्चादि स्थानगत हैं तो उनकी महादशा में धन – धान्यादि सम्पत्ति का अभ्युदय, मित्र एवं मान्य जनों की सहानुभूति से कार्यसिद्धि, वाहन, पुत्रलाभ, नवीन गृहनिर्माण, धार्मिक चिन्ता, महोत्सव, विदेश में भी राजसम्मान, वस्त्र, अलंकार एवं आभूषण की प्राप्ति होती है। राहु केतु योगकारक ग्रहों के साथ हों या शुभग्रह से युत दृष्ट होकर केन्द्र, त्रिकोण, लाभ तृतीय भाव में शुभ राशिगत हों तो राजा – महाराजा की कृपा से सभी सम्पत्तियों का आगमन और विदेशीय यवनराज से भी धनागम तथा अपने घर में कल्याण होता है।

यदि राहु 8,12 भाव में हो तो उसकी दशा कष्टकारक होती है, यदि पापग्रह से सम्बन्ध रखता हो या मारकेश से युत हो या अपने नीच राशिगत हो तो स्थानभ्रष्ट, मानसिक रोग, पुत्र – स्त्री, का विनाश एवं कुभोजन की प्राप्ति होती है। दशा – प्रारम्भ में शारीरिक कष्ट, धन – धान्य का विनाश, दशा के मध्य में सामान्य सुख और अपने देश में धनलाभ तथा दशा के अन्त में स्थानभ्रष्ट, मानसिक व्यथा एवं कष्ट की प्राप्ति होती है।

केतु दशाफल –

केन्द्रे लाभे त्रिकोणे वा शुभराशौ शुभेक्षिते ।
स्वोच्चे वा शुभवर्गे वा राजप्रीतिं मनोनुगम् ।।
देशग्रामाधिपत्यं च वाहनं पुत्रसम्भवम् ।
देशान्तरप्रयाणं च निर्दिशेत् तत्सुखावहम् ।।
पुत्रदारसुखं चैव चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ।
दुश्चिक्ये षष्ठलाभे वा केतुर्दाये सुखं दिशेत् ।।
राज्यं करोति मित्रांशं गजवाजिसमन्वितम् ।
दशादौ राजयोगाश्च दशामध्ये महद्भयम् ।।

अन्ते दूराटनं चैव देहविश्रमणं तथा।
धने रन्ध्रे व्यये केतो पापदृष्टियुतेक्षिते ।।
निगडं बन्धुनाशं च स्थानभ्रंशं मनोरूजम्।
शूद्रसंगादिलाभं च कुरूते रोगसंकुलम् ।।

यदि केतु केन्द्र, लाभ, त्रिकोण या शुभ राशिगत हो और शुभ ग्रह से दृष्ट हो, अपने उच्च, शुभ वर्ग में स्थित हो तो राजा से प्रेम, मनोनुकूल वातावरण, देश या ग्राम का अधिकारी, वाहनसुख, सन्तानोत्पत्ति, विदेशभ्रमण, सुखकारक, स्त्री – पुत्र सुख एवं पशुओं से लाभ होता है। यदि केतु 3,6,11 भाव में स्थित हो तो उसकी दशा में सुख, राज्यलाभ, मित्रों का सहयोग एवं हाथी, घोड़े आदि सवारी का लाभ होता है। केतु की दशा के आरम्भ में राजयोग, मध्य में भय एवं अन्त में दूरगमन और शारीरिक कष्ट होता है। 2,8,12 वें भाव में केतु स्थित हो तो जातक पराश्रित, बन्धुनाश, स्थानविनाश, मानसिक रोग, अधम व्यक्ति का संग और रोगयुत होता है।

दशा राशि फल –

मेष राशि में सूर्य का फल - कौटुम्बिक धनलाभ, गृह – सौख्य, स्त्रीपुत्रादि सुख, स्वधर्म के प्रति अभिमान व श्रद्धा, उच्च विचार, तीव्र बुद्धि, महत्वाकांक्षी।

वृष राशि में सूर्य का फल – स्त्री व सन्तति को पीड़ा, मकान की चिन्ता, हृदयरोग, द्रव्यनाश, विचित्र मानसिक स्थिति।

मिथुन राशि में सूर्य का फल – प्राचीन ग्रन्थों का आदर, बुद्धिमान, द्रव्यवान, होशियार, विद्या अभिमानी, वाचन – पठन – प्रिय, कवि।

कर्क राशि में सूर्य का फल - स्वजनों से कटुता, स्त्रीलोलुप, निष्कपटी परन्तु शीघ्र क्रोध करने वाला, राजाधिकारी व श्रेष्ठ कामगारों से मित्रता, अधिकार की इच्छा।

सिंह राशि में सूर्य का फल – पराक्रमी, धाड़सी, राजसम्मान, द्रव्यरोग, सभी पर प्रभुत्व करने वाला
।

कन्या राशि में सूर्य का फल – देव ब्राह्मण भक्त, वाहनसुख, भूमिलाभ, मधुरभाषी, स्त्रियों को प्रिय
।

तुला राशि में सूर्य का फल – चोर व अग्नि से भय, नुकसान, स्त्रीसम्बन्धी कष्ट, स्त्री व स्थावर स्टेट सम्पत्ति की बुरी स्थिति।

वृश्चिक राशि में सूर्य का फल – विषधारी जानवर या विष से भय, अग्नि व शस्त्रभय, माता – पिता व आप्त वर्ग से अपमान।

धनु राशि में सूर्य का फल – द्रव्यलाभ, ऐश्वर्य – उत्कर्ष, स्त्रीपुत्र सुख, गायन वादन प्रिय, राजसम्मान, स्वजातिका नेता, प्रापंचिक सुख।

मकर राशि में सूर्य का फल – दु:ख, अल्प सुख, प्रापंचिक निराशाजनक स्थिति, परावलम्बी।

कुम्भ राशि में सूर्य का फल – सम्पत्ति, सन्तति, स्त्रीसम्बन्धी चिन्ता, मानसिक दु:ख, हृदयरोग।

मीन राशि में सूर्य का फल – पित्तज्वर, रक्तदोष बाधा, द्रव्य दृष्टि प्रतिकूल, शरीर कष्ट।

चन्द्र दशा राशि फल –

मेष राशि में चन्द्रमा का फल – ईश्वरभक्ति देवब्राह्मण के प्रति पूज्य बुद्धि, प्रवास, चंचल मन, उदार, दयालु, दिखाने वाले काम का तिरस्कार करने वाला।

वृष राशि में चन्द्रमा का फल – सम्पत्ति व संततिसुख, भाग्योदय, राजसम्मान, ऐश्वर्य व स्त्रीसुख, कुटुम्ब व वाहन सुख, श्रीमान व धर्मवान।

मिथुन राशि में चन्द्रमा का फल – माता – पिता का भक्त, धार्मिक वृत्ति, सुख, प्रवास प्रियता।

कर्क राशि में चन्द्रमा का फल – मकान, वाहन, जमीन प्राप्ति, नये कार्य का आरम्भ, धार्मिक व कीर्तिदायक कार्य परोपकारी, गुप्त विकारी।

सिंह राशि में चन्द्रमा का फल - राजकीय उन्नति, मानमान्यता, अधिकारप्राप्ति, द्रव्यप्राप्ति, शरीर – यातना व अस्वस्थता।

कन्या राशि में चन्द्रमा का फल - स्त्री प्राप्ति व सुख, परदेश गमन, द्रव्य लाभ, अविचारणीय बातें, पापबुद्धि।

तुला राशि में चन्द्रमा का फल – दुष्ट लोगों की संगति, द्रव्य की कमतरता व अड़चन, स्त्री सम्बन्धी विचार, वादविवाद, दारिद्रय, उत्साहभंग, विक्षिप्त आचरण।

वृश्चिक राशि में चन्द्रमा का फल – उद्योग में अपयश, पराधीनता, स्वजन से शत्रुत्व, द्रव्यहानि, राजकीय दुष्कार्य, उद्योग में हानि, व्याधि उपद्रव।

धनु राशि में चन्द्रमा का फल – पूर्वार्जित स्टेट में नुकसान व नाश, मानसिक व राजकीय स्थिति असमान कारक, पराक्रम से भाग्योदय।

मकर राशि में चन्द्रमा का फल – प्रवास, द्रव्यलाभ, सन्तति सुख, अस्थिरता, गुप्त चिन्ता।

कुम्भ राशि में चन्द्रमा का फल – ऋणग्रस्त स्थिति, द्रव्यहानि, क्लेश पापकर्म, बुरे लोगों से संगत, नाना प्रकार के व्यसन।

मीन राशि में चन्द्रमा का फल – सत्कर्म में द्रव्य, अधिक खर्च, जलोत्पन्न पदार्थों की रूचि व प्राप्ति, स्त्री पुत्र - सुख, शत्रुनाश।

मंगल दशा राशि फल –

मेष राशि में मंगल का फल - शौर्य कार्य, युद्ध में विजय, राज्यप्राप्ति, अधिकारयोग, राजा से मान सम्मान, वस्त्र व आभूषण प्राप्ति, आचार कार्य किन्तु शरीर कष्ट।

वृष राशि में मंगल का फल – देव ब्राह्मण के प्रति आदर, सम्कर्म की ओर द्रव्य का व्य, स्त्री को कष्ट।

मिथुन राशि में मंगल का फल – स्थानान्तर प्रवास, पिता से विरोध, अधिकारी वर्ग पर छाप, स्वजन विरोध, वाचाल , धूर्त, अनेक कला कौशल में निपुण, खर्चिला प्रवृत्ति।

कर्क राशि में मंगल का फल – मकान, वाहन, नौकर चाकर, भूमि की प्राप्ति व सुख, मानसिक दुर्बलता, क्लेश, चिन्ता, स्त्री पुत्र व आप्त वर्ग से वियोग।

सिंह राशि में मंगल का फल – अनेक लोगों पर अधिकार रखने वाला, श्रेष्ठ नेता, निश्चयी, साहसी, सत्याग्रही, संकट में धैर्य रखने वाला, राजकार्य में प्रमुख, श्रीमान, भाग्यवान स्त्री पुरूष से वियोग, अग्निपीड़ा।

कन्या राशि में मंगल का फल – सदाचार व सत्कर्मी, धन – धान्यादि – समृद्ध, स्त्री – अभिलाषी, प्रापंचिक सुख, धनलाभ में देर।

तुला राशि में मंगल का फल - व्यापार व स्त्री पक्ष से लाभ।

वृश्चिक राशि में मंगल का फल – खेती से धनलाभ व यश, अनेकों का शत्रु, स्वतन्त्र रूप से कार्य न करने वाला।

धनु राशि में मंगल का फल - वाद विवाद से दूर रहने वाला, धर्म की ओर चित्त का लक्ष्य।

मकर राशि में मंगल का फल – रण व युद्ध में यश, वाद विवाद में यशप्राप्ति, अधिकार प्राप्ति, ऐश्वर्य सम्पन्न स्थिति, साम्पत्तिक स्थिति श्रेष्ठ, राज्याधिकारी, कीर्तिमान, नेता वा सामाजिक कार्यकर्ता।

कुम्भ राशि में मंगल का फल - धर्म भ्रष्ट, सन्तति से कष्ट, अनाचारी, अत्यधिक खर्चीला।

मीन राशि में मंगल का फल – मस्तक, ऑख, कान को उष्ण विचार से त्रास, सभी ओर से हानि, पुत्र चिन्ता, ऋण, परदेश वास।

गुरू दशा राशि फल –

मेष राशि में गुरू का फल – स्त्री पुत्र लाभ, समाज में मान्यता, सुख समाधान, वैभवप्राप्ति, भाग्यदायक व उत्कर्ष के लिये अनुकूल, समाज का नेता।

वृष राशि में गुरू का फल – द्रव्यलाभ व संचय, साहस व जोखम भरा काम, शत्रुपीड़ा, शारीरिक

व कौटुम्बिक त्रास, मानसिक अस्वस्थता।

मिथुन राशि में गुरू का फल – बुद्धि व पराक्रमा से सुख, धार्मिक पवित्र कार्य, स्त्री से या स्त्री से सम्बन्ध रखने वाली बातों से त्रास।

कर्क राशि में गुरू का फल – राज्यप्राप्ति, अधिकार व राजदरबार में श्रेष्ठ मान, मन्त्री पद प्राप्ति, वैभव व ऐश्वर्यप्राप्ति।

सिंह राशि में गुरू का फल – धनलाभ, कीर्ति, श्रेष्ठ बुद्धि, विद्या में प्रगति, संतति सुख, राज सम्मान, श्रीमान व पराक्रमी।

कन्या राशि में गुरू का फल – उद्योग धन्धा में यश, श्रीमान लोगों से मित्रता व लाभ, अधिकार लाभ, स्त्री पुत्र कौटुम्बिक सुख, हीन जाति के लोगों से विरोध, अपमान व धन का व्यय।

तुला राशि में गुरू का फल – चंचल वृत्ति, विपरीत बुद्धि, स्वजाति लोगों से वैर, उद्योग में अपयश, असन्तोष, स्त्री पुत्रादि से त्रास।

वृश्चिक राशि में गुरू का फल – विद्या व बुद्धि के काम में यश, कलाकार, जमीन – गृह का स्वामी, स्थावर स्टेट के माल की प्राप्ति।

धनु राशि में गुरू का फल – ईश्वरनिष्ठा, परोपकार के कार्य, यज्ञ, धार्मिक कर्म के आचरण, वेदान्त शास्त्र में रूचि।

मकर राशि में गुरू का फल – स्वजनवियोग, विरोध व शत्रुत्व, परदेश वास, गुह्य रोग, द्रव्य चिन्ता, दरिद्रयोग, स्त्री – पुत्र को कष्ट, उदर पीड़ा, संकट काल।

कुम्भ राशि में गुरू का फल – भाग्योदय आरम्भ, राजकार्य में निमग्न व प्रतिष्ठा, द्रव्यलाभ, विद्या में यश, मान सम्मान, तीव्रबुद्धि, कलाकौशल में प्रवीण, स्त्री पुत्रादि सुख।

मीन राशि में गुरू का फल - प्रापंचिक औद्योगिक उन्नति, राजदरबार में यशप्राप्ति अधिकार सम्पन्न, ऐश्वर्य भोगने वाला, स्वच्छन्द, सभी प्रकार के सुख।

शनि दशा राशि फल –

मेष राशि में शनि का फल - कृश शरीर, मस्तक को त्रास, खाज, रक्त दोष, रोग वृद्धि, अपचन विकार, दु:खदायक प्रसंग।

वृष में शनि का फल – तीव्र बुद्धि, साहसी व पराक्रमी, कार्य में यश, युद्ध व विवाद में जय, सम्पत्ति का लाभ, स्त्रियों से मैत्री।

मिथुन में शनि का फल - स्त्रियों से द्रव्य लाभ, स्त्रीसुख उत्तम, ऐश आराम में दंग, अनीतिमान लोगों से मैत्री, स्वबुद्धि के दम पर लोगों में अपनी पहचान स्थापित।

कर्क में शनि का फल – शारीरिक दुर्बलता, अस्वस्थता, संकट, नेत्रपीड़ा, स्वार्थी साधु, सबसे मित्रता, अस्थिरता, स्त्री-पुत्रादि सुख।

सिंह में शनि का फल - स्त्री पुत्र से कलह, वाद – विवाद, विरोध, वियोग, अपयश, मानसिक पीड़ा, अनेक प्रकार से त्रास।

कन्या में शनि का फल – उद्योग धन्धा व व्यापार के लिये उत्तम धनलाभ, संपत्ति सुस्थिर, लोगों से मित्रता, प्रापंचिक सुख।

तुला राशि में शनि का फल – राजसम्मान, अश्व, सुवर्ण, रत्न - प्राप्ति, स्थावर जमीन, भूमि, नौकर, वाहन आदि का सुख।

वृश्चिक राशि में शनि का फल – देशान्तर प्रवास, महत्व के कार्य में यश, महत्वाकांक्षा के अनुसार कार्य में यश प्राप्ति तथापि नीच हीन लोगों की संगति व मित्रता।

धनु राशि में शनि का फल – प्रतिपक्षी को हराने वाला, युद्ध व वाद विवाद में यश, धैर्यवान शत्रु का पराजय, अनुकूल प्रसंग व उन्नति का काल, अत्यधिक व्यय करने वाला।

मकर राशि में शनि का फल - अत्यधिक कष्ट व अल्प लाभ, विश्वासघात से द्रव्यनाश, स्त्रियों से प्रीति, विषय सुख में रममाण, द्रव्य की कमतरता, नुकसान एवं आपत्ति।

कुम्भ राशि में शनि का फल - मान प्रतिष्ठा व श्रेष्ठ अधिकार की प्राप्ति, प्रापंचिक सुख, मित्र प्रेम, विद्या में यश द्रव्यप्राप्ति साधन उत्तम।

मीन राशि में शनि का फल – अनेक गॉवों का मालिक व अधिकारी, बुद्धि के बल से सभी प्रकार की सुखों को प्राप्त करने वाला।

बुध दशा राशि फल –

मेष राशि में बुध का फल - दुष्ट जनों की संगत, अशुभ स्थान पर वास, व्यसनी लोगों से मित्रता, चोरी का आक्षेप, दरिद्र, संकट एवं चिन्ता।

वृष राशि में बुध का फल - निष्कारण खर्च, ज्येष्ठ लोगों से त्रास, दु:ख, सन्ताप, अर्थनाश, उद्योग में हानि, स्त्री – पुत्रादि की चिन्ता।

मिथुन राशि में बुध का फल – माता को कष्ट, विरोध, स्त्री – पुत्रादि से सुख, कार्य में यश, विद्या में यश, लेखक व वक्तृत्व शक्ति के प्रभाव से सुख।

कर्क राशि में बुध का फल – परदेश, हीन स्थल पर निवास, दु:ख, चिन्ता, काव्यकला व लेखन से द्रव्य लाभ, लोगों से मित्रता।

सिंह राशि में बुध का फल – स्त्री - पुत्र से कष्ट, विपरीत बुद्धि, कार्य में बाधा, धैर्य, वैभव,

मानसिक स्वस्थता में कमी।

कन्या राशि में बुध का फल – सभी प्रकार के सुख भोगने वाला, भाग्यवान, वैभवशाली, विद्वान, गुणी, सदाचारी, नीतिमान, लेखक, कार्यकर्ता, शास्त्र में निपुण, शत्रु का पराजय, ईश्वर भक्त, द्रव्यवान, उन्नति का काल।

तुला राशि में बुध का फल – अस्वस्थ शरीर, बुखार, क्षीणता, स्त्री – सुख, कारीगरी का काम करने वाला, व्यापार में धन – नाश।

वृश्चिक राशि में बुध का फल - स्वजन से विरोध, कलह, अन्य स्थल पर वास, आपत्ति, यातना, शरीर कष्ट, द्रव्य नाश, प्रापंचिक पराधीनता।

धनु राशि में बुध का फल - द्रव्य की कमी, किसी भी काम में प्रथम बाधा व विरोध, स्वजन से कलह, आपत्ति अनिश्चित समय, विरोध, त्रास।

मकर राशि में बुध का फल – नीच व दुष्ट जनों से मैत्री, उच्च लोगों से मिलाप, झूठा भाषण, अधिक खर्च, असत्कृत्य में व्यय, कार्यनाश।

कुम्भ राशि में बुध का फल – द्रव्यहानि, मित्रों से हानि, कार्य में अस्थिरता, प्रापंचिक व औद्योगिक काम में पराधीनता।

मीन राशि में बुध का फल – शरीर त्रास, बीमारी, दु:ख, साधारण धन – लाभ, चंचल चित्त, कुबुद्धि।

शुक्र दशा राशि फल -

मेष राशि में शुक्र का फल – उद्योग धन्धे में यश, समाधान, प्रवास, स्थानान्तर, चंचलता, स्त्री सुख सन्तोष, अनेक सुखों की प्राप्ति।

वृष राशि में शुक्र का फल – भूमि – भवन का सुख, पशु – वाहन सुख, दयालु, परोपकारी, कन्या संतति, धर्माचरणी।

मिथुन राशि में शुक्र का फल -

विद्वान लोगों से मित्रता, ग्रन्थकर्ता, उत्साही, प्रतिष्ठा, कला कौशल की रूचि व उससे लाभ।

कर्क राशि में शुक्र का फल –

अनेक प्रकार के उद्योग करने वाला, कार्यकुशल, व्यवसाय में पूर्ण अनुभव, उद्योगी, स्वावलम्बी।

सिंह राशि में शुक्र का फल –

साहसी काम में यश, स्त्रियों से द्रव्य लाभ, पुत्रादि संतति का अल्प सुख, वाहन से पीड़ा।

कन्या राशि में शुक्र का फल –

अनेक प्रकार के कष्ट, अल्प द्रव्य लाभ, उद्योग में अपयश, गुप्त रोग, स्त्री चिन्ता, शारीरिक क्लेश।

तुला राशि में शुक्र का फल –

खेती की ओर अधिक ध्यान व लाभ, व्यापार से द्रव्यलाभ संपत्तिवान, स्त्री – पुत्रादि सुख प्राप्त करने वाला, व्यवसय में श्रेष्ठत्व, शत्रुनाश, लोगों को नेता।

वृश्चिक राशि में शुक्र का फल –

प्रवासी, वाद – विवाद में निपुण, कलह, परकार्य में रत, अविचारी, ऋण मुक्त, साहसी, कार्य में निपुण, निर्भय।

धनु राशि में शुक्र का फल –

राज सन्मान, अधिकार वृद्धि में बाधा, भाग्यचिन्ता, दशा के मध्य भाग में सब प्रकार के सुख व संपत्ति में वृद्धि।

मकर राशि में शुक्र का फल –

स्त्री को बुखार, संतति के विषय में व्यग्रता, कफरोग, कौटुम्बिक चिन्ता, शत्रु का पराभव, सत्ता व अधिकार प्राप्ति, अन्य देश में वास, प्रवास, वाहन से त्रास।

कुम्भ राशि में शुक्र का फल –

प्रगल्भ बुद्धि, कला – कौशल में प्रवीण, संतति सुख, द्रव्यलाभ, उत्तम विद्या में यश, उद्योग धन्धा व व्यवसाय में उत्कर्ष व धनलाभ।

मीन राशि में शुक्र का फल –

राजसन्मान, वैभव व सुख ऐश्वर्य प्राप्ति, उच्चाधिकार, राजमण्डल का मुख्य प्रधान, मंत्रिपद, श्रीमान, प्रापंचिक, वाहन व नौकर सुख, सन्तोष करने वाला।

ये सभी फलादेश कई वर्षो के अनुसन्धान के पश्चात् आचार्यो द्वारा प्रतिपादित किये गये है। फलादेश करते समय दिक्, देश एवं काल का ज्ञान रखते हुये प्रचलित दशाओं में स्वमति का भी उपयोग करना चाहिये।

2.5 सारांशः-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि मानसागरी में प्रतिपादित हैं कि शुक्लपक्ष में जन्म लेने वालों के लिए अष्टोत्तरी दशा तथा कृष्ण पक्ष में उत्पन्न व्यक्तियों के लिए विंशोत्तरी दशा का ग्रहण करना चाहिये। दूसरी बात यह है कि शुक्ल पक्ष में रात्रि में जन्म हो तथा कृष्ण पक्ष में दिन में जन्म हो तो विंशोत्तरी तथा शुक्ल पक्ष के दिन में व कृष्ण पक्ष की रात्रि में जन्म हो तो अष्टोत्तरी दशा का ग्रहण करना चाहिये।

कुछ लोगों ने मानसागरी के मत के साथ एक शर्त और जोड़ दी है। शुक्ल पक्ष में या दिन में या सूर्य की होरा में जन्म हो तो विंशोत्तरी तथा कृष्ण पक्ष में या रात्रि में या चन्द्रमा की होरा में जन्म हो तो अष्टोत्तरी दशा ग्रहण करना चाहिये। ग्रहफल और मारकादि विचार में विंशोत्तरी दशा सर्वत्र उपयोगी व प्रामाणिक है। अष्टोत्तरी दशा में केवल आठ ही ग्रहों की दशा होती है। केतु का इसमें ग्रहण नहीं है। दशाओं का क्रम व दशा वर्ष भी विंशोत्तरी से बहुत भिन्न है।

2.6 पारिभाषिक शब्दावली

दशा – दशा का अर्थ है स्थिति । किस समय जातक की क्या स्थिति है, सम्बन्धित ज्ञान जिस माध्यम से किया जाता है, उसे दशा कहते है।

विंशोत्तरी महादशा – 120 वर्षों की दशा

अष्टोत्तरी महादशा - 108 वर्षों की दशा

2.7 बोधप्रश्नों के उत्तर

1. ख
2. घ
3. घ
4. ख
5. ख

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वृहत्पराशरहोराशास्त्र – आचार्य पराशर

जातकपारिजात – आचार्य वैद्यनाथ

वृहज्जातक – वराहमिहिर।

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. अष्टोत्तरी महादशा का साधन की विधि बतलाते हुए विस्तार से उसका उल्लेख कीजिये।
2. अष्टोत्तरी महादशा के सूर्यादि ग्रहों में होने वाली शुभाशुभ फल का विवेचन कीजिये।

इकाई – 3 योगिनी दशा फल

इकाई संरचना

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 योगिनी दशा परिचय

योगिनी दशा स्वरूप

3.4 योगिनी दशा फल

बोध प्रश्न

3.5 सारांशः

3.6 पारिभाषिक शब्दावली

3.7 बोधप्रश्नों के उत्तर

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई दशाफल विचार के तृतीय इकाई **'योगिनी दशाफल'** शीर्षक से संबंधित है। दशा – अन्तर्दशाओं में योगिनी दशा एक महत्वपूर्ण इकाई है। योगिनी दशा कुल 36 वर्षों का होता है। योगिनी दशा में मंगला से लेकर संकटा तक आठ प्रकार के योगों का उल्लेख है। जिसका विस्तृत अध्ययन आप इस इकाई में करेंगे।

इससे पूर्व की इकाईयों में आपने विंशोत्तरी दशा फल तथा अष्टोत्तरी दशा फल का विस्तृत अध्ययन कर लिया हैं। यहॉ हम इस इकाई में योगिनी दशा साधन एवं उसके फलादेश सम्बन्धित विषयों का अध्ययन विस्तार पूर्वक करेंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

1. योगिनी दशा को परिभाषित करने में समर्थ हो सकेंगे।
2. योगिनी दशा के महत्त्व को समझा सकेंगे।
3. योगिनी दशा का निरूपण करने में समर्थ होंगे।
4. योगिनी दशा का स्वरूप वर्णन करने में समर्थ होंगे।
5. योगिनी दशा से फलादेशादि को निरूपित करने में समर्थ होंगे।

3.3 योगिनी दशा परिचय, परिभाषा

ज्योतिष शास्त्र में दशा ज्ञान के अन्तर्गत योगिनी दशा का नाम आता है। वस्तुत: योगिनी दशा कहीं – कहीं ही प्रचलित है। योगिनी दशा के प्रणेता भगवान शंकर है। इसके आठ प्रकार है। यथा -

मंगला पिंगला धान्या भ्रामरी भद्रिका तथा।
उल्का सिद्धा संकटा च योगिन्योऽष्टौ प्रकीर्तिता: ।।
मंगलातोऽभवच्चन्द्र: पिंगलातो दिवाकर: ।
धन्यातो देवपूज्योऽभूद् भ्रामरीतोऽभवत् कुज: ।।
भद्रिकातो बुधो जातस्तथोल्कात: शनैश्चर: ।
सिद्धातो भार्गवी जात: संकटातस्तमोऽभवत् ।।
जन्मर्क्षं च त्रिभिर्युक्तं वसुभिर्भागमाहरेत् ।
एकादिशेषे विज्ञेया योगिन्यो मंगलादिका ।।

एकाद्येकोत्तरा ज्ञेया: क्रमादासां दशासमा: ।

नक्षत्रयातभोगाभ्यां भुक्तं भोग्यं च साधयेत् ॥

योगिनी दशाओं के बारे में ऐसा कहा जाता है कि स्वयं देवाधिदेव महादेव ने इस दशा को कहा था । **मंगला, पिंगला, धान्या, भ्रामरी, भद्रिका, उल्का, सिद्धा, संकटा** – ये **आठ योगिनी** दशा होती है । मंगला से चन्द्रमा, पिंगला से सूर्य, धान्या से गुरू, भ्रामरी से मंगल, भद्रिका से बुध, उल्का से शनि, सिद्धा से शुक्र और संकटा से राहु की उत्पत्ति है । जन्मनक्षत्र संख्या में 3 जोड़कर 8 का भाग देने पर एकादि शेष से मंगलादि योगिनी दशायें होती है । मंगलादि योगिनी दशावर्ष एकादि वर्ष जानना चाहिये अर्थात् 1,2,3,4,5,6,7,8 क्रम से वर्ष जानना चाहिये । जन्मकालिक भयात् भभोग के द्वारा दशा के भुक्त, भोग्य वर्षादि का साधन करना चाहिये ।

उदाहरण –

माना कि किसी जातक का जन्म हस्त नक्षत्र के प्रथम चरण में हुआ हैं, अत: जन्मनक्षत्र से 13 + 3 = 16 । इसमें आठ का भाग दिया तो शेष 0 बचा अर्थात् 8 हुआ, अत: आठवीं संकटा की दशा में जन्म हुआ, संकटा के वर्षमान 8 है । हस्त नक्षत्र भयात 16।5 भभोग 65।20 प्रथम चरण में जन्म है । पलात्मक भयात 965 को आठ से गुणनकर पलात्मक भभोग 3920 से भाग दिया, लब्ध भुक्त वर्षादि 1।11।19 को 8 में घटानें पर 6।0।11 भोग्य वर्षादि सिद्ध हुये ।

योगिनी दशा चक्र

दशेश	**संकटा**	**मंगला**	**पिंगला**	**धान्या**	**भ्रामरी**	**भद्रिका**	**उल्का**	**सिद्धा**
वर्ष 6	6	1	2	3	4	5	6	7
0	0	0						
11	11							
संवत् 2054	2060	2061	2063	2066	2070	2075	2081	2088
सूर्य 0	0	0	0	0	0	0	0	0
6	17	17	17	17	17	17	17	17

अपि च –

योगिनी दशा विचार –

मंगला पिंगला धान्या भ्रामरी भद्रिका तथा ।

उल्का सिद्धा संकटा च एतासां नामवत्फलम् ॥

एकं द्वौ गुणवेदबाणरससप्ताष्टांकसंख्या: क्रमात् ।

स्वीयस्वीयदशा विपाकसमये ज्ञेयं शुभं वाऽशुभम् ।।

षट्विंशैर्विभजेद्दिनीकृतमथैकद्वित्रिवेदेषुषट् ।

सप्ताष्टघ्नदशा भवेयुरिति ता एवं दशान्तर्दशा: ।।

चन्द्र: सूर्यो वाक्पतिर्भूमिपुत्रश्चान्द्रिर्मन्दो भार्गव: सैहिकेय: ।

एते नाथा मंगलादिप्रदिष्टा: सौम्या: सौम्यानामनिष्टा: खलानाम् ।।

अत्रप्रकारान्तरेण योगिनीनां स्वामिना: -

पिंगलातो भवेत्सूर्यो मंगलातो निशाकर: ।

भ्रामरीतो भवेत्क्ष्माजो धान्यतोऽभूद्विधो: सुत: ।।

भद्रिकातो गुरूरभूतिसद्धात: कविसम्भव: ।

उल्कातो भानुतनय: संकटास्त्वभूत्तम: ।।

अस्या एव दशान्ते च केतुरेवं विधीयते ।

य: खेटोऽस्तगृहं तथारिभवनं नीचं प्रयातो यथा ।।

वर्षेशाद्रिपुगो हि तस्य गदिता सर्वा दशा मध्यमा ।

यश्च्चोस्थलमाश्रित: स्वभवने मूलत्रिकोणे खगो ।।

मित्रागारमुपागतो निगदिता तस्याऽखिला सौख्यदा ।

उपर्युक्त श्लोक में मंगलादि आठ योगिनीयों के नाम है, तथा प्रकारान्तर से उनके स्वामियों का नाम भी उल्लेखित किया गया है। योगिनी दशा का न्यूनाधिक रूप से सारे भारतवर्ष में विशेषकर पर्वतीय क्षेत्रों में तो बहुत प्रचार है । इन दशाओं का प्रणेता भगवान शिव को माना जाता है । वृहत्पराशरहोराशास्त्र में आचार्य पराशर के द्वारा प्रतिपादित है कि मंगला से चन्द्रमा, पिंगला से सूर्य, धान्या से गुरू, भ्रामरी से मंगल, भद्रिका से बुध, उल्का से शनि, सिद्धा से शुक्र और संकटा से राहु की उत्पत्ति है, इसका आशय है कि इन योगिनियों के ये ग्रह प्रभावक माने जाते है। जब मंगला की दशा हो तो चन्द्र की दशा समझकर जन्म लग्न में चन्द्रमा की स्थिति के अनुसार दशा को उत्तम, या अधम कल्याणकारी मानना चाहिये। इसी प्रकार अन्य योगिनियों के विषय में भी समझना चाहिये। जन्म नक्षत्र में 3 जोड़कर 8 का भाग देने से शेष के अनुसार मंगला से योगिनी दशा होती है। भ्रामरी दशा के नीचे से प्रारम्भ कर अश्विनी आदि नक्षत्रों को क्रमश: लिखने से योगिनी दशा चक्र होता है। इसमें अभिजित् का ग्रहण नहीं है। इनके 1,2,3,4,5,6,7,8 क्रमश: दशा वर्ष होते है।

योगिनी दशा बोध चक्र -

	मंगला	पिंगला	धान्या	भ्रामरी	भद्रिका	उल्का	सिद्धा	संकटा
स्वामी	चन्द्रमा	सूर्य	गुरू	मंगल	बुध	शनि	शुक्र	राहु
वर्ष	1	2	3	4	5	6	7	8
नक्षत्र				अश्विनी	भरणी	कृत्तिका	रोहिणी	मृगशिरा
	आर्द्रा	पुनर्वसु	पुष्य	आश्लेषा	मघा	पू0फा0	उ0फा0	हस्त
	चित्रा	स्वाती	विशाखा	अनुराधा	ज्येष्ठा	मूल	पू0षा0	उ0षा0
	श्रवण	धनिष्ठा	शतभिषा	पू0भा0	उ0भा0	रेवती		

योगिनी दशा के विषय में माना जाता है कि अल्पायु लोगों के जीवन में इसकी एक आवृत्ति, मध्यायु लोगों को दो आवृत्ति तथा दीर्घायु लोगों को तीन आवृत्ति होती है। इसकी एक आवृत्ति 36 वर्षों की होती है।

दशा का भुक्त भोग्य काल ज्ञान पूर्व में प्रतिपादित किया गया है। एक और उदाहरण के लिये यहाँ समझाया जा रहा है –

जन्म नक्षत्र रेवती से आर्द्रादि क्रमानुसार राहु की दशा वर्तमान है। सजातीय भयात 1250 व भभोग 3905 पल है।

भयात 1250 व भभो्र 3905 पल है। भयात 1250 × दशावर्ष 12 = 15000/ पलात्मक भभोग 3905 = 3 वर्ष 10 मास 2 दिन भुक्त है। इसे 12 वर्षों में से घटाया तो 8.01.28 वर्षादि राहु का अष्टोत्तरी दशा भोग्य है।

चन्द्रस्पष्ट 11.20^{0} .55 तथा रेवती का अंशात्मक भोग्य 9^{0} .05 अर्थात् 545 कला भोग्य है। इसे दशा वर्ष 12 से गुणाकर 800 कला का पूर्ववत् भाग देने से 545 × 12 = 6540 ÷ 800 = भोग्य दशा 8.02;03 वर्षादि है। यह दिनों का अन्तर क्यों पड़ा, इस विषय में उपपत्ति विशोंतरी महादशा के दौरान लिखा जा चुका है। पाठक गण वहाँ ध्यान दें। इसी पद्धति से योगिनी दशा का भुक्त भोग्य भी जाना जा सकता है।

योगिनी के महादशा व अन्तर्दशा का कोष्ठक –

मंगला दशा एक वर्ष – अन्तर्दशा

योगिनी	मंगला	पिंगला	धान्या	भ्रामरी	भद्रिका	उल्का	सिद्धा	संकटा
वर्ष	0	0	0	0	0	0	0	0
मास	0	0	1	1	1	2	2	2
दिन	10	20	0	10	20	0	10	20

पिंगला दशा दो वर्ष – अन्तर्दशा

योगिनी	पिंगला	धान्या	भ्रामरी	भद्रिका	उल्का	सिद्धा	संकटा	मंगला
वर्ष	0	0	0	0	0	0	0	0
मास	1	2	2	3	4	4	5	0
दिन	10	2	20	10	1	20	10	20

धान्या दशा तीन वर्ष – अन्तर्दशा

योगिनी	धान्या	भ्रामरी	भद्रिका	उल्का	सिद्धा	संकटा	मंगला	पिंगला
वर्ष	0	0	0	0	0	0	0	0
मास	3	4	5	6	7	8	1	2
दिन	0	0	0	0	0	0	0	0

भ्रामरी दशा चार वर्ष – अन्तर्दशा

योगिनी	भ्रामरी	भद्रिका	उल्का	सिद्धा	संकटा	मंगला	पिंगला	धान्या
वर्ष	0	0	0	0	0	0	0	0
मास	5	6	8	9	10	1	2	4
दिन	10	20	0	10	20	10	20	0

भद्रिका दशा पॉच वर्ष – अन्तर्दशा

योगिनी	भद्रिका	उल्का	सिद्धा	संकटा	मंगला	पिंगला	धान्या	भ्रामरी
वर्ष	0	0	0	1	0	0	0	0
मास	8	10	11	1	1	3	5	6
दिन	10	0	20	10	10	10	0	20

उल्का दशा छः वर्ष – अन्तर्दशा

योगिनी	उल्का	सिद्धा	संकटा	मंगला	पिंगला	धान्या	भ्रामरी	भद्रिका
वर्ष	1	1	1	0	0	0	0	0
मास	0	2	4	2	4	6	8	10
दिन	0	0	0	0	0	0	0	0

सिद्धा दशा सात वर्ष – अन्तर्दशा

योगिनी	सिद्धा	संकटा	मंगला	पिंगला	धान्या	भ्रामरी	भद्रिका	उल्का
वर्ष	1	1	0	0	0	0	0	1
मास	4	6	2	4	7	9	11	2
दिन	10	20	10	20	0	10	20	0

संकटा दशा आठ वर्ष – अन्तर्दशा

योगिनी	संकटा	मंगला	पिंगला	धान्या	भ्रामरी	भद्रिका	उल्का	सिद्धा
वर्ष	1	0	0	0	0	1	1	1
मास	9	2	5	8	10	1	4	6
दिन	10	20	10	0	20	10	0	20

3.4 योगिनी दशाफल विवेचन -

अथ मंगलायोगिनी दशाफलम् -

सधर्मे द्विजदेवगोपुरजनोत्कर्षप्रदात्री नृणां
नानाभोगयशोऽर्थसन्नृप पराश्वेभांगजाप्तिप्रदा।
सन्मांगल्यविभूषणाम्बरचयस्त्रीभोगसंदायिनी
ज्ञानानन्दकरी दशा भवति सा ज्ञेया सदा मंगला ।।

अर्थ – मंगला की महादशा जातक के लिये मंगलदायिनी होती है। वह धर्मवान एवं यशवान होता है। समस्त भौतिक सुख सुविधाओं से युक्त तथा उच्चाभिलाषी होता है। नाना प्रकार के भोगों को भोगने वाला तथा राजा द्वारा विभूषित होता है। मांगलिक कृत्य करने वाला, सुन्दर स्त्रीयों का भोग करने वाला तथा ज्ञानवान होता है। मंगला शब्द का ही अर्थ है – जो मंगल को दे।

पिंगलायोगिनीमहादशा फलम् –

स्यात्पुंसा यदि पिंगला प्रसवतो हृद्रोगशोकप्रदा
नानारोगकुसंगदेहमनसो व्याध्यार्दितार्तिप्रदा।
तृष्णासृग्ज्वरपित्तशूलमलिनस्त्रीपुत्रभृत्याप्तस
न्मानध्वंशकरी धनव्ययकरी सत्प्रेमहन्त्री खला ।।

अर्थ – पिंगला की महादशा में जातक के शरीर में हृदय रोग, शोक, और नाना प्रकार के रोग होता है। दुष्टों की संगति तथा अनेक व्याधि होती है। तृष्णा, ज्वर, पित्त सम्बन्धित रोग, मलिन वस्त्र धारण करने वाला, स्त्री, पुत्र एवं नौकरादि से अपना मानभंग करने वाला, धनव्ययी, सच्चे प्रेम को न मानने वाला होता है।

धान्यायोगिनी महादशाफलम् –

धान्या धन्यतमा धनागम सुखव्यापारभोगप्रदा
पुसां मानविवृद्धिदा रिपुगणप्रध्वंसिनी सौख्यदा।
विद्याराजजन प्रबोध्सुरतज्ञानांकुराद्वर्द्धिनी
सत्तीर्थमरसिद्धसेवनरतिर्लभ्या दशा भाग्यतः ।।

अर्थ – धान्या की महादशा में जातक धनी, सुखी, सफल व्यापारी, भौतिक सुख भोगी, स्वाभिमानी, तथा शत्रुओं का नाश करने वाला होता है। वह विद्यावान, ज्ञानवान, संगीत – प्रेमी, धर्मवान, तथा सत्तीर्थों का भ्रमण करने वाला तथा सिद्धियों को प्राप्त करने वाला और भाग्यशाली होता है।

भ्रामरी महादशाफलम् –

दुर्गारण्यमहीधरोपगहरारामातपव्याकुला
दूराद्दूरतरं भ्रमन्ति मृगवत्तृष्णाकुलाः सर्वतः।
भूपालान्वयजा दशामधिगता ये वै नृपा भ्रामरी
स्वं राज्यं प्रविहाय ते स्फुटतरं क्ष्माऽधो लुठन्ते मुहुः ।।

अर्थ – भ्रामरी महादशा में जातक व्यर्थ भ्रमण करने वाला, वृहत् जंगलों में भ्रमण करने वाला महीधर के समान, व्याकुल, सुदूर भ्रमण करने वाला, हिरण के समान तृष्णा रखने वाला, राजा द्वारा दण्डित,

स्वराज्य से निष्काषित होकर भटकने वाला होता है।

भद्रिका योगिनी महादशाफलम् –

> **सौहार्दं निजवर्गभूसरसुरेशानां सुहृन्मान्यता**
> **मांगल्यं गृहमण्डलेऽखिलमुखव्यापारसक्तं मनः।**
> **राज्यं चित्रकपोलपालितिलकासप्तांगनाभिः समं**
> **क्रीडामोदभरो दशा भवति चेत्पुंसां हि भद्राभिधा ।।**

अर्थ – भद्रिका महादशा में जातक सौहार्द, स्वजनों का प्रिय, गृह में मांगलिक कार्य करने वाला, अखिल व्यापार का मालिक तथा मन का सच्चा होता है। स्वराज्य में विचरण करने वाला तथा नाना प्रकार के सुखों को भोगने वाला होता है।

उल्कायोगिनी महादशाफलम् –

> **उल्का चेदिह योगिनी गुरूदशामानार्थगोवाहन**
> **व्यापाराम्बरहारिणी नृपजनक्लेशप्रदा नित्यशः।**
> **भृत्यापत्यकलत्रवैरजननी रम्यापहन्त्री नृणां**
> **हृन्नेत्रोदर कर्णदानपदजो रोगः स्वदेहे भृशम् ।।**

अर्थ – उल्का महादशा में जातक को मान – सम्मान, आर्थिक, गाय, वाहन, व्यापार तथा वस्त्रों की हानि होती है। वह स्वजनों से नित्य कष्ट प्राप्त करने वाला, नौकरों से कलह करने वाला होता है। उसकी पत्नी का हरण होता है, उसके नेत्र एवं कान में विकार उत्पन्न होते है। उल्का की महादशा में भयंकर कष्ट ही कष्ट होता है।

बोध प्रश्न –

1. योगिनी दशा कुल कितने वर्षों का होता है।

क. 30 वर्ष ख. 34 वर्ष ग. 36 वर्ष घ. 40 वर्ष

2. योगिनी दशा सर्वप्रथम किसके द्वारा कहा गया था।

क. विष्णु के द्वारा ख. ब्रह्मा के द्वारा ग. प्रजापति के द्वारा घ. शिव के द्वारा

3. निम्नलिखित में सिद्धा से उत्पत्ति है –

क. बुध की ख. मंगल की ग. शुक्र की घ. सूर्य की

4. योगिनी दशा क्रम में पिंगला के पश्चात् आता है।

क. भ्रामरी ख. मंगला ग. सिद्धा घ. धान्या

5. मंगला का अर्थ है –

क. मंगल करने वाला ख. विपत्ति लाने वाला ग. नाश करने वाला घ. सुख प्रदान करने वाला

सिद्धा योगिनी महादशाफलम् –

सिद्धा सिद्धिकरी सुभोगजननी मानार्थसंदायिनी
विद्याराजजनप्रताप धनसद्धर्माप्तसज्ज्ञानदा ।।
व्यापाराम्बर भूषणादिकसुतोद्वाहादिमांगल्यदा ।
सत्संगान्नृपदत्तराज्यविभवो लभ्या दशा पुण्यतः ।।

अर्थ – सिद्धा की महादशा में जातक सिद्धि को प्राप्त करने वाला अर्थात् सिद्ध होता है, उत्तम भोगों को प्राप्त करने वाला, स्वाभिमानी, विद्या, राज्य, जनता का प्रिय तथा धन – धान्य से सम्पन्न एवं सच्चा ज्ञानी होता है। वह आभूषणों का सफल व्यापारी, विवाहादि मंगल कार्य करने वाला, सत्संग करने वाला, तथा पुरूषार्थ (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष) को प्राप्त करने वाला होता है।

संकटा योगिनी महादशाफलम् –

राज्यभ्रंशाग्निदाहो गृहपुरनगरग्रामगोष्ठेषु पुंसां
तृष्णारोगांगधातु क्षयविकृतिरथो पुत्रकान्तावियोगः ।
चेत्स्यान्मोहोऽरिभीतिः कृशतनुलतिकासंकटाया विरोधो
नो मृत्युर्जन्मकालाद्यमपि हि विना संकटं योगिनीजम् ।।

अर्थ - संकटा शब्द का ही अर्थ है – संकट को देने वाली। संकटा की महादशा में जातक का स्वराज्य अग्निदाह से नष्ट हो जाता है। वह गृह में, नगर में, ग्राम में, गोष्ठी में अपमानित होता है। उसे विविध प्रकार के गुप्त रोग, स्त्री एवं पुत्र से दूर, शत्रु द्वारा पराजित , कृश शरीर वाला, जन्म और मृत्यु से भी वह भयंकर कष्ट पाने वाला होता है । अर्थात् इस संकटा नामक महादशा में जातक को हानि ही हानि की प्राप्ति होती है।

दशा फल विचार के मौलिक नियम –

दशाफल विचार कि विषय में लघुपराशरी विद्याधरी में पाराशरीय नियमों का उल्लेख किया गया है। यहाँ केवल मौलिक व प्रारम्भिक सूत्र बताये जा रहे हैं, जो समस्त फल का आधार देते है –

शुभ फलप्रद दशा विचार –

1. पराशरीय मत से केन्द्रेशों व त्रिकोणेशों के सम्बन्ध पर आधारित सभी कारक ग्रहों की दशायें उत्कृष्ट फल देती है।
2. कारकों के सम्बन्धी ग्रहों की दशा में भी कारक ग्रहों का फल मिलता है। जैसे - कर्क लग्न का कारक मंगल यदि शनि से योग करता हो तो शनि की दशा में भी उत्कृष्ट फल मिलेंगे।

3. जो ग्रह जन्म समय में स्वोच्च, मूलत्रिकोण, स्वक्षेत्र, अधिमित्र क्षेत्र, मित्र क्षेत्र, शुभ ग्रह क्षेत्र में शुभ दृष्ट हो या षड्वर्गों के शुभ वर्गों में गया हो तो क्रमिक ह्रास से क्रमशः अच्छा ही फल देता है। उदाहरणार्थ यदि कोई ग्रह उच्च में है तो वह अत्यन्त शुभ फल करेगा लेकिन पापदृष्टि अशुभ भाव स्थिति आदि से उसकी शुभता में क्रमिक ह्रास होगा। इसके विपरीत कोई ग्रह साधारण सम ग्रह की राशि में है, लेकिन शुभ ग्रहों से दृष्ट, शुभ भावस्थिति है तो वह अत्यन्त शुभ फल देगा ही, इसमें क्या सन्देह है। इस प्रकार उहापोह पूर्वक महादशा का फल स्थिर किया जाता है।

4. निसर्ग शुभ ग्रह प्रायः शुभ फलदायक होते है।

अशुभ दशा निर्णय -

1. उक्त तथ्यों के विपरीत होने पर दशा का फल अशुभ होगा। नीचगत, अस्तंगत, शत्रुक्षेत्री , अशुभ वर्गों में गया हुआ, पापदृष्ट तथा अशुभ भाव स्थित ग्रह की दशा अशुभ फल देती है।
2. पापी ग्रह वक्री भी हो तो उसकी दशा महान कष्टदायक होती है।
3. पाराशर मत से मारक ग्रहों की दशा कष्टप्रद होती है। तथा निसर्ग पापग्रह की दशा भी अशुभ फल ही देती है।

कुछ विशेष नियम –

1. दशा प्रवेश के समय यदि चन्द्रमा बलवान हो तथ अपनी जन्म राशि से शुभ गोचर भावों में हो तो महादशा का फल काफी बुरा होते हुये भी कुछ कम हो जाता है।
2. इसके विपरीत दशा प्रवेश कालीन चन्द्रमा की अशुभता व निर्बलता शुभ दशा के शुभ फल में कमी करेगी।
3. जो दशापति बलवान हों, वे अपनी दशा में अपना पूरा फल देते हैं। तथा बलहीन होकर कुछ भी फल देने में समर्थ नहीं होते है। मध्यम बली ग्रह का मध्य फल समझना चाहिये। उदाहरणार्थ – लग्नेश दशा नियमतः शुभ होनी चाहिये, लेकिन वह नीच अस्तंगत, अशुभवर्गी आदि होकर पाप पीड़ित हो तो कुछ भी विशेष शुभ फल अपनी दशा में नहीं दे सकेगा।

4. सामान्यतः राहुयुक्त ग्रह की दशा कष्टप्रद होती है तथा अन्त में विशेष शोक देती है। इसके विपरीत यदि राहु किसी योगकारक ग्रह के साथ स्थित हो अथवा उसी ग्रह की राशि में राहु हो तो अरिष्ट नहीं होता है।

5. अपने उच्च से आगे की राशियों में स्थित ग्रह सामान्यत: नीच राशि की ओर बढ़ने के कारण शुभ फल में क्रमिक कमी लाता है, लेकिन यदि शुभ नवमांश में हो तो वह अच्छे फल भी देता है।
6. इसी प्रकार उच्च राशि की ओर बढ़ता ग्रह सामान्यत: अच्छा फल देता है। लेकिन नवमांश लग्न में शत्रुक्षेत्री या नीच आदि होने पर उसकी शुभता कम हो जायेगी।
7. शुभ ग्रहों के मध्य में विद्यमान पाप ग्रह अशुभ फल नहीं देता तथा अशुभ ग्रहों के मध्य में स्थित शुभ ग्रह शुभ फल नहीं देता।
8. दशा प्रवेश के समय यदि दशेश या अन्तर्दशेश उच्च, त्रिकोण, स्वराशि में हो तो शुभ होता है। विपरीत स्थिति में अशुभ आदि होता है।
9. सभी पाप ग्रह दशा के शुरू में अपनी उच्चादि राशि के अनुसार उसके बाद में साथी या द्रष्टा गहों की प्रकृति के अनुसार तथा लगभग दशा काल के मध्य में स्थान या भावानुसार फल देते हैं एवं अन्त में प्राय: सभी पाप दशायें उपद्रव करती है।
10. प्राय: ग्रह जिस द्रेष्काण में स्थित हो, अपने दशा काल के भी उसी तृतीयांश में अपना फल विशेषतया देता है।

दशा फल में राहु केतु की विशेषता -

1. त्रिकोणस्थ राहु – केतु यदि 2,7 भावेशों के साथ हों तो मारक होते है।
2. त्रिकोणेशों से युत या दृष्ट यदि 2,7 भावों में हो तो आयु व धन वर्धक होते है।
3. द्विस्वभाव राशिगत राहु – केतु यदि त्रिकोणेशों से युक्त हो या राहु – केतु की अधिष्ठित राशियों के स्वामी त्रिकोणेशों से युक्त हों तो वे सदैव राज्य व धन देते है।
4. चर या स्थिर राशि गत राहु – केतु केन्द्र या त्रिकोण में स्थित हों ओर कारक ग्रहों से युक्त हो तो स्वदशा में विशेष समृद्धि देते है।
5. राहु – केतु अशुभ स्थानों में स्थित होकर भी कारक ग्रहों से युक्त हो तो शुभ फल एवं शुभ भावों में स्थित होकर भी मारक ग्रहों से युक्त हो तो मारक फल ही देंगे।

अन्तर्दशा फल विचार –

उक्त प्रकार से ग्रह की सम्पूर्ण महादशा , अन्तर्दशा, योगिनी दशा, सूक्ष्म दशा का आधारभूत फल जानकर उसकी अन्तर्दशाओं का फल निर्णय करना चाहिये।

1. महादशेश जिस स्थान में स्थित हो, उस स्थान को लग्न मानें तथा जो ग्रह उससे 3,10,11 उपचय भावों में 4,10 केन्द्रों में या 5,9 त्रिकोणों में स्थित हो तो वह अपनी अन्तर्दशा में

शुभ फल देता है।

2. इसके विपरीत महादशेश से 1,7,6,8,12 भावों में स्थित हो तो अपनी दशा में शुभ फल नहीं देता, बल्कि महादशा फल नियमों के अनुसार उस अन्तर्दशेश की भी शुभाशुभता का निश्चय कर अधिक शुभ या अधिक अशुभ भाग वाले फल का निर्णय करना चाहिये।
3. दशानाथ से द्वितीय भावगत अन्तर्दशेश मिला – जुला फल देता है।
4. यदि कारक महादशा में मारक अन्तर्दशा या मारक दशा में कारक अर्न्तदशा हो तो मिश्रित फल होता है।
5. परस्पर मित्र ग्रहों की दशा – अन्तर्दशा शुभ व शत्रु ग्रहों की अशुभ फल देती है।
6. निसर्ग पाप ग्रहों की दशा, अशुभ ग्रहों की या 6,8,12 भावेशों की दशा अशभ फल देती है।

3.5 सारांश –

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि योगिनी दशाओं के बारे में ऐसा कहा जाता है कि स्वयं देवाधिदेव महादेव ने इस दशा को कहा था। **मंगला, पिंगला, धान्या, भ्रामरी, भद्रिका, उल्का, सिद्धा, संकटा** – ये **आठ योगिनी** दशा होती है। मंगला से चन्द्रमा, पिंगला से सूर्य, धान्या से गुरू, भ्रामरी से मंगल, भद्रिका से बुध, उल्का से शनि, सिद्धा से शुक्र और संकटा से राहु की उत्पत्ति है। जन्मनक्षत्र संख्या में 3 जोड़कर 8 का भाग देने पर एकादि शेष से मंगलादि योगिनी दशायें होती है। मंगलादि योगिनी दशावर्ष एकादि वर्ष जानना चाहिये अर्थात् 1,2,3,4,5,6,7,8 क्रम से वर्ष जानना चाहिये। जन्मकालिक भयात् भभोग के द्वारा दशा के भुक्त, भोग्य वर्षादि का साधन करना चाहिये। ज्योतिष शास्त्र में दशाओं का ज्ञान परमावश्यक है, दशा क्रम में विंशोत्तरी, अष्टोत्तरी के पश्चात् **योगिनी** का नाम आता है। वस्तुत: प्रचलन के दृष्टिकोण से सर्वाधिक विंशोत्तरी एवं अष्टोत्तरी का ही विचार किया जाता है। परन्तु भारतवर्ष के कई प्रान्तों में योगिनी दशा का भी प्रचलन है। सर्वाधिक दशाओं का उल्लेख वृहत्पराशरहोराशास्त्र में आचार्य पराशर जी ने किया है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आशा है कि पाठक गण योगिनी दशा का ज्ञान सुगमता पूर्वक प्राप्त कर सकेंगे।

3.6 पारिभाषिक शब्दावली

विंशोत्तरी- कृत्तिकादि नक्षत्र से जन्म नक्षत्र तक गणना कर किया जाने वाला दशा विंशोत्तरी दशा। यह 120 वर्ष की होती है।

अष्टोत्तरी- यह 108 वर्षों की होती है। यह विन्ध्य से दक्षिण में प्रचलित है।

योगिनी – यह 36 वर्षों का होता है।

त्रिकोणेश – त्रिकोण का स्वामी

अखिल – सम्पूर्ण

स्वजन – अपने लोग

त्रिकोणस्थ – त्रिकोण में स्थित

उच्चाभिलाषी – उच्च की चाह रखने वाला

स्वनामानुसार – अपने नाम के अनुसार

3.7 बोधप्रश्नों के उत्तर

1. ग

2. घ

3. ग

4. घ

5. क

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. वृहत्पराशरहोराशास्त्र

2. जातकपारिजात

3. वृहज्जयोतिसार

4. ज्योतिष सर्वस्व

5. वृहज्जातक

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. योगिनी दशा का उल्लेख करते हुये उसके फलादेश कर्तव्यादि का विस्तारपूर्वक उल्लेख करें।

2. योगिनी दशा का ज्योतिष में क्या उपयोग है तथा उसका प्रचलन अत्यधिक मात्रा में कहॉ होता है।

इकाई – 4 अन्तर्दशा दशा फल

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई दशाफल विचार के चतुर्थ इकाई '**अन्तर्दशा फल**' शीर्षक से संबंधित है। जातक के जन्मोपरान्त उसके जीवन सम्बन्धी फलादेश कर्त्तव्य हेतु हम सर्वप्रथम नक्षत्र ज्ञान से विंशोत्तरी दशा का ज्ञान कर लेते है, तत्पश्चात दूसरे चरण में अन्तर्दशा का ज्ञान करते है।

अन्तर्दशा से तात्पर्य है – किसी ग्रह की दशा में उसके अन्त: अर्थात् भीतर चल रही दशा। यथा सूर्य की दशा 6 वर्ष की होती है, उन 6 वर्षों में सभी ग्रहों की पृथक – पृथक अन्तर्दशा होती है। जिसका ज्ञान कर हम जातक के जीवन सम्बन्धी फलादेश कर्तव्य में और सूक्ष्मता का ज्ञान करते है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने विंशोत्तरी दशाफल, अष्टोत्तरी दशाफल, योगिनी दशाफल का विस्तृत अध्ययन कर लिया हैं। यहॉ हम इस इकाई में **अन्तर्दशा** साधन एवं उसके फलादेश सम्बन्धित विषयों का अध्ययन विस्तार पूर्वक करेंगे।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

1. **अन्तर्दशा** को परिभाषित करने में समर्थ हो सकेंगे।
2. **अन्तर्दशा** दशा के महत्त्व को समझा सकेंगे।
3. **अन्तर्दशा** दशा का निरूपण करने में समर्थ होंगे।
4. **अन्तर्दशा** दशा का स्वरूप वर्णन करने में समर्थ होंगे।
5. **अन्तर्दशा** दशा से फलादेशादि को निरूपित करने में समर्थ होंगे।

4.3 अन्तर्दशा परिचय, परिभाषा व दशाफल

प्रत्येक दशा में अन्त: अर्थात् भीतरी दशायें भी सभी ग्रहों की मानी जाती है। अन्तर्दशा विधि को आचार्य वराहमिहिर ने वृहज्जातक में इस प्रकार प्रतिपादित किया है –

एकर्क्षगोऽधर्ममपहृत्य ददाति तु स्वं
त्र्यंशं त्रिकोणगृहग: स्मरग: स्वरांशम्।
पादं फलस्य चतुरस्रगत: सहोरा
स्त्वेवं परस्परगता: परिपाचयन्ति॥

अर्थात् दशापति के साथ जितने ग्रह रहें उनमें सर्वाधिक बलवान ग्रह दशापति के आयुर्दाय के आधा का अन्तर्दशाधिप होता है। इसके पश्चात् नवम – पंचम इन स्थानों के ग्रहों में जो बलवान हो वह दशापति के आयुर्दाय के तृतीयांश का अन्तर्दशाधिप होता है। इसके बाद दशाधीश से सप्तम स्थित

ग्रहों में जो बलवान हो वह दशाधीश के आयुर्दाय के तृतीयांश का अन्तर्दशाधिप होता है।
इसी प्रकार चतुर्थ – अष्टम में स्थित ग्रहों में बलवान ग्रह चतुर्थांश का अधिप होता है। इसी प्रकार लग्न सहित सभी ग्रह अपनी – अपनी अन्तर्दशा में अपना – अपना फल देते है।
यदि एक स्थल में अनेक ग्रह हों तो उनमें जो सबसे अधिक बलवान हो वही अपने अंश का पाचक होता है, इससे यह स्पष्ट होता है कि जहॉ पर दशापति से प्रथम – चतुर्थ – पंचम – सप्तम – अष्टम और नवम स्थानों में कोई ग्रह न रहे तो उस ग्रह की दशा के अन्तर्गत अन्य ग्रह की अन्तर्दशा नहीं होती है, परन्तु वही ग्रह अन्तर्दशाधिप भी हो जाता है।

अन्तर्दशानयन प्रकार –

दशाब्दा: स्व – स्वमानघ्ना: सर्वायुर्योगभाजिता: ।
पृथगन्तर्दशा एवं प्रत्यन्तरदशादिका: ।।

जिस ग्रह की महादशा में अन्तर्दशा अवगत करनी हो, उसकी वर्षसंख्या को पृथक् – पृथक् ग्रहों की वर्षसंख्या से गुणा करके सभी ग्रहों की वर्षसंख्या के योग से भाग देने से लब्धि पृथक् – पृथक् अन्तर्दशा वर्षादिमान होते हैं। इसी प्रकार अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर ज्ञात करना अभीष्ट हो तो अन्तर्दशा मान को प्रत्येक ग्रह के दशावर्ष से गुणाकर सभी ग्रहों के दशावर्षयोग से भाग देने से लब्धि पृथक – पृथक प्रत्यन्तर्दशा होती है।

उदाहरण –

सूर्य की महादशा में सूर्यादि सभी ग्रहों की अन्तर्दशा अभीष्ट हो तो – सूर्य की विंशोत्तरीय दशावर्षसंख्या 6 सभी ग्रहों का वर्षयोग 120 है।

अत: सूर्य 6 × 6 / 120 = 0।3।18

चन्द्र 6 × 10 / 120 = 0।6।0

मंगल 6 × 7 / 120 = 0।4।6

राहु 6 × 18 / 120 = 0।10।24

गुरू 6 × 16 / 120 = 0।9।18

शनि 6 × 19/ 120 = 0।11।12

बुध 6 × 17/ 120 = 0।10।6

केतु 6 × 7 / 120 = 0।4।6

शुक्र 6 × 20 / 120 = 1।0।0

सूर्य की महादशा में सूर्यादि का अन्तर –

ग्रह	सूर्य	चन्द्र	मंगल	राहु	गुरू	शनि	बुध	केतु	शुक्र
वर्ष	0	0	0	0	0	0	0	0	1
मास	3	6	4	10	9	11	10	4	0
दिन	18	0	6	24	18	12	6	6	0

इसी प्रकार अन्य ग्रहों की दशा का भी आनयन करना चाहिये।

अन्तर्दशाक्रम –

आदावन्तर्दशा पाकपतेस्तत्क्रमतोऽपरा: ।
एवं प्रत्यन्तरादौ च क्रमो ज्ञेयो विचक्षणै: ।।

किसी भी दशा में प्रथम अन्तर्दशा स्वामी की ही होती है और उसके आगे क्रम से सभी ग्रहों की अन्तर्दशा होती है। प्रत्यन्तरादि दशा में भी यही क्रम होता है।

चरादि दशाओं में ग्रहों की अन्तर्दशा

भुक्तिर्नवानां तुल्या स्याद् विभाज्या नवधा दशा ।
आदौ दशापतेर्भुक्तिस्तत्केन्द्रादियुजां तत: ।।
विद्यात् क्रमेण भुक्त्यंशानेवं सूक्ष्मदशादिकम् ।
बलक्रमात् फलं विज्ञैर्वक्तव्यं पूर्वरीतित: ।।

ग्रहों की चरादि दशा या केन्द्रादि दशा में दशामान को 9 समान भाग करके अन्तर्दशा जाननी चाहिये । यहॉं प्रथम तो दशाधिप की ही अन्तर्दशा होगी, तदनन्तर केन्द्र स्थित ग्रहों की, पुन: पणफरस्थ ग्रहों की तत्पश्चात् आपोक्लिमस्थ ग्रहों की अन्तर्दशा बलक्रम से होती है।

राशियों का अन्तर्दशा साधन –

कृत्वाऽर्कधा राशिदशां राशेर्भुक्तिं क्रमाद् वदेत् ।
प्रत्यन्तर्दशाद्येवं कृत्वा तत्तफलं वदेत् ।।

राशियों का जो दशावर्ष हो, उसको 12 से गुणा करने पर जो लब्धि हो , उतना ही प्रत्येक राशि का अन्तर्दशावर्ष होता है । इसी प्रकार अन्तर्दशा वर्ष में अनुपात से प्रत्यन्तर्दशा का भी ज्ञान करना चाहिये।

बोध प्रश्न –

1. अन्तर्दशा का अर्थ होता है।
   क. अन्त:दशा ख. उपरी दशा ग. प्रचलित दशा घ. व्यतित दशा
2. समस्त ग्रहों का कुल दशावर्ष होता है।

क. 100 वर्ष की ख. 200 वर्ष की ग. 130 वर्ष की घ. 120 वर्ष की

3. सूर्य ग्रह की महादशा में सूर्य का अन्तर होता है ।

   क. 0।3।18 ख. 5।15।3 ग. 6।2।3 घ. 0।3।16

4. सूर्य की महादशा में शुक्र का अन्तर दशा होता है।

   क. 2।0।0 ख. 3।0।0 ग. 1।0।0 घ. 5।0।0

4.4 अन्तर्दशा फल (विंशोत्तरी क्रम से) –

सूर्य की दशा में सूर्य की अन्तर्दशा का फल –

स्वोच्चे स्वभे स्थित: सूर्यो लाभे केन्द्रे त्रिकोणगे।
स्वदशायां स्वभुक्तौ च धन – धान्यादि लाभकृत् ।।
नीचाद्यशुभराशिस्थो विपरीतं फलं दिशेत्।
द्वितीयद्यूननाथेऽर्के त्वपमृत्युभयं वदेत् ।।
तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युंजयजपं चरेत्।
सूर्यप्रीतिकरीं शान्तिं कुर्यादिारोग्यलब्धये ।।

यदि सूर्य अपने उच्च मेष राशि में 10 अंश का हो अथवा अपनी राशि में या लाभ, केन्द्र, त्रिकोण में स्थित हो तो अपनी दशा और अपनी ही अन्तर्दशा में जातक को धन – धान्य का लाभ आदि शुभ फल देने वाला होता है एवं नीचादि अशुभ स्थान में सूर्य हो तो धन – धान्यादि का नाशकारक होता है। यदि सूर्य द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो सूर्य की दशा में अन्तर्दशा के समय अपमृत्यु या मृत्युसदृश कष्ट होता है। उस दोष के परिहार हेतु एवं आरोग्य प्राप्त्यर्थं तथा सूर्य की प्रसन्नता हेतु महामृत्युंजय जप, सूर्य की पूजा, संबंधित ग्रह का जपादि कार्य कराना चाहिये।

चन्द्रान्तर्दशा फल –

सूर्यस्याऽन्तर्गते चन्द्रे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे।
विवाहं शुभकार्यं च धनधान्यसमृद्धिकृत् ।।
गृहक्षेत्राभिवृद्धिं च पशुवाहनसम्पदाम्।
तुंगे वा स्वर्क्षगे वाऽपि दारसौख्यं धनागमम् ।।
पुत्रलाभसुखं चैव सौख्यं राजसमागमम्।
महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिसुखावहम् ।।

सूर्य की दशा में चन्द्र की अन्तर्दशा हो तो, यदि चन्द्र लग्न से केन्द्र त्रिकोण में बैठा है तो विवाहादि मांगलिक शुभ कार्य सम्पन्न होता है, साथ ही धन – धान्य की वृद्धि होती है। चन्द्र अपने क्षेत्र में स्थित हो तो धन, पशु, वाहन आदि की प्राप्ति होती है । यदि स्वोच्च, स्वगृह में चन्द्र हो तो पत्नीसुख, धनागम, पुत्र – लाभ, सुख आदि की प्राप्ति एवं राजा, महाराजा की कृपा से लक्षित लक्ष्य की प्राप्ति होती है।

सूर्य में भौमान्तर का फल –

सूर्यस्यान्तर्गते भौमे स्वोच्चे स्वक्षेत्रलाभगे।
लग्नात्केन्द्रत्रिकोणे वा शुभकार्यं समादिशेत्॥
भूलाभं कृषिलाभं च धन – धान्य विवर्धनम्।
गृहक्षेत्रादिलाभं च रक्तवस्त्रादिलाभकृत्॥
लग्नाधिपेन संयुक्ते सौख्यं राजप्रियं वदेत्।
भाग्यलाभाधिपैर्युक्ते लाभश्चैव भविष्यति॥
बहुसेनाधिपत्यं च शत्रुनाशं मनोदृढम्।
आत्मबन्धुसुखं चैव भ्रातृवर्धनकं तथा॥

सूर्य की महादशा में मंगल की अन्तर्दशा हो और मंगल अपने उच्च में हो या स्वक्षेत्र में या 11, केन्द्र, त्रिकोण में बैठा हो तो शुभ कार्य सम्पन्न, भूमिलाभ, कृषि कार्य से उचित लाभ, धन 5 धान्य की वृद्धि, गृह क्षेत्रादि का लाभ एवं रक्त वस्त्र से समुचित लाभ कहना चाहिये। यदि मंगल लग्नेश से युत हो तो सौख्य की वृद्धि और राजा का प्रियकारक होता है। यदि भाग्येश या लाभेश से युत हो तो ऐसा जातक सेनापति, शत्रुओं का नाश करने वाला, मन की स्थिरता, स्व - बन्धु तथा बान्धवों का सुख एवं भाइयों की वृद्धि से युक्त होता है।

सूर्य में राहु का अन्तर्दशाफल –

सूर्यस्यान्तर्गते राहौ लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे।
आदौ द्विमासपर्यन्तं धननाशो महद्भयम्॥
चौराहि व्रण – भीतिश्च दारपुत्रादिपीडनम्।
तत्परं सुखमाप्नोति शुभयुक्ते शुभांशके॥
देहारोग्यं मनस्तुष्टी राजप्रीतिकरं सुखम्।
लग्नादुपचये राहौ योगकारकसंयुते॥
दायेशाच्छुभराशिस्थे राजसम्मानमादिशेत्।
भाग्यवृद्धिं यशोलाभं दारपुत्रादिपीडनम्॥

पुत्रोत्सवादिसन्तोषं गृहे कल्याणशोभनम्।

सूर्य की महादशा में राहु की अन्तर्दशा हो और राहु लग्न से केन्द्र – त्रिकोण में हो तो जातक को आरम्भ से 2 माह तक धननाश, महान भय, चौरभय, सर्प और व्रण भय तथा स्त्री - पुत्र को कष्ट होता है एवं 2 माह के अनन्तर सुख की प्राप्ति होती है। यदि राहु शुभ ग्रह से युत और शुभ ग्रह के नवमांश में हो तो जातक को देहसुख, आरोग्य, मानसिक प्रसन्नता एवं राजा की कृपा से सुख की वृद्धि होती है। यदि राहु लग्न से उपचय में हो या योग कारक ग्रह से युत हो अथवा दशापति से शुभ स्थान में हो तो राजा सम्मान, भाग्यवृद्धि, यश, लाभ, परन्तु पत्नी और पुत्र को सामान्य पीड़ा, पुत्रोत्पत्ति का हर्ष, सन्तोष, घर में उत्सव आदि शुभ कार्य सम्पन्न होने से कल्याण होता है।

सूर्य में गुरू की अन्तर्दशा फल –

सूर्यस्यान्तर्गते जीवे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे।
स्वोच्चे मित्रस्य वर्गस्थे विवाहं राजदर्शनम्॥
धनधान्यादिलाभं च पुत्रलाभं महत्सुखम्।
महाराजप्रसादेन इष्टकार्यार्थलाभकृत्॥
ब्राह्मणप्रियसम्मानं प्रियवस्त्रादिलाभकृत्।

सूर्य की महादशा में गुरू की अन्तर्दशा हो और गुरू लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में हो या स्वोच्च, स्वगृह या मित्र राशि में बैठा हो तो विवाह, राजदर्शन, धन – धान्यादि का लाभ पुत्रप्राप्ति, महान् सुख, महाराजा की कृपा से लक्षित कार्य की सिद्धि, अर्थलाभ, ब्राह्मण से सम्मान एवं अभीष्ट वस्त्रादि का लाभ होता है।

सूर्य में शन्यन्तर्दशा का फल –

सूर्यस्यान्तर्गते मन्दे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे।
शत्रुनाशो महत्सौख्यं स्वल्पधान्यार्थलाभकृत्॥
विवाहादिसुकार्यं च गृहे तस्य शुभावहम्।
स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे मन्दे सुहृद्ग्रहसमन्विते॥
गृहे कल्याणसम्पत्तिर्विवाहादिषु सत्क्रिया।
राजसम्मानकीर्तिश्च नानावस्त्रधनागमः॥

सूर्य की महादशा में शनि की अन्तर्दशा हो और शनि यदि लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में स्थित हो तो शत्रु का नाश, पूर्ण सुख, स्वल्प धान्य लाभ एवं गृह में विवाहादि शुभ कार्य सुसम्पन्न होते है। यदि शनि स्वोच्च में, स्वक्षेत्र या मित्रगृह में या मित्र के साथ में हो तो स्वगृह में कल्याणकारक, सम्पत्ति की वृद्धि , विवाहादि शुभ कार्य, राजा से सम्मान, कीर्ति एवं अनेक प्रकार से धन तथा वस्त्रादि की प्राप्ति

होती है।

सूर्य में बुध की अन्तर्दशा फल –

सूर्यस्यान्तर्गते सौम्ये स्वोच्चे वा स्वर्क्षगेऽपि वा।
केन्द्रत्रिकोणलाभस्थे बुधे वर्गबलैर्युते ।।
राज्यलाभो महोत्साहो दारपुत्रादिसौख्यकृत्।
महाराजप्रसादेन वाहनाम्बरभूषणम्।।
पुण्यतीर्थफलावाप्तिर्गृहे गोधनसंकुलम्।

सूर्य की महादशा में बुध की अन्तर्दशा हो और बुध लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ स्थान में हो या स्वोच्च, स्वगृह में स्थित हो तो बुध की अन्तर्दशा में राज्यलाभ, उत्साह, पत्नी, पुत्र का सुख, महाराज की अनुकम्पा से वाहन, वस्त्र, आभूषण का लाभ, धार्मिक कृत्य, तीर्थयात्रा, सुन्दर गौ आदि धन की प्राप्ति होती है।

सूर्य में केतु का अन्तर्दशा – फल

सूर्यस्यान्तर्गते केतौ देहपीडा मनोव्यथा।
अर्थव्ययं राजकोपं स्वजनादेरूपद्रवम्।।
लग्नाधिपेन संयुक्तो आदौ सौख्यं धनागमम्।
मध्ये क्लेशमवाप्नोति मृतवार्तागमं वदेत्।।

सूर्य में केतु की अन्तर्दशा चल रही हो तो शरीर में पीड़ा, मानसिक व्यथा, धननाश, राजभय, एवं बन्धु - बान्धवों से कलह होता है। यदि लग्नेश से युत हो तो प्रारम्भ में धनागम एवं सुख, मध्य में दु:ख एवं अन्त में मरण या मरणसदृश समाचार प्राप्त होता है।

सूर्य में शुक्रान्तर्दशा का फल –

सूर्यस्यान्तर्गते शुक्रे त्रिकोणे केन्द्रगेऽपि वा।
स्वोच्चे मित्रस्ववर्गस्थेऽभीष्टस्त्रीभोग्यसम्पदः।।
ग्रामान्तरप्रयाणं च ब्राह्मणप्रभुदर्शनम्।
राज्यलाभो महोत्साहश्छत्रचामरवैभवम्।।
गृहे कल्याणसम्पत्तिर्नित्यं मिष्ठान्नभोजनम्।
विद्रुमादिरत्नलाभो मुक्तावस्त्रादिलाभकृत्।।
चतुष्पाज्जीवलाभः स्याद् बहुधान्यधनादिकम्।
उत्साहः कीर्तिसम्पत्तिर्नरवाहनसम्पदः।।

सूर्य के अन्तर्गत शुक्र की अन्तर्दशा हो और शुक्र लग्न से केन्द्र या त्रिकोण में स्वोच्च में या मित्र – स्ववर्ग में स्थित हो तो इच्छानुसार स्त्री – भोग, सम्पत्ति, ग्रामान्तर में भ्रमण, ब्राह्मण और राजा का दर्शन, राज्यलाभ, महान उत्साह, छत्र – चामर की प्राप्ति, गृह में मांगलिक कार्य, धन, मिष्ठान्न भोजन, मोती आदि रत्न का लाभ, वस्त्र, पशु, धन – धान्य का लाभ, उत्साह, यश एवं वाहन आदि का समुचित लाभ प्राप्त होता है।

चन्द्रमा की दशा में चन्द्रमा की अन्तर्दशा का फल

स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे चन्द्रे त्रिकोणे लाभगेऽपि वा।
भाग्यकर्माधिपैर्युक्ते गजाश्वाम्बरसंकुलम्।।
देवतागुरूभक्तिश्च पुण्यश्लोकादिकीर्तनम्।
राज्यलाभो महत्सौख्यं यशोवृद्धिः सुखावहा।।
पूर्णे चन्द्रे बलं पूर्णं सेनापत्यं महत्सुखम्।

यदि चन्द्रमा अपने उच्च में, स्वक्षेत्र में, त्रिकोण, एकादश या भाग्येश, कर्मेश के साथ स्थित हो तो उसकी अन्तर्दशा में हाथी, घोड़ा, वस्त्रादि का लाभ होता है एवं देवता और गुरू जनों में भक्ति, पुण्यश्लोकादि का पाठ, भगवद् भजन, राज्यलाभ, पूर्ण सुख तथा यश की वृद्धि होती है। यदि चन्द्र पूर्ण बली हो तो जातक को सेनानायक का अधिकार प्राप्त होता है।

चन्द्रमा की दशा में मंगल की अन्तर्दशा का फल

चन्द्रस्यान्तर्गते भौमे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे।
सौभाग्यं राजसन्मानं वस्त्राभरणभूषणम्।।
यत्नात् कार्यार्थसिद्धिस्तु भविष्यति न संशयः।
गृहक्षेत्राभिवृद्धिश्च व्यवहारे जयो भवेत्।।
कार्यलाभो महत्सौख्यं स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे फलम्।

चन्द्रमा के अन्तर्गत भौम की अन्तर्दशा चल रही हो और भौम लग्न से केन्द्र त्रिकोण में स्थित हो तो सौभाग्य, राजा से सन्मान – वस्त्र – आभूषणादि की प्राप्ति, यत्न से कार्य की सफलता, गृह, क्षेत्र की वृद्धि, व्यवहार में विजय तथा यदि मंगल अपने उच्च या स्वगृह में स्थित हो तो कार्य लाभ और पूर्ण सुख की प्राप्ति होती है।

राह्वन्तर दशा फल –

चन्द्रस्यान्तर्गते राहौ लग्नात् केन्द्रत्रिकोणगे।
आदौ स्वल्फलं ज्ञेयं शत्रुपीडा महद्भयम्।।

चौराहिराजभीतिश्च चतुष्पाज्जीवपीडनम्।

बन्धुनाशो मित्रहानिर्मानहानिर्मनोव्यथा॥

चन्द्रमा की महादशा में राहु की अन्तर्दशा चल रही हो और राहु केन्द्र - त्रिकोण में स्थित हो तो प्रारम्भ में सामान्य शुभफल, पश्चात् शत्रुपीड़ा, महान भय, चोर, सर्प और राजभय, पशुओं को कष्ट, बन्धुनाश, मित्रहानि, मानहानि एवं मानसिक सन्ताप होता है।

जीवान्तर्दशा फल –

चन्द्रस्यान्तर्गते जीवे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे।

स्वगेहे लाभगे स्वोच्चे राज्यलाभो महोत्सवः॥

वस्त्रालंकारभूषाप्ती राजप्रीतिर्धनागमः।

इष्टदेवप्रसादेन गर्भाधानादिकं फलम्॥

तथा शोभनकार्याणि गृहे लक्ष्मीः कटाक्षकृत्।

राजाश्रयं धनं भूमिगजवाजसमन्वितम्॥

महाराजप्रसादेन स्वेष्टसिद्धिः सुखावहा।

चन्द्रमा की महादशा में गुरू की अन्तर्दशा हो और गुरू लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में हो, स्वगृह, स्वोच्च, लाभस्थान में स्थित हो तो जीवान्तर्दशा में राज्यलाभ, महोत्सव, गर्भाधानादि की प्राप्ति, गृह में शुभ कार्य, लक्ष्मी की दृष्टि, राजाश्रय, धन, भूमि, हाथी, घोड़ा आदि का लाभ और महाराज की प्रसन्नता से सुख एवं अभीष्ट कार्य की सिद्धि होती है।

शन्यन्तर दशाफल –

चन्द्रस्यान्तर्गते मन्दे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे।

स्वक्षेत्रे स्वांशगे चैव मन्दे तुंगांशसंयुते॥

शुभदृष्टयुते वाऽपि लाभे वा बलसंयुते।

पुत्रमित्रार्थसम्त्तिः शूद्रप्रभुसमागमात्॥

व्यवसायात्फलाधिक्यं गृहे क्षेत्रादिवृद्धिदम्।

पुत्रलाभश्च कल्याणं राजानुग्रहवैभवम्॥

चन्द्रमा की महादशा में शनि की अन्तर्दशा हो और शनि यदि लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, स्वराशि, स्वनवमांश, अपने उच्च में स्थित होकर शुभ ग्रहों से युता या दृष्ट हों, या बलयुत होकर लाभ स्थान में स्थित हो तो पुत्र, मित्र, धन – सम्पत्ति की प्राप्ति, शूद्रों के सम्पर्क से व्यवसाय में अधिक लाभ, गृह में खेती की वृद्धि, पुत्रलाभ, कल्याण एवं राजा की कृपा से धन – धान्यादि सम्पत्ति की वृद्धि होती है।

चन्द्रमा की दशा में बुध की अन्तर्दशा का फल

चन्द्रस्यान्तर्गते सौम्ये केन्द्रलाभत्रिकोणगे।
स्वर्क्षे निजांशके सौम्ये तुंगे वा बलसंयुते॥
धनागमो राजमानप्रियवस्त्रादिलाभकृत्।
विद्याविनोदसद्गोष्ठी ज्ञानवृद्धिः सुखावहा॥
सन्तानप्राप्तिः सन्तोषो वाणिज्ययद् धनलाभकृत्।
वाहनच्छत्रसंयुक्त नानालंकार लाभकृत्॥

चन्द्रमा की महादशा में बुध की अन्तर्दशा हो, और बुध यदि लग्न से केन्द्र त्रिकोण लाभ स्थान में हो या स्वराशि, स्वनवमांश, स्वोच्च, बलयुत हो तो धनागम, राजा से सम्मान, अभीष्ट वस्त्रादि का लाभ, विद्याचर्चा, सत्संग, गोष्ठी, ज्ञानवृद्धि, सुख, पुत्र की प्राप्ति, सन्तोष, व्यापार में लाभ, वाहन एवं छत्र की प्राप्ति तथा अनेक आभूषणों का लाभ होता है।

केत्वन्तर्दशा फल –

चन्द्रस्यान्तर्गते केतौ केन्द्रलाभत्रिकोणगे।
दुश्चिक्ये बलसंयुक्ते धनलाभं महत्सुखम्॥
पुत्रदारादिसौख्यं च विधिकर्म करोति च।
भुक्त्यादौ धनहानिः स्यान्मध्यगे सुखमाप्नुयात्॥

चन्द्रमा की दशा में केतु की अन्तर्दशा हो, केतु लग्न से केन्द्र, लाभ, त्रिकोण में हो या बलयुत होकर 3 भाव में हो तो धन लाभ, पूर्ण सुख, पुत्र – स्त्री आदि को सुख एवं धार्मिक कृत्य में अभिरूचि होती है। अन्तर्दशा के प्रारम्भ में धनहानि और आगे सुख की प्राप्ति होती है।

चन्द्रमा की दशा में शुक्रान्तर्दशा – फल

चन्द्रस्यान्तर्गते शुक्रे केन्द्रलाभत्रिकोणगे।
स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे वापि राज्यलाभं करोति च॥
महाराजप्रसादेन वाहनाम्बरभूषणम्।
चतुष्पाज्जीवलाभः स्याद्दारपुत्रादिवर्धनम्॥
नूतनागारनिर्माणं नित्यं मिष्ठान्नभोजनम्।
सुगन्धपुष्पमाल्यादि रम्यस्त्रयारोग्यसम्पदम्॥

चन्द्रमा की महादशा में शुक्र की अन्तर्दशा हो और शुक्र लग्न से केन्द्र, लाभ, त्रिकोण, स्वोच्च राशि में या अपने क्षेत्र में स्थित हो तो राज्यलाभ एवं राजा की कृपा से वाहन, वस्त्र, आभूषण, पशुओं का

लाभ होता है, साथ ही स्त्री – पुत्रादि को सुख, नवीन गृह का निर्माण, सदैव मिष्ठान्न, सुगन्धित पुष्प माल्यादि से सुशोभित, सुन्दर स्त्री का संग एवं आरोग्य सम्पदाओं की प्राप्ति होती है।

भौम दशा में भौमान्तर्दशाफल –

> **कुजे स्वान्तर्गते विप्र लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे।**
> **लाभे वा शुभसंयुक्ते दुश्चिक्ये धनसंयुते।।**
> **लग्नाधिपेन संयुक्ते राजाऽनुग्रहवैभवम्।**
> **लक्ष्मीकटाक्षचिह्नानि नष्टराज्यार्थलाभकृत्।।**
> **पुत्रोत्सवादिसन्तोषो गृहे गोक्षीरसंकुलम्।**

मंगल की महादशा में मंगल की ही अन्तर्दशा हो और मंगल यदि लग्न से केन्द्र, त्रिकोण या लाभस्थान में हो या शुभ ग्रह से युत होकर 3,2 में हो या लग्नेश से युत हो तो राजा की अनुकम्पा से धन की प्राप्ति, लक्ष्मी की दृष्टि, नष्ट राज्य धन आदि का लाभ, पुत्रोत्पत्तिजन्य शुभ उत्सव, सन्तोष और गौ, दूध आदि की वृद्धि होती है।

राह्वन्तर्दशाफल –

> **कुजस्यान्तर्गते राहौ स्वोच्चे मूलत्रिकोणगे।**
> **शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे केन्द्रलाभत्रिकोणगे।।**
> **तत्काले राजसम्मानं गृहभूम्यादिलाभकृत्।**
> **कलत्रपुत्रलाभः स्याद् व्यवसायात्फलाधिकम्।।**
> **गंगास्नानफलावाप्ति विदेशगमनं तथा।**

मंगल की महादशा में राहु की अन्तर्दशा हो और राहु अपने उच्च में, स्वमूल त्रिकोण में शुभ ग्रह से युत या दृष्ट हो या लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभभाव में हो तो उस समय राजा से सम्मान, गृह, भूमि, स्त्री, पुत्र आदि का लाभ, अपने व्यवसाय में विशेष अर्थागम, गंगा आदि पवित्र तीर्थों में स्नान और देशान्तर का भ्रमण होता है।

जीवान्तर्दशा फल –

> **कुजस्यान्तर्गते जीवे त्रिकोणे केन्द्रगेऽपि वा।**
> **लाभे वा धनसंयुक्ते तुंगाशे स्वांशगेऽपि वा।।**
> **सत्कीर्तीं राजसम्मानं धनधान्यस्य वृद्धिकृत्।**
> **गृहे कल्याणसम्पत्तिर्दारपुत्रादिलाभकृत्।।**

मंगल की महादशा में जीव की अन्तर्दशा चल रही हो और जीव लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में हो या

लाभ, धनभाव में हो या स्वोच्च, स्वनवमांश में हो तो सुयश राजा से आदर, धन – धान्यों की वृद्धि, गृह में कल्याण, सम्पत्ति एवं स्त्री, पुत्रादि को सुखादि का लाभ होता है।

शन्ययन्तर्दशा फल –

कुजस्यान्तर्गते मन्दे स्वर्क्षे केन्द्रत्रिकोणगे।
मूलत्रिकोणकेन्द्रे वा तुंगांशे स्वांशगे सति ।।
लग्नाधिपतिना वाऽपि शुभदृष्टियुतेऽसिते।
राज्यसौख्यं यशोवृद्धिः स्वग्रामे धान्यवृद्धिकृत् ।।
पुत्रपौत्रसमायुक्तो गृहे गोधनसंग्रहः।
स्ववारे राजसम्मानं स्वमासे पुत्रवृद्धिकृत् ।।

मंगल की महादशा में शनि की अन्तर्दशा हो और शनि लग्न से केन्द्र – त्रिकोण में हो, अपनी राशि में हो या अपने मूल – त्रिकोण में हो या अपने उच्च में, अपने नवमांश में लग्नेश या शुभग्रह से युत या दृष्ट हो तो उसकी अन्तर्दशा में राजा से सुख, यश की वृद्धि, अपने ग्राम में धन – धान्य की वृद्धि, पुत्र – पौत्रादि से युत, गृह में गायों की वृद्धि, विशेषकर अपने वार एवं अपने मास में पूत्रादि की वृद्धि होती है।

बुधान्तर्दशा फल –

कुजस्यान्तर्गते सौम्ये लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे।
सत्कथाश्चाऽजपादानं धर्मबुद्धिर्महद्यशः ।।
नीतिमार्गप्रसंगश्च नित्यं मिष्ठान्नभोजनम्।
वाहनाम्बरपश्वादिराजकर्म सुखानि च ।।
कृषिकर्मफले सिद्धिर्वारणाम्बरभूषणम्।

यदि मंगल की महादशा में बुधान्तर हो और बुध यदि लग्न से केन्द्र – त्रिकोण में हो सत्संग, अजपा जप, धार्मिक बुद्धि, महान यश, नीतिमार्ग में प्रवृत्ति, सदैव मिष्ठान्नभोजन, वाहन – वस्त्र, पशु आदि चौपायों का लाभ, राजकर्म में प्रवृत्ति, सुख, कृषिकार्य से लाभ, सिद्धि, वारण एवं आभूषण की प्राप्ति होती है।

केत्वन्तर्दशा फल -

कुजस्यान्तर्गते केतौ त्रिकोणे केन्द्रगेऽपि वा।
दुश्चिक्ये लाभगे वाऽपि शुभयुक्ते शुभेक्षिते ।।
राजानुग्रहशान्तिश्च बहुसौख्यं धनागमः।

किंचित्फलं दशादौ तु भूलाभः पुत्रलाभकृत्॥

राजसंलाभकार्याणि चतुष्पाज्जीवलाभकृत्।

मंगल की महादशा में केतु की अन्तर्दशा हो तथा केतु लग्न से त्रिकोण, केन्द्र में हो या 3, 11 में शुभग्रह से युत या दृष्ट हो तो उसकी अन्तर्दशा में जातक को राजा की कृपा से सुख, धनलाभ, दशा के प्रारम्भ में स्वल्प लाभ, आगे भूलाभ, पुत्रलाभ, राज्य कार्याधिकार एवं पशुओं से लाभ होता है।

शुक्रान्तर्दशा फल –

दायेशात्षष्ठरि:फस्थे रन्ध्रे वा पापसंयुते।
कलहो दन्तरोगश्च चौरव्याघ्रादिपीडनम्॥
ज्वरातिसार कुष्ठादि दारपुत्रादिपीडनम्।
द्वितीयसप्तमस्थाने देहे व्याधिर्भविष्यति॥

दशापति से यदि शुक्र 6,8,12 भाव में हो या पापग्रह से युत हो तो उसकी अन्तर्दशा में कलह, दन्तरोग, चोर, व्याघ्रादि से पीड़ा, ज्वर, अतीसार, कुष्ठादि रोग का भय एवं स्त्री – पुत्रादि को पीड़ा होती है। यदि लग्न से 2,7 स्थान में हो तो शरीर में व्याधि, अपमान, मानसिक सन्ताप एवं धन – धान्यादि की हानि होती है।

सूर्यान्तर दशा फल –

कुजस्यान्तर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रगे।
मूलत्रिकोणलाभे वा भाग्यकर्मेशसंयुते॥
तद्भुक्तौ वाहनं कीर्तिं पुत्रलाभं च विन्दति ।
धनधान्यसमृद्धिः महद्धैर्यं राजपूज्यं महत्सुखम्॥
व्यवसायात्फलाधिक्यं विदेशे राजदर्शनम्॥

मंगल की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा चल रही हो और सूर्य अपने उच्च में, स्वराशि में, केन्द्र, मूलत्रिकोण , लाभ में, भाग्येश कर्मेश से युत हो तो वाहन लाभ, यश, पुत्रलाभ, धन – धान्य की वृद्धि, गृह में कल्याण, आरोग्य, पूर्ण धैर्य, राजा से आदर, परम सुख, व्यवसाय से अधिक लाभ एवं देशान्तर में राजदर्शन होता है।

मंगल में चन्द्रान्तर्दशा फल –

कुजस्यान्तर्गते चन्द्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रगे।
भाग्यवाहन – कर्मेश लग्नाधिप समन्विते॥
करोति विपुलं गन्धमाल्यमम्बरप्राप्तिकम्।

तडागं गोपुरादीनां पुण्यधर्मादिसंग्रहम् ।।
विवाहोत्सवकर्माणि दारपुत्रादिसौख्यकृत् ।
पितृमातृसुखावाप्तिं गृहे लक्ष्मीः कटाक्षकृत् ।।
महाराजप्रसादेन स्वेष्टसिद्धिसुखादिकम् ।
पूर्णे चन्द्रे पूर्णफलं क्षीणे स्वल्फलं भवेत् ।।

मंगल की महादशा में चन्द्रमा की अन्तर्दशा हो और चन्द्रमा अपने उच्च में, स्वराशि में या केन्द्र में स्थित हो अथवा वाहनेश, भाग्येश, कर्मेश, लग्नेश के साथ हो तो उसकी अन्तर्दशा में सुगन्ध, माल्य, वस्रादि का अधिक लाभ, तालाब, गौशालादि का निर्माण, पुण्य तथा धार्मिक कार्यो का संग्रह, गृह में विवाहादि मांगलिक कार्य, स्री – पुत्र को सुख, मातृ – पित् सौख्य एवं गृह में लक्ष्मी की दृष्टि रहती है। महाराज की प्रसन्नता से सम्पत्ति की प्राप्ति, अभीष्ट कार्य की सिद्धि एवं सुख की वृद्धि होती है। यदि चन्द्रमा पूर्ण हो तो पूर्ण फल एवं चन्द्र के क्षीण रहने पर स्वल्प फल जानना चाहिये।

राह्वन्तर्दशाफल –

राहु की दशा में राह्वन्तर्दशाफल –

कुलीरे वृश्चिके राहौ कन्यायां चापगेऽपि वा ।
तद्भुक्तौ राजसम्मानं वस्रवाहनभूषणम् ।।
व्यवसायात्फलाधिक्यं चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ।
प्रयाणं पश्चिमे भागे वाहनाम्बरलाभकृत् ।।
लग्नादुपचये राहौ शुभग्रहयुतेक्षिते ।
मित्रांशे तुंगभागांशे योगकारकसंयुते ।।
राज्यलाभं महोत्साहं राजप्रीतिं शुभावहम् ।।
करोति सुखसम्पतिं दारपुत्रादिवर्द्धनम् ।

यदि राहु कर्क , वृश्चिक, कन्या, और धनु राशि में हो तो उसकी अन्तर्दशा में राजसम्मान, वस्र, वाहन, आभूषण की प्राप्ति, व्यवसाय से अधिक लाभ और पशुओं से लाभ तथा पश्चिम दिशा में यात्रा होती है। यदि राहु लग्न से 3,6,10,11 में हो या योगकारक ग्रह के साथ हो या स्वोच्च राशि के नवमांश में हो तो राज्यलाभ , उत्सव , राजा से प्रेम, शुभकारक समय एवं स्री – पुत्रादि से सुख तथा सम्पत्ति की वृद्धि होती है।

जीवान्तर्दशा फल –

राहोरन्तर्गते जीवे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे।
स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे वापि तुंगस्वर्क्षांशगेऽपि वा।।
स्थानलाभं मनोधैर्यं शत्रुनाशं महत्सुखम्।
राजप्रीतिकरं सौख्यं जनोऽतीव समश्नुते।।
दिने दिने वृद्धिरपि सितपक्षे शशी यथा।
वाहनादिधनं भूरि गृहे गोधनसंकुलम्।।
नैर्ऋत्ये पश्चिमे भागे प्रयाणं राजदर्शनम्।
युक्तकार्यार्थसिद्धिः स्यात् स्वदेशे पुनरेष्यति।।
उपकारो ब्राह्मणानां तीर्थयात्रादिकर्मणाम्।
वाहनग्रामलाभश्च देवब्राह्मणपूजनम्।।
पुत्रोत्सवादिसन्तोषो नित्यं मिष्ठान्नभोजनम्।

यदि राहु की महादशा में गुरू की अन्तर्दशा हो और गुरू लग्न से केन्द्र – त्रिकोण में हो या स्वोच्च, स्वक्षेत्र में, अपने उच्च के नवमांश में या अपने नवमांश में हो तो उसकी अन्तर्दशा में स्थानलाभ, मन में धैर्यता, शत्रुनाश, पूर्ण सुख, राजा से मैत्री, सौख्य, शुक्ल पक्ष के चन्द्रमा के समान दिन – प्रतिदिन सुख सम्पत्ति की अभिवृद्धि, यान – वाहनों का लाभ, गृह में गोधनों का संग्रह, नैऋत्य या पश्चिम दिशा की यात्रा से राजदर्शन, उनसे वांछित कार्य की सिद्धि, फिर स्वदेश आगमन, ब्राह्मणों का उपकार, तीर्थयात्रा, पुण्य संचय, वाहन ग्राम का लाभ, देवता – ब्राह्मण पूजन, पुत्रोत्पत्ति, उत्सव, सन्तोष एवं सदैव मिष्ठान्न भोजन की प्राप्ति होती है।

शन्यन्तर्दशा फल –

राहोरन्तर्गते मन्दे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे।
स्वोच्चे मूलत्रिकोणे वा दुश्चिक्ये लाभराशिगे।।
तद्भुक्तौ नृपतेः सेवा राजप्रीतिकरो शुभा।
विवाहोत्सवकार्याणि कृत्वा पुण्यानि भूरिशः।।
आरामकरणे युक्ते तडागं कारयिष्यति।
शूद्रप्रभुवशादिष्टलाभो गोधनसंग्रहः।।
प्रयाणं पश्चिमे भागे प्रभुमूलाद्धनक्षयः।
देहालस्यं फलाल्पत्वं स्वदेशे पुनरेष्यति।।

राहु की महादशा में शनि की अन्तर्दशा हो, शनि लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, सवोच्च, स्वमूल त्रिकोण या

3,11 भाव में स्थित हो तो उसकी अन्तर्दशा में राजा की सेवा के द्वारा राजा से मैत्री, गृह में विवाहादि मांगलिक उत्सव, अनेक पुण्य संचय, बागीचा व तालाब आदि का निर्माण, शूद्र राजा के होने से अभीष्ट लाभ, पशुओं का संग्रह, पश्चिम दिशा की यात्रा से राजा द्वारा धनक्षय, शरीरिक आलस्यता के कारण अल्प लाभ और फिर स्वदेश में आगमन होता है।

बुधान्तर्दशा फल –

राहोरन्तर्गते सौम्ये भाग्ये वा स्वर्क्षगेऽपि वा।
तुंगे वा केन्द्रराशिस्थे पुत्रे वा बलगेऽपि वा ।।
राजयोगं प्रकुरूते गृहे कल्याणवर्द्धनम्।
व्यापारेण धनप्राप्तिर्विद्यावाहनमुत्तमम्।।
विवाहोत्सवकार्याणि चतुष्पाज्जीवलाभकृत्।
सौम्यमासे महत्सौख्यं स्ववारे राजदर्शनम्।।
सुगन्धपुष्पशय्यादि स्त्रीसौख्यं चातिशोभनम्।
महाराजप्रसादेन धनलाभो महद्यशः।।

राहु की महादशा में बुध की अन्तर्दशा हो और बुध अपनी राशि में, उच्च में या लग्न से केन्द्र, पंचम में बलयुत होकर स्थित हो तो उस समय राजयोगकारक होता है। गृह में कल्याण, व्यापार से धन की प्राप्ति, विद्या, उत्तम वाहन सुख, विवाह, उत्सव, पशुओं से लाभ, सौम्य मास में परम सुख, बुधवार में राजदर्शन, सुगन्ध, शय्या, स्त्री आदि का उत्तम सुख एवं राजा की कृपा से धन और यश का लाभ होता है।

केत्वन्तर्दशा फल –

राहोरन्तर्गते केतौ भ्रमणं राजतो भयम्।
वातज्वरादिरोगश्च चतुष्पाज्जीवहानिकृत्।।
अष्टमाधिपसंयुक्ते देहजाड्यं मनोव्यथा।
शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे देहसौख्यं धनागमः।।
राजसम्मानभूषाप्तिर्गृहे शुभकरो भवेत्।

राहु की महादशा में केतु का अन्तर हो तो भ्रमण, राजभय, वातज्वरादि रोगों का भय और पशुओं की हानि होती है। केतु यदि अष्टमेश से युत हो तो शरीर में पीड़ा एवं मानसिक व्यथा होती है। शुभग्रह से युत या दृष्ट रहने पर शारीरिक सुख, धनागम, राजा से आदर तथा आभूषणों की प्राप्ति होती है एवं शुभकारक समय रहता है।

शुक्रान्तर्दशा फल –

राहोरन्तर्गते शुक्रे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे।
लाभे वा बलसंयुक्ते योगप्राबल्यमादिशेत्॥
विप्रमूलाद्धनप्राप्तिर्गो महिष्यादि लाभकृत्।
पुत्रोत्सवादिसन्तोषो गृहे कल्याणसम्भवः॥
सम्मानं राजसम्मानं राज्यलाभो महत्सुखम्।

राहु की महादशा में यदि शुक्र का अन्तर हो और शुक्र लग्न से केन्द्र, त्रिकोण , लाभ में बली हो तो प्रबल योग जानना चाहिये। विप्रों द्वारा धनलाभ, गो – महिष्यादि पशुओं से लाभ, पुत्रजन्मोत्सव, सन्तोष, गृह में कल्याण, सम्मान, राजा से आदर, राज्य का लाभ एवं पूर्ण सुख प्राप्त होता है।

सूर्यान्तर दशा फल –

राहोरन्तर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रगे।
त्रिकोणे लाभगे वाऽपि तुंगाशे स्वांशगेऽपि वा॥
शुभग्रहेण सन्दृष्टे राजप्रीतिकरं शुभम्।
धन – धान्य समृद्धिश्च ह्यल्पमानं सुखावहम्॥
अल्पग्रामाधिपत्यं च स्वल्पलाभो भविष्यति।

राहु की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा हो और सूर्य स्वोच्च, स्वक्षेत्र, केन्द्र, त्रिकोण, लाभ , उच्च नवमांश या स्वांश में शुभग्रह के द्वारा अवलोकित हो तो उसकी अन्तर्दशा में राजा से मैत्री, धन – धान्यों की वृद्धि, स्वल्प सम्मान, सुख, अल्प ग्रामाधिपतित्व एवं स्वल्प लाभ होता है।

भौमान्तर्दशा फल –

राहोरन्तर्गते भौमे लग्नाल्लाभत्रिकोणगे।
केन्द्रे वा शुभसंयुक्ते स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेऽपि वा॥
नष्टराज्यधनप्राप्तिर्गृहक्षेत्राभिवृद्धिकृत्।
इष्टदेवप्रसादेन सन्तानसुखभाग् भवेत्॥
क्षिप्रभोज्यान्महात्सौख्यं भूषणाश्वाम्बरादिकृत्।

राहु की महादशा में भौम की अन्तर्दशा हो और भौम लग्न से लाभ, त्रिकोण, केन्द्र में शुभ ग्रह से युत हो या स्वोच्च, स्वक्षेत्र में हो तो उसकी अन्तर्दशा में जातक को नष्ट राज्य और धन की प्राप्ति, गृह क्षेत्र में वृद्धि, स्वेष्ट देवता की प्रसन्नता से सन्तानसुख, सुस्वादु भोजन से परम सुख तथा भूषण, अश्व, वस्त्रादि से लाभ होता है।

गुरू की महादशा में गुर्वन्तर्दशा फल –

स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे जीवे लग्नात्केन्द्र त्रिकोणगे।
अनेकराजाधीशो वा सम्पन्नो राजपूजितः॥
गोमहिष्यादिलाभश्च वस्त्रवाहनभूषणम्।
नूतनस्थाननिर्माणं हर्म्यप्रकारसंयुतम्॥
गजान्तैश्वर्यसम्पत्तिर्भाग्यकर्मफलोदयः।
ब्राह्मणप्रभुसम्मानं समानं प्रभुदर्शनम्॥
स्वप्रभोः स्वफलाधिक्यं दारपुत्रादिलाभकृत्।

गुरू की महादशा में गुरू की ही अन्तर्दशा हो और गुरू अपने उच्च, स्वराशि या लग्न से केन्द्र – त्रिकोण में स्थित हो तो उसकी अन्तर्दशा में उत्पन्न जातक अनेक राजाओं का अधिपति या सर्व सुखसम्पन्न अथवा राजा से पूजित होता है। उसे गौ – महिष्यादि पशुओं का लाभ, वस्त्र, वाहन, आभूषण की प्राप्ति, नवीन स्थान निर्माण, अट्टालिकासहित अनेक कमरों का निर्माण, हाथी, समस्त ऐश्वर्य तथा सम्पत्ति की प्राप्ति, भाग्योदय, कार्य की सफलता, ब्राह्मण और राजा की ससम्मान दर्शन, अपने स्वामी से अधिक लाभ एवं स्त्री - पुत्रादि से लाभ होता है।

शन्यन्तर्दशा फल –

जीवस्यान्तर्गते मन्दे स्वोच्चे स्वक्षेत्रमित्रभे।
लग्नात्केन्द्रत्रिकोणस्थे लाभे वा बलसंयुते॥
धनधान्यादिलाभश्च स्त्रीलाभो बहुसौख्यकृत्।
वाहनाम्बरपश्वादिभूलाभः स्थानलाभकृत्॥
पुत्रमित्रादिसौख्यं च नरवाहनयोगकृत्।
नीलवस्त्रादिलाभश्च नीलाश्वं लभते च सः॥
पश्चिमां दिशमाश्रित्य प्रयाणं राजदर्शनम्।
अनेकयानलाभं च निर्दिशेन्मन्दभुक्तिषु॥

गुरू के अन्तर्गत शन्यन्तर हो और शनि स्वोच्च, स्वगृह, मित्रराशि में हो या लग्न से केन्द्र - त्रिकोण में बलयुत होकर बैठा हो तो राज्यलाभ, पूर्ण सुख, वाहन, वस्त्र, पशु , भूमि, स्थानादि का लाभ, पुत्र मित्रादि से सुख, पालकी की सवारी का सुख, नीले वस्त्र, नीले अश्वादि का लाभ, पश्चिम दिशा का यात्रा, राजदर्शन एवं विभिन्न प्रकार के यानों का लाभ होता है।

बुधान्तर का फल –

जीवस्यान्तर्गते सौम्ये केन्द्रलाभत्रिकोणगे ।
स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे वापि दशाधिपसमन्विते ।।
अर्थलाभो देहसौख्यं राज्यलाभो महत्सुखम् ।
महाराजप्रसादेन स्वेष्टसिद्धिः सुखावहा ।।
वाहनाम्बर पश्वादि गोधनैस्सकुलं गृहम् ।

गुरू की महादशा में बुधान्तर्दशा हो और बुध यदि लग्न से केन्द्र, लाभ, त्रिकोण या अपने उच्च या स्वगृह में अथवा दशेश से युत हो तो उसकी अन्तर्दशा में जातक धनलाभ, शारीरिक सुख, राज्यलाभ, परम सुख और महाराज की प्रसन्नता से अभीष्ट सिद्धि की प्राप्ति करता है एवं वाहन, वस्त्र तथा गौ आदि पशुधनों से उसका गृह सदा युक्त रहता है ।

केत्वन्तर्दशा फल –

जीवस्यान्तर्गते केतौ शुभग्रहसमन्विते ।
अल्पसौख्यधनवाप्तिः कुत्सितान्नस्य भोजनम् ।।
परान्नं चैव श्राद्धान्नं पापमूलाद्धनानि च ।

गुरू की दशा में केतु का अन्तर हो और केतु शुभ ग्रह से युत हो तो स्वल्प सुख, अल्प धनलाभ, कदन्न, परान्न, श्राद्धान्न आदि का भोजन और पापमार्ग से धन की प्राप्ति होती है ।

शुक्रान्तर्दशा फल –

जीवस्यान्तर्गते शुक्रे भाग्यकेन्द्रेशसंयुते ।
लाभे वा सुतराशिस्थे स्वक्षेत्रे शुभसंयुते ।।
नरवाहनयोगश्च गजाश्वाम्बरसंयुतः ।
महाराजप्रसादेन लाभाधिक्यं महत्सुखम् ।।
पूर्वस्यां दिशि विप्रेन्द्र प्रयाणं धनलाभदम् ।
कल्याणं च महाप्रीतिः पितृमातृसुखावहा ।।
देवतागुरूभक्तिश्च अन्नदानं महत्तथा ।
तडागगोपुरादीनि दिशेत् पुण्यानि भूरिशः ।।

गुरू की महादशा में शुक्रान्तर हो और शुक्र लग्न से भाग्येश या केन्द्रेश से युत हो या 11, 5 में हो अथवा स्वक्षेत्र में शुभग्रह से युत हो तो उसकी अन्तर्दशा में पालकी, हाथी, अश्व आदि सवारी का सुख, वस्त्रप्राप्ति, राजा की प्रसन्नता से अधिक लाभ और पूर्ण सुख, पूर्व दिशा की यात्रा से धनलाभ, गृह में कल्याण, सबसे मैत्री, माता – पिता से सुख, देवता और गुरू में भक्ति, अन्नदान,

जलाशय, गौशाला- निर्माण आदि अनेक पुण्यदायक कार्य सम्पन्न होते है।

सूर्यान्तर्दशाफल –

जीवस्यान्तर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेऽपि वा।
केन्द्रे वाऽथ त्रिकोणे वा दुश्चिक्ये लाभगेऽपि वा ।।
धने वा बलसंयुक्ते दायेशाद्वा तथैव च।
तत्काले धनलाभः स्याद्राजसम्मानवैभवम् ।।
वाहनाम्बरपश्वादिभूषणं पुत्रसम्भवः।
मित्रप्रभुवशादिष्टं सर्वकार्ये शुभावहम् ।।

गुरू की महादशा में सूर्यान्तर्दशा हो और सूर्य स्वोच्च में, स्वगृह में, केन्द्र, त्रिकोण में या 3,11,2 में बलयुक्त होकर स्थित हो तो उस समय धनलाभ, राजसम्मान, ऐश्वर्य, वाहन, वस्त्र, पशु, भूषण, पुत्रप्राप्ति की सम्भावना, राजा की मैत्री से अभीष्ट सिद्धि एवं सभी कार्यों में सन्तोषप्रद प्रगति होती है।

चन्द्रान्तर्दशा फल –

जीवस्यान्तर्गते चन्द्रे केन्द्रे लाभत्रिकोणगे।
स्वोच्चे वा स्वर्क्षराशिस्थे पूर्णे चैव बलैर्युते ।।
दायेशाच्छुभराशिस्थे राजसम्मानवैभवम्।
दारपुत्रादिसौख्यं च क्षीराणां भोजनं तथा ।।
सत्कर्म च तथा कीर्तिः पुत्रपौत्रादिवृद्धिदा।
महाराजप्रसादेन सर्वसौख्यं धनागमः ।।
अनेकजनसौख्यं च दानधर्मादिसंग्रहः।

गुरू की महादशा में चन्द्रमा की अन्तर्दशा हो और चन्द्रमा केन्द्र, लाभ, त्रिकोण, स्वोच्च या अपनी राशि में पूर्ण बली होकर स्थित हो तो और दशापति से शुभ स्थान में हो तो उसकी अन्तर्दशा में जातक को राजसम्मान, ऐश्वर्य, स्त्री – पुत्रादि से सुख, दुग्धनिर्मित सुभोजन, सत्कर्म, यश, पुत्र – पौत्रादिकों वृद्धि, महाराज की प्रसन्नता से सभी सुखों की प्राप्ति, धनलाभ और दान – धर्मादि सुपुण्यों का संग्रह होता है।

भौमान्तर्दशा फल –

जीवस्यान्तर्गते भौमे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ।
स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे वापि तुंगांशे स्वांशगेऽपि वा ।।

विद्याविवाहकार्याणि ग्रामभूम्यादिलाभकृत्।
जनसामर्थ्यमाप्नोति सर्वकार्यार्थसिद्धिदम्॥

गुरू के अन्तर्गत भौम हो और भौम लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, स्वोच्च, स्वराशि में, उच्च नवमांश या स्वनवमांश हो तो गृह में शास्त्रचर्चा, विवाहादि शुभकार्य, ग्राम – भूमि का लाभ, अपनी प्रतिभा की वृद्धि और सभी कार्यों में सफलता प्राप्त होती है।

राह्वान्तर्दशा फल –

जीवस्यान्तर्गते राहौ स्वोच्चे वा केन्द्रगेऽपि वा।
मूलत्रिकोणे भाग्ये च केन्द्राधिपसमन्विते॥
शुभयुक्तेक्षिते वापि योगप्रीतिं समादिशेत्।
भुक्त्यादौ पंचमासांश्च धनधान्यादिकं लभेत्॥
देशग्रामाधिकारं च यवनप्रभुदर्शनम्।
गृहे कल्याणसम्पत्तिर्बहुसेनाधिपत्यकम्॥
दूरयात्राधिगमनं पुण्यधर्मादिसंग्रहः॥
सेतुस्नानफलावाप्तिरिष्टसिद्धिः सुखावहा।

गुरू की महादशा में राहु की अन्तर्दशा हो और राहु यदि अपने उच्च, केन्द्र, अपने मूल – त्रिकोण, भाग्य स्थान में अथवा केन्द्रेश से युत हो और शुभ ग्रह से युत या दृष्ट हो तो यौगिक क्रिया में प्रेम, आरम्भ से पॉच मास तक धन – धान्यादि का लाभ, स्वदेश या ग्राम का अधिकारी, यवनराज का दर्शन, गृह में कल्याण, सम्पत्तिबाहुल्य , सेनानायक, दूरयात्रा, दूरगमन, पुण्यादि धार्मिक कृत्यों का संग्रह और सेतु स्नानादि का लाभ तथा सुख होता है।

शन्यन्तर्दशाफल -

शनि में शनि की अन्तर्दशा फल –

मूलत्रिकोणे स्वर्क्षे वा तुलायामुच्चगेऽपि वा।
केन्द्रत्रिकोणलाभे वा राजयोगादिसंयुते॥
राज्यलाभो महत्सौख्यं दारपुत्रादिवर्धनम्।
वाहनत्रयसंयुक्तं गजाश्वाम्बरसंकुलम्॥
महाराजप्रसादेन सेनापत्यादिलाभकृत्।
चतुष्पाज्जीवलाभः स्याद् ग्रामभूम्यादिलाभकृत्॥

शनि की महादशा में शनि की अन्तर्दशा हो और शनि अपने मूलत्रिकोण, स्वराशि, तुला या स्वोच्च

नवमांश या लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ में या राजयोगकारक हो तो राज्यलाभ, परमसुख, स्त्री पुत्रादि की वृद्धि, वाहन की प्राप्ति, वस्त्रलाभ, राजा की प्रसन्नता से सेनानायक का अधिकार प्राप्त एव चं पशु, ग्राम, भूमि आदि का लाभ होता है।

बुधान्तर्दशा फल –

मन्दस्यान्तर्गते सौम्ये त्रिकोणे केन्द्रगेऽपि वा।
सम्मानं च यशः कीर्तिं विद्यालाभं धनागमम्॥
स्वदेशे सुखमाप्नोति वाहनादिफलैर्युतम्।
यज्ञादिकर्मसिद्धिश्च राजयोगादिसम्भवम्॥
देहसौख्यं हृदुत्साहं गृहे कल्याणसम्भवम्।
सेतुस्नानफलावाप्तिस्तीर्थयात्रादिकर्मणा॥
वाणिज्याद्धनलाभश्च पुराणश्रवणादिकम्।
अन्नदानफलं चैव नित्यं मिष्ठान्नभोजनम्॥

शनि की महादशा में बुधान्तर्दशा हो और बुध यदि केन्द्र - त्रिकोण में हो तो समाज में सम्मान, यश, विद्या, धन का लाभ एवं स्वदेश में ही वाहनादि का सुख प्राप्त होता है। यज्ञ सम्बन्धी कार्यों की सिद्धि, राजयोग, शारीरिक सुख, हृदय में उत्साह, गृह में कल्याण, सेतुस्नानादि तीर्थयात्रा, व्यापार से धन का लाभ, पुराण – श्रवण, अन्नदान एवं सदैव मिष्ठान्न से समन्वित भोजन की प्राप्ति होती है।

केत्वन्तर्दशा फल –

मन्दस्यान्तर्गते केतौ शुभदृष्टियुतेक्षिते ।
स्वोच्चे वा शुभराशिस्थे योगकारकसंयुते॥
केन्द्रकोणगते वापि स्थानभ्रंशो महद्भयम्।
दरिद्रबन्धनं भीतिः पुत्रदारादिनाशनम्॥
स्वप्रभोश्च महत्कष्टं विदेशगमनं तथा।
लग्नाधिपेन संयुक्ते आदौ सौख्यं दैवतदर्शनम्॥
स्वप्रभोश्च महत्कष्टं विदेशगमनं तथा।
लग्नाधिपेन संयुक्ते आदौ सौख्यं धनागमः॥
गंगादिसर्वतीर्थेषु स्नानं दैवतदर्शनम्।

शनि की महादशा में केत्वन्तर हो और केतु स्वोच्च में, स्वराशि में या योगकारक ग्रह हो और

शुभ ग्रह से युत या दृष्ट हो, केन्द्र, त्रिकोण में हो तो उसकी अन्तर्दशा में स्थान का नाश, भय, दरिद्रता, बन्धन, पुत्र – स्त्री आदि का नाश, अपने स्वामी को कष्ट और विदेश गमन आदि अशुभ फल प्राप्त होता है। यदि लग्नेश से युत हो तो अन्तर्दशा के आरम्भ में सुख, धनागम, गंगादि तीर्थों में स्नान और देवता का दर्शन होता है।

शुक्रान्तर्दशा फल –

मन्दस्यान्तर्गते शुक्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेऽपि वा।
केन्द्रे वा शुभसंयुक्ते त्रिकोणे लाभगेऽपि वा॥
दारपुत्रधनप्राप्तिर्देहारोग्यं महोत्सवः।
गृहे कल्याणसम्पत्ती राज्यलाभं महत्सुखम्॥
महाराजप्रसादेन हीष्टसिद्धिः सुखावहा।
सम्मानं प्रभुसम्मानं प्रियवस्रादिलाभकृत्॥
द्वीपान्तराद्वस्रलाभः श्वेताश्वो महिषी तथा।
गुरूचारवशाद् भाग्यं सौख्यं च धनसम्पदः॥

शनि की महादशा में शुक्रान्तर हो, शुक्र अपने उच्च राशि में, स्वक्षेत्र में, लग्न से केन्द्र - त्रिकोण में या लाभ में शुभ ग्रह से युत हो तो स्त्री - पुत्र – धन की प्राप्ति, आरोग्य, उत्सव, गृह में कल्याण, सम्पत्ति, राज्यलाभ, परम सुख, राजा की प्रसन्नता से अभीष्ट की सिद्धि, सम्मान, स्वामी की प्रसन्नता, इच्छित वस्रादि का लाभ, देशान्तर से वस्रलाभ, श्वेत अश्व एवं महिषी का लाभ होता है, साथ ही उस समय यदि गुरू अनुकूल हो तो भाग्योदय, सुख एवं धन – सम्पत्ति की प्राप्ति होती है और शनि गोचर से अनुकूल हो तो राजयोग या यौगिक क्रिया की सिद्धि होती है।

सूर्यान्तर्दशा फल –

मन्दस्यान्तर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेऽपि वा।
भाग्याधिपेन संयुक्ते केन्द्रलाभत्रिकोणगे॥
शुभदृष्टियुते वापि स्वप्रभोश्च महत्सुखम्।
गृहे कल्याणसम्पत्तिः पुत्रादिसुखवर्द्धनम्॥
वाहनाम्बर पश्वादि गोक्षीरैस्संकुलं गृहम्।

शनि की महादशा में सूर्यान्तर हो और सूर्य अपने उच्च या स्वक्षेत्र में या भाग्येश से युत होकर केन्द्र, त्रिकोण, लाभभाव में शुभग्रह से युत या दृष्ट होकर स्थित हो तो उसकी अन्तर्दशा में अपने स्वामी से पूर्ण सुख, गृह में कल्याण, सम्पत्ति, पुत्रादि से सुख, वाहन, वस्र आदि का लाभ एवं पशु,

गोदुग्ध आदि से गृह सदा परिपूर्ण रहता है।

चन्द्रान्तर्दशा फल –

मन्दस्यान्तर्गते चन्द्रे जीवदृष्टिसमन्विते।
स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रस्थे त्रिकोणे लाभगेऽपि वा।।
पूर्णे शुभग्रहैर्युक्ते राजप्रीतिसमागमः।
महाराजप्रसादेन वाहनाम्बरभूषणम्।।
सौभाग्यं सुखवृद्धिं च भृत्यानां परिपालनम्।
पितृमातृकुले सौख्यं पशुवृद्धिः सुखावहा।।

शनि के अन्तर्गत चन्द्रान्तर हो और स्वोच्च में, स्वगृह, केन्द्र, त्रिकोण, लाभभाव में पूर्ण चन्द्र स्थित हो और गुरू की दृष्टि हो या शुभ ग्रह से युत दृष्ट हो तो राजा से मैत्री, राजा की प्रसन्नता से वाहन, वस्त्र, आभूषण का लाभ, सुख और सौभाग्य की वृद्धि, भृत्यों का पालन, मातृ – पितृ कुल में सुख एवं पशुओं की वृद्धि होती है।

भौमान्तर फल –

मन्दस्यान्तर्गते भौमे केन्द्रलाभत्रिकोणगे ।
तुंगे स्वक्षेत्रगे वापि दशाधिपसमन्विते ।।
लग्नाधिपेन संयुक्ते आदौ सौख्यं धनागमः।
राजप्रीतिकरं सौख्यं वाहनाम्बरभूषणम्।।
सेनापत्यं नृपप्रीतिः कृषिगोधान्यसम्पदः।
नूतनस्थाननिर्माणं भ्रातृवर्गेष्टसौख्यकृत्।।

शनि की महादशा मे मंगल का अन्तर हो और मंगल स्वोच्च, स्वक्षेत्र या दशापति से युत या लग्नेश से युत या लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभभाव में स्थित हो तो दशारम्भ में सुख, धनागम, राजा से मैत्री, वाहन, वस्त्र, आभूषण, सेनानायक, खेती, पशुओं की वृद्धि, नवीन गृहनिर्माण एवं अपने बन्धुओं से सुख प्राप्त होता है।

राह्वान्तर फल –

मन्दस्यान्तर्गते राहौ कलहश्च मनोव्यथा।
देहपीडा मनस्तापः पुत्रद्वेषो रूजोभयम्।।
अर्थव्ययो राजभयं स्वजनादिविरोधिता।
विदेशगमनं चैव गृहक्षेत्रादिनाशनम्।।

शनि की महादशा में राहु की अन्तर्दशा हो तो उस समय जातक को मानसिक रोग, कलह, शारीरिक पीड़ा, मन में सन्तोष, पुत्र से वैर – भाव, रोग भय, अनावश्यक व्यय, राजभय, आत्मीय जनों से विरोध, विदेश भ्रमण एवं गृह और खेती में हानि होती है।

गुर्वन्तर्दशा फल –

मन्दस्यान्तर्गते जीवे केन्द्रे लाभत्रिकोणगे ।
लग्नाधिपेन संयुक्ते स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेऽपि वा ।।
सर्वकार्यार्थसिद्धिः स्याच्छोभनं भवति ध्रुवम् ।
महाराजप्रसादेन धन - वाहन भूषणम् ।।
सम्मानं प्रभुसम्मानं प्रियवस्रार्थलाभकृत् ।
देवतागुरूभक्तिश्च विद्वज्जनसमागमः ।।
दारपुत्रादिलाभश्च पुत्रकल्यणवैभवम् ।

शनि की महादशा में गुरू का अन्तर हो और गुरू यदि लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में या लाभ, या लग्नाधिप से युत होकर अपने उच्च या स्वक्षेत्र में हो तो धनाप्ति और सभी कार्यो की सिद्धि और सर्वत्र मंगल होता है। राजा की प्रसन्नता से धन, वाहन, भूषण, सम्मान, अभीष्ट वस्र, अर्थादि का लाभ, देवता और ब्राह्मणों में भक्ति, विद्वानों का आगमन, स्त्री - पुत्रादि से लाभ और वैभव की प्राप्ति होती है।

बुधान्तर्दशाफल –

बुध में बुधान्तर का फल –

बुध की महादशा हो और बुध की ही अन्तर्दशा चल रही हो, बुध अपने उच्चादि शुभ स्थान में स्थित हो तो उस समय जातक को मोती – प्रवालादि रत्नों का लाभ, ज्ञान, कर्म, सुख की प्राप्ति, विद्या, यश नवीन राजाओं का दर्शन, ऐश्वर्य एवं स्त्री, पुत्र, पितृ, मातृ आदि से परम सुख की प्राप्ति होती है। यदि बुध अपने नीच में हो या अस्त हो अथवा अशुभ 6,8,12 भाव में स्थित हो या पापयुत या दृष्ट हो तो धन – धान्य पशुओं का नाश, अपने बन्धु - बान्धवों से विरोध, शूलादि रोग एवं राजकार्य से व्याकुलता होती है

बुध में केत्वन्तर्दशा फल –

बुध की महादशा में केत्वन्तर हो, केतु लग्न से केन्द्र - त्रिकोण में शुभ ग्रह से युत या दृष्ट हो या लग्नेश के साथ हो या योगकारक ग्रह से सम्बन्ध रखता हो या दशापति से केन्द्र – त्रिकोण – लाभ में स्थित हो तो उस समय शारीरिक सुख, अध्ययन, स्वबन्धुओं से प्रेम, पशुओं से लाभ, परिश्रम से

धनागम, विद्या, कीर्ति, सम्मान, राजदर्शन, भोजन एवं वस्रसुख की प्राप्ति होती है। इस प्रकार का फल दशा के आरम्भ और मध्य में जानना चाहिये।

बुध में शुक्रान्तर का फल –

बुध की महादशा में शुक्रान्तर हो, शुक्र लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ में हो तो सत्कथा – श्रवण एवं पुण्य कर्म धर्मादि शुभ कार्य का संग्रह होता है, साथ ही मित्र तथा राजा के द्वारा लक्षित कार्य की सम्पन्नता, खेती तथा सुख की प्राप्ति होती है। यदि दशेश से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ में हो तो उस समय में धन, राज्य, सम्पत्ति का लाभ, वापी, कूप, जलाशयादि का निर्माण, दान धर्मादि पुण्यों का संग्रह, अपने व्यवसाय से अधिक लाभ एवं धन – धान्य की समृद्धि होती है।

बुध में सूर्यान्तर का फल -

सौम्यस्यान्तर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रगे।
त्रिकोणे धनलाभे तु तुंगांशे स्वांशगेऽपि वा ॥
राजप्रसादसौभाग्यं मित्रप्रभुवशात्सुखम्।
भूम्यात्मजेन संदृष्टे आदौ भूलाभमादिशेत्॥
लग्नाधिपेन संदृष्टे बहुसौख्यं धनागमम्।
ग्रामभूम्यादिलाभं च भोजनाम्बरसौख्यकृत्॥

बुध की महादशा में सूर्यान्तर हो, सूर्य स्वोच्च में, स्वक्षेत्र, केन्द्र, त्रिकोण, धन, लाभ या अपने उच्च नवमांश में स्थित हो तो राजा के अनुग्रह से भाग्योदय एवं मित्र या अपने स्वामी से सुख होता है। यदि उस पर भौम की दृष्टि हो तो दशा के आरम्भ में भूमिलाभ, लग्नेश से दृष्ट हो तो धनागम, अधिक सुख, ग्राम – भूमि – लाभ एवं भोजन, वस्र, सौख्यादि की प्राप्ति होती है।

बुध में चन्द्रान्तर फल –

बुध की महादशा में चन्द्रान्तर हो और चन्द्र लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, स्वोच्च, स्वक्षेत्र में गुरू की दृष्टि हो या स्वत: योगकारक हो या योगकारक ग्रह के साथ हो तो योग की प्रबलता होती है। उस समय स्त्री, पुत्र, वस्र, वाहन एवं भूषण की प्राप्ति होती है।

बुध में भौमान्तर्दशा फल –

बुध में भौम का अन्तर हो, भौम लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, स्वोच्च, स्वक्षेत्र में या लग्नेश से युत हो तो राजा की कृपा से गृह में शान्ति एवं कल्याण होता है, साथ ही लक्ष्मी की गृह पर दृष्टि, नष्ट राज्य की प्राप्ति, पुत्रजन्म, उत्सव, सन्तोष, पशुओं की वृद्धि, गृह, क्षेत्र, हाथी, अश्व आदि की प्राप्ति, राजा से मैत्री एवं स्त्रीजन्य परम सुख की प्राप्ति होती है।

राह्वन्तर्दशा फल -

बुध की महादशा में राहु का अन्तर हो, राहु लग्न से केन्द्र, लाभ, त्रिकोण में कर्क, कुम्भ, कन्या, वृष राशि का हो तो राजा से सम्मान, यश, धन, पुण्यतीर्थ – यात्रा, स्थान – लाभ, देवदर्शन, अभीष्ट सिद्धि, मान, वस्त्र आदि का लाभ होता है। दशा के प्रारम्भ में शारीरिक कष्ट एवं दशान्त में सुख प्राप्त होता है।

गुर्वन्तर्दशा फल –

बुध की महादशा में गुरू का अन्तर हो या गुरू लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, स्वोच्च, स्वराशि में या लाभ, धनभाव में हो तो शारीरिक सुख, धनलाभ, राजा से मैत्री, गृह में विवाहादि मांगलिक कार्य, उत्सव, मिष्ठान्न भोजन, पशुओं का लाभ, पुराण – श्रवणादि धार्मिक कथा वार्ता, देवता और गुरू में भक्ति, दान, धर्म, याज्ञिक कार्य में प्रवृत्ति और भगवान शंकर की पूजा से स्वान्त सुख होता है।

बुध की महादशा में शन्यन्तर्दशा फल –

बुध की महादशा में शनि का अन्तर हो, शनि स्वोच्च में, स्वक्षेत्र में या लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ में हो तो गृह में कल्याण की वृद्धि, राज्यलाभ, मन में उत्साह, पशु – वृद्धि, स्थानप्राप्ति, तीर्थवासादि शुभ कार्य होते है।

केत्वन्तर्दशाफल –

केतु की दशा में केत्वन्तर्दशा फल –

केतु की महादशा में केतु की ही अन्तर्दशा हो और केतु लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ में हो या लग्नेश से युत हो, भाग्येश, कर्मेश, चतुर्थेश से उसका सम्बन्ध हो तो उसकी अन्तर्दशा में धन – धान्यादि का लाभ, पशुओं की वृद्धि, पुत्र – स्त्री से सुख, राजा से मैत्री, परन्तु मानसिक रोग, ग्राम, भूमि का लाभ, गृह एवं गौओं से शोभित होता है।

शुक्रान्तर्दशा फल –

केतु की महादशा में शुक्रान्तर्दशा हो और शुक्र अपने उच्च में या स्वक्षेत्र में हो या लग्न से केन्द्र – त्रिकोण लाभस्थान में हो अथवा दशमेश से युत हो तो राजा से प्रेम, सौभाग्य, धन, वस्त्रादि का लाभ, भाग्येश, कर्मेश से युत हो तो राजा से प्रेम, सौभाग्य, धन, वस्त्रादि का लाभ, नष्ट राज्य की प्राप्ति, सुख, उत्तम वाहन, सेतु स्नान, देवदर्शन एवं राजा की अनुकम्पा से ग्राम, भूमि आदि का लाभ होता है।

सूर्यान्तर फल –

केतु की महादशा में सूर्यान्तर हो और सूर्य अपने उच्च में, स्वक्षेत्र में, केन्द्र – त्रिकोण- लाभ में

शुभग्रह से युत या अवलोकित हो तो धन – धान्य का लाभ, राजा की कृपा से ऐश्वर्य की प्राप्ति, विभिन्न प्रकार के शुभ कार्यों का सम्पादन, सुख और अभीष्ट की सिद्धि होती है।

चन्द्रान्तर्दशा फल –

केतु की महादशा में चन्द्रान्तर्दशा हो और चन्द्र अपने उच्च में या स्वराशि में या लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ, धन में शुभग्रह युत हो और यदि पूर्ण चन्द्र हो तो राजा से मैत्री, उत्साह, परमसुख, राजा की प्रसन्नता से गृह – भूमि आदि का लाभ, भोजन, वस्त्र, पशु आदि से लाभ, अपने व्यवसाय में अधिक लाभ, अश्व, वाहन, वस्त्र, आभरण, आभूषणादि की प्राप्ति, देवमन्दिर, तालाब आदि जलाशय निर्माण, दान – धर्मादि पुण्य कार्यों का संग्रह, पुत्र – स्त्री आदि से सुख की प्राप्ति होती है, पूर्ण चन्द्र न रहने पर सामान्य फल प्राप्त होता है ।

भौमान्तर फल –

केतु की महादशा में मंगल की अन्तर्दशा हो और मंगल लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में हो या अपने उच्च राशि या स्वक्षेत्र में शुभ ग्रह से युत या दृष्ट हो तो दशा के आदि में शुभ होता है, साथ ही ग्राम, भूमि आदि का लाभ, धन – धान्य की वृद्धि, पशुओं से लाभ, गृह, बागीचा, क्षेत्र का लाभ एवं राजा की कृपा से ऐश्वर्य की प्राप्ति भी होती है। यदि भाग्येश या कर्मेश से सम्बन्ध रखता हो तो अवश्य ही भूमि और सुख की प्राप्ति होती है।

राह्वन्तर्दशा फल –

केतु की महादशा में राहु की अन्तर्दशा चल रही हो और राहु अपने उच्च या स्वराशि, लग्न से केन्द्र - त्रिकोण, लाभ, 3,2 भाव में स्थित हो तो उस समय में धनलाभ, भ्रमण, यवनराज से धन – धान्य सुख की प्राप्ति, पशुओं से लाभ, ग्राम, भूमि आदि का लाभ एवं दशा के आरम्भ में क्लेश तथा मध्य और अन्त में सुख की प्राप्ति होती है।

गुरू अन्तर्दशा फल –

केतु की महादशा में गुरू की अन्तर्दशा हो, गुरू अपने उच्च में या स्वक्षेत्र में, लग्न से केन्द्र – त्रिकोण, लाभभाव में हो या लग्नेश से युत हो कर्मेश, भाग्येश से युत हो तो धन – धान्य- अर्थ – सम्पत्ति की वृद्धि, राजा से मैत्री, उत्साह, अश्व, नरवाहन, आदि की प्राप्ति, गृह में कल्याण, सम्पत्ति, पुत्रलाभ, उत्सव, तीर्थ यात्रा, सत्कार्य, सुख, अपने अभीष्ट देव की कृपा से विजय, कार्य – सिद्धि, राजा से वार्तालाप एवं नवीन राजा का दर्शन होता है।

शन्यन्र्तशा फल –

केतु की महादशा में शनि की अन्तर्दशा हो तो शरीर में पीड़ा, बन्धुओं में क्लेश, मानसिक ताप,

किन्तु पशुओं से लाभ, राजा के कार्यकलाप से धननाश, भय, स्थान – नाश, प्रवास, मार्ग में चौरभय होता है। यदि 8,12 में हो तो आलस्य एवं आत्मबल की कमी होती है।

बुध अन्तर्दशा फल –

केतु के अन्तर्गत बुध की अन्तर्दश हो और बुध लग्न से केन्द्र – त्रिकोण में या स्वोच्च, स्वगृह में हो तो राज्य का लाभ, परम सुख, सत्कथा – श्रवण, दानादि धार्मिक कार्य, सुख, भूलाभ, पुत्रप्राप्ति, शुभ गोष्ठी, धनागम, विना आयास से धर्म और विवाह, गृह में शुभ उत्सव एवं वस्त्र, आभरण, भूषण की प्राप्ति होती है

शुक्रान्तर्दशाफल –

शुक्र दशा में शुक्रान्तर फल –

शुक्र की महादशा में शुक्र की अन्तर्दश हो, शुक्र लग्न से केन्द्र – त्रिकोण, लाभ में बलयुत हो तो उसकी अन्तर्दशा में शुभ फल प्राप्त होता है। ब्राह्मण द्वारा धन, गाय, महिष्यादि पशु लाभ, पुत्रोत्सव, गृह में सन्तोष, कल्याण, राजा से आदर, राज्यलाभ एवं परम सुख की प्राप्ति होती है।

सूर्यान्तर फल –

शुक्र के अन्तर्गत सूर्यान्तर हो एवं सूर्य यदि अपने उच्च, नीच से भिन्न स्थान में स्थित हो तो सन्ताप, राजविग्रह एवं दायादों से कलह होता है।

चन्द्रान्तर फल –

शुक्र की महादशा में चन्द्रमा की अन्तर्दशा हो, चन्द्रमा अपने उच्च या स्वक्षेत्र या लग्न से केन्द्र, लाभ, त्रिकोण में हो या भाग्येश से युत हो, शुभ ग्रहयुत पूर्ण चन्द्रमा हो तो राजा की कृपा से गृह में वाहन, सुख, हाथी, ऐश्वर्य आदि की प्राप्ति होती है और महानदी – स्नान, पुण्य कर्म तथा देवता ब्राह्मण में श्रद्धा होती है।

भौमान्तर फल –

शुक्र के अन्तर्गत भौम का अन्तर हो और मंगल लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ भाव में हो या अपने उच्च, स्वराशि में हो और बलयुत हो या लग्नेश, भाग्येश, कर्मेश में से किसी से युत हो तो राज्यलाभ, सम्पत्ति, वस्त्र, आभूषण, भूमि आदि अभीष्ट की सिद्धि और सुख होता है।

राह्वान्तर फल –

शुक्र के अन्तर्गत राहु की अन्तर्दशा हो या राहु लग्न से केन्द्र, लाभ, त्रिकोण में या अपने उच्च में शुभग्रह द्वारा अवलोकित हो या योगकारक ग्रह से युत हो तो उस समय में अधिक सुख, धन – धान्यादि का लाभ, इष्ट – मित्रों का समागम, नूतन गृह का निर्माण, यात्रा से अभीष्ट की प्राप्ति एवं

पशु और भूमि का लाभ होता है।

जीवान्तर्दशा फल –

शुक्र के अन्तर्गत गुरू की अन्तर्दशा हो, गुरू यदि अपने उच्च में, स्वक्षेत्र में, लग्न या दशेश से केन्द्र, 9,5 भाव में हो तो नष्ट राज्य की प्राप्ति, अभीष्ट अर्थ – वस्त्र – सम्पत्ति – मित्र तथा राजा से सम्मान और धन – धान्य की प्राप्ति होती है ।

शन्यन्तर्दशा फल –

शुक्र की महादशा में शन्यन्तर हो, शनि अपने उच्च या परमोच्च में हो, स्वराशि, उच्च नवमांश या स्वनवमांश में, लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में हो तो उसकी अन्तर्दशा में अधिक सुख, इष्ट मित्रों का समागम, राजद्वार में सम्मान, कन्याजन्म, पुण्य – तीर्थ – स्नान, दान धर्मादि पुण्यसंग्रह, एवं राजा से अधिकार प्राप्त होता है। यदि गुरू अपने नीच राशि में हो तो क्लेश होता है।

बुधान्तर दशा फल –

शुक्र के अन्तर्गत बुधान्तर हो, बुध अपने उच्च में हो, स्वगृह में या लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ भाव में स्थित हो तो राजा से प्रेम, शुभ, भाग्योदय, पुत्रलाभ, न्यायपूर्वक, धनागम, पौराणिक कथा वार्ता – श्रवण, रसवेत्ताओं का संग, इष्ट मित्रों का आगमन, उनके द्वारा गृह सुशोभित, अपने स्वामी से सुख और सदैव मिष्ठान्न भोजन की प्राप्ति होती है।

केत्वन्तर्दशा फल –

शुक्र की महादशा में केतु का अन्तर हो और केतु यदि अपने उच्च में या स्वराशि में हो या योगकारक ग्रह से सम्बन्ध रखता हो और स्थानबल से युत हो तो दशा के आरम्भ में ही शुभ फल, सदैव मिष्ठान्न भोजन, स्व -व्यवसाय से अधिक लाभ एवं गौ, भैंस आदि पशुओं की वृद्धि होती है।

4.5 सारांशः-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि दशापति के साथ जितने ग्रह रहें उनमें सर्वाधिक बलवान ग्रह दशापति के आयुर्दाय के आधा का अन्तर्दशाधिप होता है। इसके पश्चात् नवम – पंचम इन स्थानों के ग्रहों में जो बलवान हो वह दशापति के आयुर्दाय के तृतीयांश का अन्तर्दशाधिप होता है। इसके बाद दशाधीश से सप्तम स्थित ग्रहों में जो बलवान हो वह दशाधीश के आयुर्दाय के तृतीयांश का अन्तर्दशाधिप होता है। इसी प्रकार चतुर्थ – अष्टम में स्थित ग्रहों में बलवान ग्रह चतुर्थांश का अधिप होता है। इसी प्रकार लग्न सहित सभी ग्रह अपनी – अपनी अन्तर्दशा में अपना – अपना फल देते है। यदि एक स्थल में अनेक ग्रह हों तो उनमें जो सबसे अधिक बलवान हो वही अपने अंश का पाचक होता है, इससे यह स्पष्ट होता है कि जहॉ पर

दशापति से प्रथम – चतुर्थ – पंचम – सप्तम – अष्टम और नवम स्थानों में कोई ग्रह न रहे तो उस ग्रह की दशा के अन्तर्गत अन्य ग्रह की अन्तर्दशा नहीं होती है, परन्तु वही ग्रह अन्तर्दशाधिप भी हो जाता है।

4.6 पारिभाषिक शब्दावली

विंशोत्तरी महादशा – 120 वर्षों की

अष्टोत्त्री दशा – 108 वर्षों की

अन्तर्दशा - महादशा के अन्तर्गत सूक्ष्म दशा

धनागम – धन का आना

ग्रहयुत – ग्रह के साथ

स्वक्षेत्र – अपना क्षेत्र

केन्द्र - 1,4,7,10

त्रिकोण - 5,9

4.8 बोधप्रश्नों के उत्तर

1. क
2. घ
3. क
4. ग

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वृहत्पराशरहोराशास्त्र – चौखम्भा प्रकाशन

ज्योतिष सर्वस्व - चौखम्भा प्रकाशन

वृहज्जातक – चौखम्भा प्रकाशन

सचित्र ज्योतिष शिक्षा - चौखम्भा प्रकाशन

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. अन्तर्दशा क्या है। अन्तर्दशा का साधन की विधि बतलाते हुए विस्तार से उसका उल्लेख कीजिये।
2. अन्तर्दशा में सूर्यादि ग्रहों का होने वाली शुभाशुभ फल का विवेचन कीजिये।

इकाई – 5 प्रत्यन्तर्दशा फल

इकाई की संरचना

5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई दशाफल विचार के पंचम इकाई **'प्रत्यन्तर्दशा दशाफल'** शीर्षक से संबंधित है। जातक के सम्पूर्ण जीवन का विचार उसके जन्म समय में जन्मांग चक्र में स्थित ग्रहों के आधार पर ही किया जाता है। किसी जातक के जीवन में कब – कब और क्या – क्या होने की संभावना होगी, इसका निर्णय दशाओं के ज्ञान के आधार पर किया जाता है। प्रत्यन्तर्दशा उनमें से एक दशा है।

जिस प्रकार एक महादशा में सभी ग्रहों की अन्तर्दशायें होती है, उसी प्रकार अन्तर्दशा में भी उसी अनुपात से प्रत्येक ग्रह की प्रत्यन्तर्दशा या उपदशा भी होती है।

इससे पूर्व की इकाईयों में आपने विंशोत्तरी दशाफल, अष्टोत्तरी दशाफल, योगिनी दशाफल, अन्तर्दशा फल का विस्तृत अध्ययन कर लिया हैं। यहाँ हम इस इकाई में **प्रत्यन्तर्दशा साधन** एवं उसके फलादेश सम्बन्धित विषयों का अध्ययन विस्तार पूर्वक करेंगे।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

1. प्रत्यन्तर्दशा को परिभाषित करने में समर्थ हो सकेंगे।
2. प्रत्यन्तर्दशा के महत्त्व को समझा सकेंगे।
3. प्रत्यन्तर्दशा का निरूपण करने में समर्थ होंगे।
4. प्रत्यन्तर्दशा का स्वरूप वर्णन करने में समर्थ होंगे।
5. प्रत्यन्तर्दशा से फलादेशादि को निरूपित करने में समर्थ होंगे।

5.3 प्रत्यन्तर्दशा परिचय -

पृथक स्व स्वदशामानैर्हन्यादन्तर्दशामितिम्।
भजेत्सर्वदशायोगैः फलं प्रत्यन्तरं क्रमात्।।

जिसकी अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा निकालनी हो, उस अन्तर्दशा वर्ष को अपने – अपने दशावर्ष से गुणा कर उसमें समस्त दशावर्ष योग से भाग देने से लब्ध ग्रहों की प्रत्यन्तर्दशा होती है।

जैसे – सूर्य की विंशोत्तरी मान से सूर्य में सूर्य की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा निकालनी है। सूर्य का अन्तर्दशा वर्षादि 0|3|18 है, इसको दिनात्मक 108 दिन करके इस 108 को सूर्य दशावर्ष 6 से गुणा किया तो 648 हुआ, इसमें समस्त दशायोग 120 का भाग दिया तो 5 दिन मिला, शेष 48 को 60

से गुणा कर 120 का भाग दिया तो 24 घटी, शेष 0 हो गया, अत: सूर्य की प्रत्यन्तर्दशा दिनादि 5।24।0 हुआ। इसी प्रकार सूर्य की अन्तर्दशा 108 दिन, इसको चन्द्रदशा वर्ष 10 से गुणा कर 120 का भाग देने पर लब्धि दिनादि 0।9।0 यह सूर्य की अन्तर्दशा में चन्द्रमा की प्रत्यन्तर्दशा हुई। इस प्रकार 108 × भौम वर्ष 7 ÷ 120 = 0।6।18 सूर्यान्तर भौम की प्रत्यन्तर्दशा दिनादि हुई।

एवं 108 × 18 / 120 = 0।16।12 सूर्यान्तर में राहु की प्रत्यन्तर दशा दिनादि हुई। इसी प्रकार अपनी – अपनी दशावर्ष संख्या से गुणाकर 120 का भाग देने पर सभी ग्रहों की प्रत्यन्तर्दशा दिनादि स्पष्ट होती है।

सूर्य की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा में सूर्यादि की प्रत्यन्तर्दशा

सूर्य	चन्द्र	मंगल	राहु	गुरू	शनि	बुध	केतु	शुक्र	**ग्रह**
0	0	0	0	0	0	0	0	0	**मास**
5	9	6	16	14	17	15	6	18	**दिन**
24	0	18	12	24	6	18	18	0	**घटी**

सूर्य की महादशा में चन्द्रमा की अन्तर्दशा में चन्द्रादि की प्रत्यन्तर्दशा

चन्द्र	मंगल	राहु	गुरू	शनि	बुध	केतु	शुक्र	सूर्य	**ग्रह**
0	0	0	0	0	0	0	1	0	**मास**
15	10	27	24	28	25	10	0	9	**दिन**
0	30	0	0	30	30	30	0	0	**घटी**

सूर्य की महादशा में मंगल की अन्तर्दशा में मंगल की प्रत्यन्तर्दशा

मंगल	राहु	गुरू	शनि	बुध	केतु	शुक्र	सूर्य	चन्द्र	**ग्रह**
0	0	0	0	0	0	0	0	0	**मास**
7	18	16	19	17	7	21	16	10	**दिन**
21	54	48	57	51	21	0	18	30	**घटी**

सूर्य की महादशा में राहु की अन्तर्दशा में राहु की प्रत्यन्तर्दशा

राहु	गुरू	शनि	बुध	केतु	शुक्र	सूर्य	चन्द्र	मंगल	**ग्रह**
1	1	1	1	0	1	0	0	0	**मास**
18	13	21	15	18	24	16	27	18	**दिन**
36	12	18	54	54	0	12	0	54	**घटी**

सूर्य की महादशा में गुरू की अन्तर्दशा में गुरू की प्रत्यन्तर्दशा

गुरू	शनि	बुध	केतु	शुक्र	सूर्य	चन्द्र	मंगल	राहु	**ग्रह**

1	1	1	0	1	0	0	0	1	**मास**
8	15	10	16	18	14	24	16	13	**दिन**
24	36	48	48	0	24	0	48	12	**घटी**

सूर्य की महादशा में शनि की अन्तर्दशा में शनि की प्रत्यन्तर्दशा

शनि	बुध	केतु	शुक्र	सूर्य	चन्द्र	मंगल	राहु	गुरू	**ग्रह**
1	1	0	1	0	0	0	1	1	**मास**
24	18	19	27	17	28	19	21	15	**दिन**
9	27	57	0	6	30	57	18	36	**घटी**

सूर्य की महादशा में बुध की अन्तर्दशा में बुध की प्रत्यन्तर्दशा

बुध	केतु	शुक्र	सूर्य	चन्द्र	मंगल	राहु	गुरू	शनि	**ग्रह**
1	0	1	0	0	0	1	1	1	**मास**
13	17	21	15	25	17	15	10	18	**दिन**
21	51	0	18	30	51	54	48	57	**घटी**

सूर्य की महादशा में केतु की अन्तर्दशा में केतु की प्रत्यन्तर्दशा

केतु	शुक्र	सूर्य	चन्द्र	मंगल	राहु	गुरू	शनि	बुध	**ग्रह**
0	0	0	0	0	0	0	0	0	**मास**
7	21	6	10	7	18	16	19	17	**दिन**
21	0	18	30	21	54	48	57	51	**घटी**

सूर्य की महादशा में शुक्र की अन्तर्दशा में शुक्र की प्रत्यन्तर्दशा

शुक्र	सूर्य	चन्द्र	मंगल	राहु	गुरू	शनि	बुध	केतु	**ग्रह**
2	0	1	0	1	1	1	1	0	**मास**
0	18	0	21	24	18	27	21	21	**दिन**
0	0	0	0	0	0	0	0	0	**घटी**

सूर्यान्तर्दशा में सूर्य प्रत्यन्तर्दशा फल –

सूर्य की अन्तर्दशा में सूर्य की ही प्रत्यन्तर्दशा हो तो उस समय जातक को लोगों से वाद – विवाद, धनहानि, स्त्री को कष्ट एवं मस्तक में पीड़ा होती है।

विशेष - यदि सूर्य स्वोच्च में, स्वगृह में, केन्द्र, त्रिकोण, शुभ ग्रह से युत या दृष्ट, शुभ वर्ग में स्थित लग्नेश, भाग्येश, कर्मेश से युत और अन्यत्र भी शुभ स्थान में स्थित हो तो पूर्वोक्त अशुभ फल नहीं देता।

सूर्यान्तर्दशा में चन्द्र प्रत्यन्तर्दशा फल

सूर्यान्तर में चन्द्रमा की प्रत्यन्तर्दशा हो तो उद्वेग, कलह, धननाश एवं मानसिक व्यथा होती है।

सूर्यान्तर्दशा में भौम प्रत्यन्तर्दशा फल –

सूर्यान्तर में भौम की प्रत्यन्तर्दशा हो तो राजभय, शस्त्रभय, बन्धन, विभिन्न प्रकार के संकट वं शत्रु और अग्नि से पीड़ा होती है।

सूर्यान्तर्दशा में राहु प्रत्यन्तर्दशा फल

सूर्यान्तर में राहु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो कफसम्बन्धी रोगभय, शस्त्रभय, धननाश, राज्यनाश और मानसिक त्रास हो जाता है।

सूर्यान्तर्दशा में गुरू प्रत्यन्तर्दशा फल

सूर्यान्तर में गुरू का प्रत्यन्तर हो तो शत्रुनाश, विजय, वस्त्र, सुवर्ण, आभूषणादि की वृद्धि एवं अश्व यानादि का लाभ होता है।

सूर्यान्तर्दशा में शनि प्रत्यन्तर्दशा फल

सूर्यान्तर में शनि का प्रत्यन्तर हो तो धनहानि, पशुओं को पीड़ा, उद्वेग, महारोग एवं सभी प्रकार से अशुभ फल होता है।

सूर्यान्तर्दशा में बुध प्रत्यन्तर्दशा फल

सूर्य के अन्तर में बुध का प्रत्यन्तर होने पर विद्यालाभ, बन्धुओं का संग, सुस्वादु भोजन की प्राप्ति, धनागम, धर्मलाभ एवं राजा से पूजित होता है।

सूर्यान्तर्दशा में केतु प्रत्यन्तर्दशा फल

सूर्यान्तर में केतु का प्रत्यन्तर हो तो प्राणभय, अधिक हानि, राजभय, विग्रह एवं शत्रुओं के साथ वाद – विवाद होता है।

सूर्यान्तर्दशा में शुक्र प्रत्यन्तर्दशा फल

सूर्यान्तर में शुक्र का प्रत्यन्तर हो तो सुख और दु:ख समान रूप से व्यतीत होता है, साथ ही स्वल्प लाभ, अल्प सुख एवं सम्पत्ति की वृद्धि होती है।

चन्द्रमा का प्रत्यन्तर्दशा फल –

चन्द्रमा के अन्तर में चन्द्रमा का प्रत्यन्तर्दशा फल

चन्द्रान्तर में चन्द्रमा की ही अन्तर्दशा हो तो भूमि, भोज्य वस्तु और धन की प्राप्ति होती है, साथ ही जातक राजा से पूजित होता है एवं उसे परम सुख की प्राप्ति होती है।

चन्द्रमा के अन्तर में राहु का प्रत्यन्तर्दशा फल

चन्द्रान्तर में राहु का प्रत्यन्तर हो तो कल्याण, राजकीय धनागम एवं यदि ग्रहों से युत हो तो अपमृत्यु का भय रहता है।

चन्द्रमा के अन्तर में गुरू का प्रत्यन्तर्दशा फल

चन्द्रमा के अन्तर में गुरू का प्रत्यन्तर हो तो वस्त्रलाभ, प्रभावशाली सद्गुरू से ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति एवं राज्य तथा अलंकार की प्राप्ति होती है।

चन्द्रमा के अन्तर में शनि का प्रत्यन्तर्दशा फल

चन्द्रान्तर में शनि की प्रत्यन्तर्दशा हो तो वात और पित्तसम्बन्धी रोग से दुर्दिन का अनुभव एवं धन – धान्य और यश की हानि होती है।

चन्द्रमा के अन्तर में बुध का प्रत्यन्तर्दशा फल

चन्द्रान्तर में बुध का प्रत्यन्तर हो तो पुत्रजन्म, अश्व की प्राप्ति , विद्या का लाभ, उन्नति, श्वेत वस्त्र और अन्न की प्राप्ति होती है।

चन्द्रमा के अन्तर में केतु का प्रत्यन्तर्दशा फल

चन्द्रमा के अन्तर में केतु का प्रत्यन्तर हो तो ब्राह्मणों के साथ कलह, अपमृत्यु का भय, सुख की हानि एवं सभी स्थलों पर कष्ट होता है।

चन्द्रमा के अन्तर में शुक्र का प्रत्यन्तर्दशा फल

चन्द्रान्तर में शुक्र की प्रत्यन्तर दशा हो तो धनलाभ, पूर्ण सौख्य, कन्या का जन्म, सुभोजन और लोगों से प्रेम रहता है।

चन्द्रमा के अन्तर में सूर्य का प्रत्यन्तर्दशा फल

चन्द्रान्तर में शुक्र की प्रत्यन्तर दशा हो तो अन्न का लाभ, वस्त्र का लाभ, शत्रु की हानि, सुख एवं सर्वत्र स्थलों पर विजय की प्राप्ति होती है।

5.4 बोध प्रश्न –

1. प्रत्यन्तर्दशा होती है।

क. विंशोत्तरी दशा में ख. अन्तर्दशा में ग. अष्टोत्तरी दशा में घ. इनमें से कोई नही

2. भाग्येश होता है।

क. नवम भाव का स्वामी ख. सप्तम भाव का स्वामी ग. पंचम भाव का स्वामी घ. कोई नहीं

3. सूर्य का प्रत्यन्तरदशा दिनादि है।

क. 5।23।0 ख. 5।24।0 ग. 5।25।0 घ. 5।26।0

4. शुक्र का प्रत्यन्तरदशा दिनादि है।

क. 0।16।0 ख. 0।18।0 ग. 0।5।0 घ. 0।9।0

भौम प्रत्यन्तर्दशा फल –

भौमान्तर में भौम प्रत्यन्तर्दशा फल –

भौमान्तर में भौम का ही प्रत्यन्तर हो तो शत्रुभय, भयंकर कलह एवं रक्त विकार के कारण अपमृत्यु की सम्भावना रहती है।

राहु प्रत्यन्तर्दशा फल

भौमान्तर में राहु का प्रत्यन्तर हो तो बन्धन, राज्य एवं धन का नाश, कुभोजन, कलह और शत्रु का भय रहता है।

गुरू प्रत्यन्तर फल –

भौमान्तर में गुरू का प्रत्यन्तर हो तो बुद्धिविभ्रम, दु:ख सन्ताप, कलह एवं समस्त वांछित कार्य असफल होते है।

शनि प्रत्यन्तर फल -

भौमान्तर में शनि की प्रत्यन्तर्दशा हो तो अपने स्वामी का नाश, पीड़ा, धननाश, महाभय, विकलता, और कलह तथा त्रस्त होता है।

बुध प्रत्यन्तर फल –

भौमान्तर में बुध का प्रत्यन्तर हो तो बुद्धि में भ्रम, धन की हानि, शरीर में ज्वर, वस्त्र, अन्न और मित्रों का नाश होता है।

केतु प्रत्यन्तर फल –

भौम के अन्तर में केतु का प्रत्यन्तर हो तो आलस्य, मस्तक में पीड़ा, पाप , रोग से कष्ट, अपमृत्यु, राजभय एवं शस्त्रघात आदि होता है।

शुक्र प्रत्यन्तर फल –

भौमान्तर में शुक्र का प्रत्यन्तर हो तो चाण्डाल जाति से संकट, त्रास, राजभय तथा शस्त्रभय एवं अतीसार तथा वमन रोग होता है।

सूर्य का प्रत्यन्तर फल –

भौमान्तर में सूर्य का प्रत्यन्तर हो तो भूमि, धन, सम्पत्ति की वृद्धि, सन्तोष, मित्रों का समागम और सभी प्रकार से सुख की प्राप्ति होती है।

चन्द्र का प्रत्यन्तर फल –

भौमान्तर में चन्द्रमा का प्रत्यन्तर हो तो दक्षिण दिशा से श्वेत वस्त्र तथा आभूषण का लाभ एवं समस्त कार्यों की सिद्धि होती है।

राहु का प्रत्यन्तर्दशा फल –

राहु के अन्तर में राहु का प्रत्यन्तर फल –

राहु के अन्तर में राहु का ही प्रत्यन्तर हो तो बन्धन, विभिन्न रोगों से आघात एवं मित्रों का भय रहता है।

गुरू का प्रत्यन्तर फल –

राहु के अन्तर में गुरू का प्रत्यन्तर हो तो सर्वत्र मान – प्रतिष्ठा, अश्व, हाथी आदि वाहन तथा धन

का लाभ होता है।

शनि का प्रत्यन्तर फल –

राहु के अन्तर में शनि का प्रत्यन्तर हो तो भयंकर बन्धन, सुख की हानि, महान् भय, विपक्षियों से त्रास और वातरोग होता है।

बुध का प्रत्यन्तर फल –

राहु के अन्तर में बुध का प्रत्यन्तर हो तो सभी कार्यों में सफलता, विशेष करके स्त्री से लाभ और वैदेशिक कार्य की सिद्धि होती है।

केतु के प्रत्यन्तर फल –

राहु के अन्तर में केतु का प्रत्यन्तर हो तो बुद्धिनाश, भय, कार्यो में विघ्न, धनहानि, सर्वत्र कलह और उद्वेग होता है।

शुक्र का प्रत्यन्तर फल –

राहु के अन्तर में शुक्र का प्रत्यन्तर हो तो योगिनियों से भय, अश्व की हानि, कुभोजन, स्त्री नाश और अपने वंश में शोक होता है।

सूर्य का प्रत्यन्तर फल –

राह्वन्तर में सूर्य का प्रत्यन्तर हो तो ज्वर, परम भय, पुत्र पौत्रों को पीड़ा, अपमृत्यु और प्रमाद होता है।

चन्द्र का प्रत्यन्तर फल –

राहु के अन्तर में चन्द्र का प्रत्यन्तर हो तो उद्वेग और कलह, चिन्ता, माननाश, भय और पिता के शरीर में कष्ट होता है।

मंगल का प्रत्यन्तर फल –

राहु के अन्तर में मंगल का प्रत्यन्तर हो तो भगन्दर रोग से पीड़ा, रक्त - पित्त सम्बन्धी व्याधि, धननाश और उद्वेग होता है।

गुरू का प्रत्यन्तर्दशा फल

गुरू के अन्तर में गुरू आदि का प्रत्यन्तर फल –

गुरू के अन्तर में गुरू का प्रत्यन्तर हो तो सुवर्णलाभ, धान्यवृद्धि, कल्याण, भाग्योदय और सुखादि की प्राप्ति होती है।

शनि का प्रत्यन्तर फल –

गुरू के अन्तर में शनि का प्रत्यन्तर हो तो गौ, भूमि, अश्व लाभ एवं अन्न – पानादि के संचय से सुखानुभव होता है।

बुध का प्रत्यन्तर फल –

गुरू के अन्तर में बुध का प्रत्यन्तर हो तो विद्या, वस्त्र, ज्ञान, रत्न - लाभ, मित्रों का समागम और स्नेह होता है।

केतु का प्रत्यन्तर फल -

गुरू के अन्तर में केतु का प्रत्यन्तर हो तो जल से भय, चोर, बन्धन, कलह और भयंकर अपमृत्यु का भय रहता है।

शुक्र का प्रत्यन्तर फल –

गुरू के अन्तर में शुक्र का प्रत्यन्तर हो तो अनेक विद्या और धन की प्राप्ति, सुवर्ण, वस्त्र, आभूषण, क्षेम, कल्याण और सन्तोष प्राप्त होता है।

सूर्य का प्रत्यन्तर फल –

गुरू के अन्तर में सूर्य का प्रत्यन्तर हो तो राजा, मित्र, पिता, माता और अन्य सभी स्थलों से लाभ एवं सभी जगह से आदर प्राप्त होता है।

चन्द्र का प्रत्यन्तर फल –

गुरू के अन्तर में चन्द्रमा की प्रत्यन्तदर्शा हो तो सभी आपत्तियों का निवारण, रत्न और अश्वसम्बन्धी वाहनों का लाभ तथा सभी कार्य में सफलता मिलती है।

मंगल का प्रत्यन्तर फल –

गुरू के अन्तर में मंगल का प्रत्यन्तर हो तो शस्त्रभय, गुदामार्ग में पीड़ा, मन्दाग्नि, अजीर्णता और शत्रु से पीड़ा होती है।

राहु का प्रत्यन्तर फल –

गुरू के अन्तर में राहु का प्रत्यन्तर हो तो चाण्डाल जाति से विरोध, उनके द्वारा ही भय, धननाश और कष्ट होता है।

शनि का प्रतयन्तर्दशा फल –

शन्यन्तर में शनि प्रत्यन्तर्दशा का फल –

शन्यन्तर में शनि का ही प्रत्यन्तर हो तो शारीरिक पीड़ा, कलह, अन्त्यज लोगों से भय एवं विभिन्न प्रकार के दु:ख होते हैं।

बुध प्रत्यन्तर फल -

शन्यन्तर में बुध का प्रत्यन्तर हो तो बुद्धिनाश, कलह, भय, भोजनादि की चिन्ता, धननाश और अपने विपक्षियों से भय रहता है।

केतु प्रत्यन्तर फल –

शन्यन्तर में केतु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो शत्रु के गृह में बन्धन, छवि - हानि, अधिक क्षुधा, हृदय में चिन्ता, भय और त्रास होता है।

शुक्र प्रत्यन्तर फल –

शन्यन्तर में शुक्र का प्रत्यन्तर हो तो अभीष्ट कार्य में सफलता, अपने जनों का कल्याण एवं मानविक

कार्य से लाभ होता है।

सूर्य प्रत्यन्तर फल –

शन्यन्तर में सूर्य का प्रत्यनतर हो तो राजा से अधिकार की प्राप्ति, परन्तु अपने गृह में कलह और ज्वरादि रोग से पीड़ा होती है।

चन्द्र के प्रत्यन्तर का फल –

शन्यन्तर में चन्द्र का प्रत्यन्तर हो तो प्रखर बुद्धि, बड़े कार्य का आरम्भ, तेज में मन्दता, अधिक व्यय और अधिक स्त्रियों के साथ समागम होता है।

मंगल प्रत्यन्तर फल –

शन्यन्तर में मंगल का प्रत्यन्तर हो तो प्रभाव में न्यूनता, पुत्र को आघात, अग्नि और शत्रु का भय, वायु तथा पित्त से पीड़ा होती है।

राहु का प्रत्यन्तर फल –

शन्यन्तर में राहु का प्रत्यन्तर हो तो धन, वस्र तथा भूमि का नाश, भय, देशान्तर में भ्रमण तथा मृत्यु का भय रहता है।

गुरू का प्रत्यन्तर फल –

शनि के अन्तर में गुरू का प्रत्यन्तर हो तो स्त्री द्वारा की गई अकर्मण्यता को रोकने में असमर्थता तथा कलह और उद्वेग होता है।

बुध का प्रत्यन्तर्दशा फल –

बुधान्तर में बुधादि प्रत्यन्तर का फल –

बुधान्तर में बुध की ही प्रत्यनतर दशा हो तो बुद्धि, विद्या और धन का लाभ, वस्र की प्राप्ति एवं परम सुख होता है।

केतु प्रत्यन्तर फल –

बुधान्तर में केतु का प्रत्यन्तर हो तो कुभोजन, उदर सम्बन्धी रोग की सम्भावना, नेत्र सम्बन्धी व्याधि एवं रक्त और पित्तविकार होता है।

शुक्र प्रत्यन्तर फल –

बुधान्तर में शुक्र का प्रत्यन्तर हो तो उत्तर दिशा से लाभ, पशुओं से हानि एवं राजगृह में अधिकार की प्राप्ति होती है।

सूर्य प्रत्यन्तर फल –

बुधान्तर में सूर्य का प्रत्यन्तर हो तो प्रभाव की हानि, रोग का आक्रमण एवं मानसिक अशान्ति होती है।

चन्द्र प्रत्यन्तर फल –

बुधान्तर में चन्द्र का प्रत्यन्तर हो तो स्त्री – धन सम्पत्ति का लाभ, कन्या की प्राप्ति एवं सभी तरह से सुख होता है।

मंगल प्रत्यन्तर फल –

बुधान्तर में भौम का प्रत्यन्तर हो तो धर्म, बुद्धि तथा धन की प्राप्ति, चोर, अग्नि द्वारा पीड़ा, रक्तवस्त्र का लाभ एवं शस्त्र से आघात का भय रहता है ।

राहु का प्रत्यन्तर फल –

बुधान्तर में राहु का प्रत्यन्तर हो तो कलह और स्त्री से अकारण भय तथा राजा और शस्त्र से भय रहता है

गुरू प्रत्यन्तर फल –

बुधान्तर में गुरू का प्रत्यन्तर हो तो राज्यलाभ, राज्याधिकारी तथा राजा से सम्मान एवं विद्या, बुद्धि की समृद्धि होती है।

शनि प्रत्यन्तर फल – बुधान्तर में शनि का प्रत्यन्तर हो तो वायु तथा पित्तसम्बन्धी रोग, शरीर में आघात और धन का क्षय होता है।

केतु प्रत्यन्तर्दशा फल -

केत्वन्तर में केतु का प्रत्यन्तर हो तो अकस्मात् आपत्ति, देशान्तर में भ्रमण और धननाश होता है।

शुक्र प्रत्यन्तर फल –

केत्वन्तर में शुक्र का प्रत्यन्तर हो तो यवनों से भय, धननाश, नेत्ररोग, शिर में पीड़ा और चौपायों की हानि होती है।

सूर्य प्रत्यन्तर फल –

केत्वन्तर में सूर्य का प्रत्यन्तर हो तो अपने मित्रों के साथ विरोध, अकाल मृत्यु, पराजय, बुद्धिभ्रंश और विवाद होता है।

चन्द्र प्रत्यन्तर फल –

केत्वन्तर में चन्द्र का प्रत्यन्तर हो तो अन्ननाश, कीर्ति में आघात, शारीरिक पीड़ा, मतिभ्रम एवं ऑव तथा वायुसम्बन्धी रोग की वृद्धि होती है।

मंगल प्रत्यन्तर फल –

केत्वन्तर में भौम का प्रत्यन्तर हो तो शस्रघात, पतन का भय, अग्नि से भय एवं नीच जनों और शत्रुओं से भय रहता है।

राहु प्रत्यन्तर फल –

केत्वन्तर में राहु का प्रत्यन्तर हो तो स्त्री और विपक्षियों से भय एवं क्षुद्र जनों से भी भय का आभास

होता है।

गुरू प्रत्यन्तर फल –

केत्वन्तर में गुरू का प्रत्यन्तर हो तो धन एवं मित्र का विनाश, शस्त्र से महा उत्पात सभी जगहों से कष्ट प्राप्त होता है।

शनि प्रत्यन्तर फल –

केत्वन्तर में शनि का प्रत्यन्तर हो तो धन एवं मित्र का विनाश, शस्त्र से महा उत्पात और सभी जगहों से कष्ट प्राप्त होता है।

बुध प्रत्यन्तर फल –

केत्वन्तर में बुध का प्रत्यन्तर हो तो बुद्धिनाश, उद्वेग, विद्या की हानि, भय और कार्य विफल होते हैं।

शुक्र का प्रत्यन्तर्दशा फल –

शुक्रान्तर में शुक्र प्रत्यन्तर का फल –

शुक्रान्तर में शुक्र का प्रत्यन्तर हो तो सफेद वस्त्र, अश्व, मोती आदि रत्न और सुन्दर स्त्री से संगम का सुख होता है।

सूर्य प्रत्यन्तर का फल –

शुक्रान्तर में सूर्य का प्रत्यन्तर हो तो वातज्वर, मस्तक में पीड़ा, राजा और शत्रु से भी पीड़ा तथा व्यवसाय में अल्प लाभ होता है।

चन्द्र प्रत्यन्तर का फल –

शुक्रान्तर में चन्द्र का प्रत्यन्तर हो तो कन्या की प्राप्ति, राजा से वस्त्र – आभूषणादि की प्राप्ति और राज्याधिकार प्राप्त होता है।

मंगल प्रत्यन्तर का फल –

शुक्रान्तर में मंगल का प्रत्यन्तर हो तो रक्त और पित्तसम्बन्धी रोग, कलह, ताडन और महान कष्ट होता है।

राहु प्रत्यन्तर फल –

शुक्रान्तर में राहु का प्रत्यन्तर हो तो स्त्री से कलह, अकस्मात् भय एवं राजा और शत्रु से पीड़ा होती है।

गुरू प्रत्यन्तर फल –

शुक्रान्तर में गुरू का प्रत्यन्तर हो तो द्रव्य, राज्य, वस्त्र, मोती, आभूषण, हाथी, अश्व, वाहन आदि का लाभ होता है।

शनि प्रत्यन्तर फल –

शुक्रान्तर में शनि का प्रत्यन्तर हो तो गदहा, उष्ट्र, छाग की प्राप्ति, लोहा, तिल आदि से लाभ और

कुछ पीड़ा होती है।

बुध प्रत्यन्तर फल –

शुक्रान्तर में बुध का प्रत्यन्तर हो तो धन, ज्ञान, महान् लाभ, राजा से अधिकार की प्राप्ति और दूसरे के निक्षेप धन का लाभ होता है।

केतु प्रत्यन्तर फल –

शुक्रान्तर में केतु का प्रत्यन्तर हो तो अपमृत्यु का भय एवं देश – विदेश में भ्रमण होता है, साथ ही बीच – बीच में आर्थिक लाभ भी होता है।

5.5 सारांशः-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि जिसकी अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा निकालनी हो, उस अन्तर्दशा वर्ष को अपने – अपने दशावर्ष से गुणा कर उसमें समस्त दशावर्ष योग से भाग देने से लब्ध ग्रहों की प्रत्यन्तर्दशा होती है। जैसे – सूर्य की विंशोत्तरी मान से सूर्य में सूर्य की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर्दशा निकालनी है। सूर्य का अन्तर्दशा वर्षादि 0।3।18 है, इसको दिनात्मक 108 दिन करके इस 108 को सूर्य दशावर्ष 6 से गुणा किया तो 648 हुआ, इसमें समस्त दशायोग 120 का भाग दिया तो 5 दिन मिला, शेष 48 को 60 से गुणा कर 120 का भाग दिया तो 24 घटी, शेष 0 हो गया, अत: सूर्य की प्रत्यन्तर्दशा दिनादि 5।24।0 हुआ। इसी प्रकार सूर्य की अन्तर्दशा 108 दिन, इसको चन्द्रदशा वर्ष 10 से गुणा कर 120 का भाग देने पर लब्धि दिनादि 0।9।0 यह सूर्य की अन्तर्दशा में चन्द्रमा की प्रत्यन्तर्दशा हुई। इस प्रकार 108 × भौम वर्ष 7 ÷ 120 = 0।6।18 सूर्यान्तर भौम की प्रत्यन्तर्दशा दिनादि हुई एवं 108 × 18 / 120 = 0।16।12 सूर्यान्तर में राहु की प्रत्यन्तर दशा दिनादि हुई। इसी प्रकार अपनी – अपनी दशावर्ष संख्या से गुणाकर 120 का भाग देने पर सभी ग्रहों की प्रत्यन्तर्दशा दिनादि स्पष्ट होती है। विंशोत्तरी दशा, अन्तर्दशा के पश्चात् प्रत्यन्तर्दशा का ज्ञान सूक्ष्म फलादेशादि कार्य के लिए आवश्यक होता है। इसके ज्ञानोपरान्त ही आप फलादेशादि कर्त्तव्य में सूक्ष्मता को प्राप्त कर सकते है।

5.6 पारिभाषिक शब्दावली

भाग्येश – भाग्य का स्वामी

प्रत्यन्तर्दशा - अन्तर्दशा के अन्तर्गत आने वाली सूक्ष्म दशा

ज्ञानोपरान्त – ज्ञान के उपरान्त

अकर्मण्यता – कर्म न करने वाला

कर्मेश – कर्म का स्वामी

विपक्ष – प्रतिवादी

पित्त – गुणत्रयी में एक

लग्नेश – लग्न का स्वामी

5.7 बोधप्रश्नों के उत्तर

1. ख
2. क
3. ख
4. ख

5.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वृहत्पराशरहोराशास्त्र – चौखम्भा विद्या प्रकाशन

ज्योतिष सर्वस्व - चौखम्भा विद्या प्रकाशन

वृहज्जातक - चौखम्भा विद्या प्रकाशन

सचित्र ज्योतिष शिक्षा - चौखम्भा विद्या प्रकाशन

5.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. प्रत्यन्तर्दशा क्या है। प्रत्यन्तर्दशा साधन की विधि बतलाते हुए विस्तार से उसका उल्लेख कीजिये।
2. प्रत्यन्तर्दशा में सूर्यादि ग्रहों का होने वाली शुभाशुभ फल का विवेचन कीजिये।

इकाई – 6 सूक्ष्म दशा फल

इकाई की संरचना

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 सूक्ष्म दशा परिचय

सूक्ष्म दशा की परिभाषा व स्वरूप

6.4 सूक्ष्म दशा फल

बोध प्रश्न

6.5 सारांशः

6.6 पारिभाषिक शब्दावली

6.7 बोधप्रश्नों के उत्तर

6.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

6.9 निबन्धात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई दशाफल विचार के **षष्ठ** इकाई **'सूक्ष्म दशाफल'** शीर्षक से संबंधित है। जातक के सम्पूर्ण जीवन का विचार कुण्डली में स्थित ग्रहों के अनुसार होता है, और उनके जीवन में जो भी शुभाशुभ फल होता है, वह उन ग्रहों की दशान्तर्दशाओं में ही उनको प्राप्त होता है। अत: दशा का सूक्ष्म ज्ञान परमावश्यक है।

प्रत्येक दशा के पॉच अंग दशा, अन्तर्दशा, प्रत्यन्तर्दशा, सूक्ष्म दशा व प्राण दशा माने गये है। ऐसा महर्षि पराशर का मत है। प्रत्यन्तर्दशा से आगे भी सूक्ष्म दशा विभाग का ज्ञान किया जाता है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने विंशोत्तरी दशाफल, अष्टोत्तरी दशाफल, योगिनी दशाफल, अन्तर्दशा दशाफल, प्रत्यन्तर्दशा फल का विस्तृत अध्ययन कर लिया हैं। यहॉ हम इस इकाई में **सूक्ष्म** दशा साधन एवं उसके फलादेश सम्बन्धित विषयों का अध्ययन विस्तार पूर्वक करेंगे।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

1. **सूक्ष्म** दशा को परिभाषित करने में समर्थ हो सकेंगे।
2. **सूक्ष्म** दशा के महत्त्व को समझा सकेंगे।
3. **सूक्ष्म** दशा का निरूपण करने में समर्थ होंगे।
4. **सूक्ष्म** दशा का स्वरूप वर्णन करने में समर्थ होंगे।
5. **सूक्ष्म** दशा से फलादेशादि को निरूपित करने में समर्थ होंगे।

6.3 सूक्ष्म दशा परिचय, परिभाषा व दशाफल

गुण्या स्व - स्वदशावर्षैः प्रत्यन्तरदशामितिः।
खार्कैर्भक्ता पृथग्लब्धिः सूक्ष्मान्तरदशा भवेत्॥

प्रत्यन्तर दशामान को पृथक् – पृथक् दशावर्ष से गुणाकर 120 का भाग देने पर अलग – अलग सूक्ष्मान्तर्दशा का मान होता है।

उदाहरण – जैसे सूर्य की महादशा में सूर्य की ही अन्तर्दशा में सूर्य की प्रत्यन्तर्दशा 5।24 दिनादि है, इसको $5 \times 60 + 24 = 324$ घटयात्मक हुआ, इसमें सूर्य दशा वर्ष 6 से गुणा किया तो 1944 हुआ, इसमें 120 का भाग दिया तो 16।12 घटयादि सूर्य दशा में सूर्यान्तर में में सूर्य प्रत्यन्तर में सूर्य की सूक्ष्म दशा हुई। इसी प्रकार पूर्वोक्त सूर्य की प्रत्यन्तर्दशा 324 को चन्द्र दशावर्ष 10 से गुणाकर

120 का भाग देने से 27|0 घटयादि चन्द्र की सूक्ष्म दशा हुई। इस प्रकार से –

324 × 7/120 = 18/54 घटयादि

324 × 18/120 = 48/36 घटयादि

324 × 16/120 = 43/12 घटयादि

324 × 19/120 = 51/18 घटयादि

324 × 17/120 = 45/54 घटयादि

324 × 7/120 = 18/54 घटयादि

324 × 20/120 = 54/0 घटयादि

सूर्यदशा में, सूर्यान्तर में, सूर्य प्रत्यन्तर में, सूर्य – सूक्ष्म दशा

सूर्य	चन्द्र	मंगल	राहु	गुरू	शनि	बुध	केतु	शुक्र	ग्रह
16	27	18	48	43	51	45	18	54	घटी
12	0	54	36	2	18	54	54	0	पल

6.4 सूक्ष्म दशा फल

सूर्य के प्रत्यन्तर में सूर्य सूक्ष्म दशा फल –

निजभूमिपरित्यागो प्राणनाशभयं भवेत्।
स्थाननाशो महाहानिः निजसूक्ष्मगते रवौ ॥

सूर्य के प्रत्यन्तर में सूर्य की सूक्ष्म दशा हो तो अपनी भूमि का त्याग, मृत्यु का भय, स्थाननाश और सभी जगहों से हानि होती है।

सूर्य प्रत्यन्तर में चन्द्रमा की सूक्ष्म दशा फल –

देवब्राह्मणभक्तिश्च नित्यकर्मरतस्तथा।
सुप्रीतिः सर्वमित्रैश्च रवेः सूक्ष्मगते विधौ ॥

सूर्य के प्रत्यन्तर में चन्द्रमा की सूक्ष्म दशा हो तो देव ब्राह्मण में श्रद्धा, अपने कर्म में सदैव तत्पर और मित्रों में प्रेम रहता है।

सूर्य प्रत्यन्तर में मंगल सूक्ष्म दशा फल –

क्रूरकर्मरतिस्तिग्मशत्रुभिः परिपीडनम्।
रक्तस्रावादिरोगश्च रवेः सूक्ष्मगते कुजे ॥

सूर्य की प्रत्यन्तर दशा में मंगल की सूक्ष्म दशा रहने पर कुकर्म में प्रवृत्ति, निष्ठुर शत्रुओं से पीड़ा और रक्तपात आदि रोग से जातक आक्रान्त रहता है।

सूर्य प्रत्यन्तर में राहु की सूक्ष्म दशाफल –

चौराग्निविषभीतिश्च रणे भंग: पराजय: ।

दानधर्मादिहीनश्च रवे: सूक्ष्मगते कुजे ॥

सूर्य प्रत्यन्तर में राहु की सूक्ष्म दशा हो तो चोर, अग्नि और विष का भय, युद्ध में पराजय एवं दान – धर्मादि धार्मिक कृत्य में अवरोध होता है।

सूर्य प्रत्यन्तर में गुरू की सूक्ष्म दशाफल –

नृपसत्काराराजार्ह: सेवकै: परिपूजित: ।

राजचक्षुर्गत: शान्त: सूर्यसूक्ष्मगते गुरौ ॥

सूर्य प्रत्यन्तर में गुरू की सूक्ष्म दशा हो तो राजा से आदर, राजसेवकों द्वारा पूजित एवं राजा का कृपापात्र होता है।

सूर्य प्रत्यन्तर में शनि की सूक्ष्मदशा फल –

चौर्यसाहसकर्मार्थं देवब्राह्मणपीडनम् ।

स्थानच्युतिं मनोदु:खं रवे: सूक्ष्मगते शनौ ॥

सूर्य प्रत्यन्तर में शनि की सूक्ष्म दशा हो तो चोरी और साहसिक कार्य से देवता और ब्राह्मणों को पीड़ा, उनके द्वारा स्थान त्याग और मानसिक व्यथा होती है।

सूर्य प्रत्यन्तर में बुध की सूक्ष्मदशा फल –

दिव्याम्बरादिलब्धिश्च दिव्यस्त्रीपरिभोगिता ।

अचिन्तितार्थसिद्धिश्च रवे: सूक्ष्मगते बुधे ॥

सूर्य प्रत्यन्तर में बुध की सूक्ष्म दशा हो तो सुन्दर, वस्त्रादि का लाभ, सुन्दरी स्त्री के साथ भोग – विलास और अचिन्तित कार्य की भी सिद्धि होती है।

सूर्य प्रत्यन्तर में केतु की सूक्ष्मदशा फल –

गुरूतार्थविनाशश्च भृत्यदारभवस्तथा ।

क्वचित्सेवकसम्बन्धो रवे: सूक्ष्मगते ध्वजे ॥

सूर्य प्रत्यन्तर में केतु की सूक्ष्म दशा हो तो सेवक और स्त्री से गौरव, धन का विनाश एवं यदा – कदा सेवक से सुसम्बन्ध भी होता है।

सूर्य प्रत्यन्तर में शुक्र की सूक्ष्मदशा फल –

पुत्रमित्रकलत्रादिसौख्यसम्पन्न एव च।

नानाविधा च सम्पत्तौ रवे: सूक्ष्मगते भृगौ ।।

सूर्य प्रत्यन्तर में शुक्र की सूक्ष्म दशा हो तो पुत्र, मित्र और कलत्रादि से सुख एवं विभिन्न प्रकार की सम्पत्ति की प्राप्ति होती है।

चन्द्र सूक्ष्मान्तर्दशा फल –

भूषणं भूमिलाभश्च सन्मानं नृपपूजनम्।

तामसत्वं गुरूत्वं च निजसूक्ष्मगते विधौ ।।

चन्द्रमा के प्रत्यन्तर में चन्द्रमा की सूक्ष्म दशा हो तो आभूषण और भूमि का लाभ, सम्मान, राजा से पूजित, तामस प्रकृति और गौरव होता है।

चन्द्र प्रत्यन्तर में भौम सूक्ष्म दशाफल –

दु:खं शत्रुविरोधश्च कुक्षिरोग: पितुर्मृति:।

वातपित्तकफोद्रेक: विधो: सूक्ष्मगते कुजे ।।

चन्द्र प्रत्यन्तर में मंगल की सूक्ष्म दशा हो तो दु:ख, शत्रु से विरोध, उदरसम्बन्धी रोग पिता का मरण एवं वात, पित्त और कफसम्बन्धी रोग होता है।

चन्द्र प्रत्यन्तर राहु की सूक्ष्म दशा फल –

क्रोधनं मित्रबन्धूनां देशत्यागो धनक्षय: ।

विदेशान्निगडप्राप्तिर्विधो: सूक्ष्मगतेऽप्यगौ ।।

चन्द्र प्रत्यन्तर में राहु की सूक्ष्म दशा हो तो मित्र तथा बन्धुओं का क्रोध, देशत्याग, धन – क्षय और विदेश में बन्धन होता है।

चन्द्र प्रत्यन्तर में गुरू की सूक्ष्म दशा फल –

छत्रचामरसंयुक्तं वैभवं पुत्रसम्पद:।

सर्वत्र सुखमाप्नोति विधो: सूक्ष्मगते गुरौ ।।

चन्द्र प्रत्यन्तर में गुरू की सूक्ष्म दशा हो तो राजचिन्ह से युत ऐश्वर्य एवं पुत्ररूपी सम्पत्ति की प्राप्ति तथा सर्वत्र सुख होता है।

चन्द्र प्रत्यन्तर में शनि की सूक्ष्म दशा फल

राजोपद्रवभीति: स्याद्व्यवहारे धनक्षय:।

चौरत्वं विप्रभीतिश्च विधो: सूक्ष्मगते शनौ ।।

चन्द्र प्रत्यन्तर में शनि की सूक्ष्म दशा हो तो राजा का कोप और भय, अपने ही व्यवहार से धन – क्षय एवं चोर और ब्राह्मणों का भय रहता है।

चन्द्र प्रत्यन्तर में बुध की सूक्ष्म दशा फल –

राजमानं वस्तुलाभो विदेशाद्वाहनादिकम्।
पुत्र पौत्रसमृद्धिश्च विधोः सूक्ष्मगते बुधे॥

चन्द्र प्रत्यन्तर में बुध की सूक्ष्म दशा हो तो राजा से सम्मान, वस्तुओं का लाभ, देशान्तर से वाहन – लाभ एवं पुत्र पौत्रादि सन्तान की वृद्धि होती है।

चन्द्र प्रत्यन्तर में केतु की सूक्ष्म दशा फल -

आत्मनो वृत्तिहननं सस्यश्रृंगवृषादिभिः।
अग्निसूर्यादिभीतिः स्याद्विधोः सूक्ष्मगते बुधे॥

चन्द्र प्रत्यन्तर में केतु की सूक्ष्म दशा हो तो सस्य औषधि पशु आदि के द्वारा अपनी वृत्ति का हनन एवं अग्नि एवं और सूर्यकिरण से भय रहता है।

चन्द्र प्रत्यन्तर में शुक्र की सूक्ष्म दशा फल –

विवाहो भूमिलाभश्च वस्त्राभरणवैभवम्।
राज्यलाभश्च कीर्तिश्च विधोः सूक्ष्मगते भृगौ॥

चन्द्र प्रत्यन्तर में शुक्र की सूक्ष्म दशा हो तो विवाह, भूमि – लाभ, वस्त्र, आभरणादि वैभव, राज्य और यश का लाभ होता है।

चन्द्र प्रत्यन्तर में सूर्य की सूक्ष्म दशा फल –

क्लेशात् क्लेशः कार्यनाशः पशुधान्यधनक्षयः।
गात्रवैषम्यभूमिश्च विधोः सूक्ष्मगते रवौ॥

चन्द्र के प्रत्यन्तर में सूर्य की सूक्ष्म दशा हो तो भयंकर कष्ट, कार्यनाश, पशु – धन – धान्य का क्षय, शरीर में विषमता और भूमि में भी विषमता होती है।

भौम सूक्ष्मान्तर्दशा फल –

मंगल की प्रत्यन्तर में मंगल की सूक्ष्म दशा फल –

भूमिहानिर्मनः खेटो ह्यपस्मारी च बन्धयुक्।
पुरक्षोभमनस्तापो निजसूक्ष्मगते कुजे॥

मंगल के प्रत्यन्तर में मंगल की सूक्ष्म दशा हो तो भूमि की हानि, मन में खेद, मृगी रोग, बन्धन, नगर में क्षोभ और मानसिक ताप होता है।

मंगल की प्रत्यन्तर में राहु की सूक्ष्म दशा फल

अंगदोषो जनाद् भीति: प्रमदावंशनाशनम् ।

वह्निसर्पभयं घोरं भौमे सूक्ष्मगतेऽप्यहौ ॥

मंगल के प्रत्यन्तर में राहु की सूक्ष्म दशा हो तो देह में दोष, लोगों से भय, स्त्री – सन्तान का नाश एवं अग्नि, सर्प का भयंकर भय होता है।

मंगल के प्रत्यन्तर में गुरू की सूक्ष्म दशा फल –

देवपूजा रतिश्चात्र मन्त्राभयुत्थानतत्पर: ।

लोके पूजा प्रमोदश्च भौमे सूक्ष्मगते गुरौ ॥

मंगल के प्रत्यन्तर में गुरू की सूक्ष्म दशा हो तो देवपूजा में प्रेम, मन्त्रसिद्धि, लोक में सम्मान और आनन्द होता है।

मंगल के प्रत्यन्तर में शनि की सूक्ष्म दशा फल

बन्धनान्मुच्यते बद्धो धनधान्यपरिच्छद: ।

भृत्यार्थबहुल: श्रीमान् भौमे सूक्ष्मगते शनौ ॥

मंगल के प्रत्यन्तर में शनि की सूक्ष्म दशा हो तो वाहन, छत्र तथा चामर आदि राज्यभोग वस्तुओं से सुख, परन्तु शरीर में कास और श्वाससम्बन्धी रोग से पीड़ा होती है।

मंगल के प्रत्यन्तर में बुध की सूक्ष्म दशा फल –

वाहनं छत्रसंयुक्तं राज्यभोगपरं सुखम् ।

कासश्वासादिका पीडा भौमे सूक्ष्मगते बुधे ॥

मंगल के प्रत्यन्तर में बुध की सूक्ष्म दशा हो तो वाहन, छत्र तथा चामर आदि राज्यभोग्य वस्तुओं से सुख, परन्तु शरीर में कास और श्वाससम्बन्धी रोग से पीड़ा होती है।

मंगल के प्रत्यन्तर में केतु की सूक्ष्म दशा फल

परप्रेरितबुद्धिश्च सर्वत्राऽपि च गर्हिता ।

अशुचि: सर्वकालेषु भौमे सूक्ष्मगते ध्वजे ॥

मंगल के प्रत्यन्तर में केतु की सूक्ष्म दशा हो तो दूसरे के कथन पर विश्वास कर जातक निन्दित कार्य करता है एवं सदैव रहता है।

मंगल के प्रत्यन्तर में शुक्र की सूक्ष्मदशा फल –

इष्टस्त्री भोग सम्पत्तिरिष्ट भोजनसंग्रह: ।

इष्टार्थस्यापि लाभश्च भौमे सूक्ष्मगते भृगौ ॥

मंगल के प्रत्यन्तर में शुक्र की सूक्ष्म दशा हो तो इच्छित स्त्री के साथ सम्पर्क, धन तथा अभीष्ट भोजन का संग्रह और अभीष्ट वस्तुओं का लाभ होता है।

मंगल के प्रत्यन्तर में सूर्य की सूक्ष्म दशा फल

राजद्वेषो द्विजात् क्लेश: कार्याभिप्रायवंचक:।

लोकेऽपि निन्द्यतामेति भौमे सूक्ष्मगते रवौ ।।

मंगल के प्रत्यन्तर में सूर्य की सूक्ष्म दशा हो तो राजा का कोप, विप्रों से कष्ट, कार्यों में असफलता और लोक में निन्दित होती है।

मंगल के प्रत्यन्तर में चन्द्र की सूक्ष्म दशा फल

शुद्धत्वं धनसम्प्राप्तिर्देवब्राह्मणवत्सल:।

व्याधिना परिभूयेत भौमे सूक्ष्मगते विधौ ।।

मंगल के प्रत्यन्तर में चन्द्रमा की सूक्ष्म दशा हो तो शुद्धता, धन – प्राप्ति, देव – ब्राह्मण में निष्ठा, परन्तु शरीर में रोग का भय बना रहता है।

बोध प्रश्न –

1. प्रत्यन्तर दशामान को पृथक् – पृथक् दशावर्ष से गुणाकर 120 का भाग देने पर अलग – अलग होता है।

क. प्रत्यन्तर मान ख. सूक्ष्मान्तर मान ग. अष्टोत्तरी मान घ. अन्तर्दशा मान

2. सूर्य के प्रत्यन्तर में सूर्य का सूक्ष्म दशा मान कितना होता है।

क. 16 घटी 12 पल ख. 12 घटी 14 पल ग. 14 घटी 15 पल घ. 15 घटी 18 पल

3. सूर्य के प्रत्यन्तर में शुक्र का सूक्ष्म दशा मान कितना होता है।

क. 58 घटी ख. 60 घटी ग. 54 घटी घ. 55 घटी

4. सूर्य प्रत्यन्तर में गुरू की सूक्ष्म दशा हो तो निम्नलिखित में होता है।

क. राजा से अनादर ख. राजा का कृपापात्र ग. राजा द्वारा दण्डित घ. इनमें से कोई नही

5. चन्द्र प्रत्यन्तर में शुक्र की सूक्ष्म दशा हो तो होता है।

क. विवाह ख. भूमि हानि ग. शत्रु द्वारा पीड़ा घ. अपयश

राहु के दशा में राहु के अन्तर में, राहु के प्रत्यन्तर में राहु सूक्ष्मदशा फल –

राहु प्रत्यन्तर में राहु के सूक्ष्म दशा फल –

लोकोपद्रवबुद्धिश्च स्वकार्ये मतिविभ्रम:।

शून्यता चित्तदोषः स्यात् स्वीये सूक्ष्मगतेऽप्यगौ ॥

राहु की प्रत्यन्तर दशा में राहु की ही सूक्ष्म दशा हो तो लोक में उपद्रव करने में उद्यत, अपने कार्य में मतिविभ्रम, शून्यता और चित्त दूषित होता है।

राहु प्रत्यन्तर में गुरू के सूक्ष्म दशा फल –

दीर्घरोगी दरिद्रश्च सर्वेषां प्रियदर्शनः ।
दानधर्मरतः शस्तो राहोः सूक्ष्मगतो गुरौ ॥

राहु के प्रत्यन्तर में गुरू की सूक्ष्म दशा हो तो दीर्घ रोग, धनाभाव, परन्तु लोक में सबका प्रिय एवं दान धर्मादि धार्मिक कृत्यों में उसकी अभिरूचि रहती है।

राहु के प्रत्यन्तर में शनि की सूक्ष्म दशा फल

कुमार्गात् कुत्सितोऽर्थश्च दुष्टश्च परसेवकः।
असत्संगमतिर्मूढो राहोः सूक्ष्मगते शनौ ॥

राहु के प्रत्यन्तर में शनि की सूक्ष्म दशा हो तो कुमार्ग से धन – संग्रह , दुष्ट स्वभाव, दूसरे के कार्य में रत एवं धूर्तों की संगति रहती है।

राहु के प्रत्यन्तर में बुध की सूक्ष्म दशा फल

स्त्रीसम्भोगमतिर्वाग्मी लोकसम्भावनावृतः।
अन्मिच्छंस्तनुग्लानी राहोः सूक्ष्मगते बुधे ॥

राहु के प्रत्यन्तर में बुध की सूक्ष्म दशा हो तो स्त्री – भोग की इच्छा में वृद्धि, वाचाल, लोक – व्यवहार का ज्ञाता एवं अन्न की इच्छा से ग्लानि होती है।

राहु के प्रत्यन्तर में केतु की सूक्ष्म दशा फल

माधुर्यं मानहानिश्च बन्धनं चाप्रमाकरम्।
पारूष्यं जीवहानिश्च राहोः सूक्ष्मगते ध्वजे ॥

राहु के प्रत्यन्तर में केतु की सूक्ष्म दशा हो तो मधुरता, मानहानि, बन्धन, कठोरता और धन तथा जीवहानि होती है।

राहु के प्रत्यन्तर में शुक्र का सूक्ष्म दशा फल –

बन्धनान्मुच्यते बद्धः स्थानमानार्थसंचयः।
कारणाद् द्रव्यलाभश्च राहोः सूक्ष्मगते भृगौ ॥

राहु के प्रत्यन्तर में शुक्र की सूक्ष्म दशा हो तो कारागार से मुक्ति, स्थान मान अर्थ का संग्रह और विभिन्न कारणों से द्रव्य का लाभ होता है।

राहु के प्रत्यन्तर में सूर्य का सूक्ष्म दशा फल

व्यक्तार्शो गुल्मरोगश्च क्रोधहानिस्तथैव च।

वाहनादिसुखं सर्वं राहो: सूक्ष्मगते रवौ ।।

राहु के प्रत्यन्तर में सूर्य की सूक्ष्म दशा हो तो देशान्तर में निवास, गुल्म रोग, क्रोध का नाश एवं वाहनादि का सुख होता है।

राहु के प्रत्यन्तर में चन्द्र का सूक्ष्म दशा फल

मणिरत्न ध्नावाप्ति र्विद्योपासनशीलवान्।

देवार्चनपरो भक्त्या राहो: सूक्ष्मगते विधौ ।।

राहु के प्रत्यन्तर में चन्द्रमा की सूक्ष्म दशा हो तो मणि, रत्न आदि धन की प्राप्ति, विद्या की उपासना में तत्पर एवं देवपूजा में श्रद्धावान् होता है।

राहु के प्रत्यन्तर में मंगल का सूक्ष्म दशा फल

निर्जितो जनविद्रावो जने क्रोधश्च बन्धनम्।

चौर्यशीरतिर्नित्यं राहो: सूक्ष्मगते कुजे ।।

राहु के प्रत्यन्तर में मंगल की सूक्ष्म दशा हो तो पराजित होकर पलायन, क्रोध, बन्धन और चोरी के कार्य में प्रवृत्ति होती है।

गुरू के दशा में गुरू के अन्तर में, गुरू के प्रत्यन्तर में गुरू सूक्ष्मदशा फल –

गुरू प्रत्यन्तर में गुरू के सूक्ष्म दशा फल –

शोकनाशो धनाधिक्यमग्निहोत्रं शिवार्चनम्।

वाहनं छत्रसंयुक्तं स्वीये सूक्ष्मगते गुरौ ।।

गुरू के प्रत्यन्तर में गुरू की सूक्ष्म दशा हो तो शोक की निवृत्ति, धनाधिक्य, अग्निहोत्र, शिव – पूजक, छत्रादि सहित वाहन का लाभ होता है।

गुरू प्रत्यन्तर में शनि की सूक्ष्मदशा का फल –

व्रतभंगो मनस्तापो विदेशे वसुनाशनम्।

विरोधो बन्धुवर्गैश्च गुरो: सूक्ष्मगते शनौ ।।

गुरू के प्रत्यन्तर में बुध की सूक्ष्म दशा हो तो विद्या – बुद्धि की वृद्धि, लोक में सम्मान, धनागम एवं घर में हर प्रकार के सुख उपलब्ध होते है।

गुरू प्रत्यन्तर में बुध की सूक्ष्मदशा का फल

विद्याबुद्धिविवृद्धिश्च स – सम्मानं धनागम:।

गृहे सर्वविधं सौख्यं गुरोः सूक्ष्मगते बुधे ।।

गुरू के प्रत्यन्तर में बुध की सूक्ष्म दशा हो तो विद्या – बुद्धि की वृद्धि, लोक में सम्मान, धनागम एवं गृह में हर प्रकार के सुख उपलब्ध होते है।

गुरू प्रत्यन्तर में केतु की सूक्ष्मदशा का फल

ज्ञानं विभवपाण्डित्ये शास्त्रश्रोता शिवार्चनम्।
अग्निहोत्रं गुरोर्भक्तिगुरोः सूक्ष्मगते ध्वजे।।

गुरू के प्रत्यन्तर में केतु की सूक्ष्म दशा हो तो ज्ञानी, ऐश्वर्य सम्पन्न, पाण्डित्यपूर्ण, शास्त्रश्रोता, शिवपूजक, अग्निहोत्री और गुरू में भक्ति रखने वाला होता है।

गुरू प्रत्यन्तर में शुक्र की सूक्ष्मदशा का फल

रोगान्मुक्तिः सुखं भोगो धनधान्यसमागमः।
पुत्रदारादिसौख्यं च गुरोः सूक्ष्मगते भृगौ।।

गुरू के प्रत्यन्तर में शुक्र की सूक्ष्म दशा हो तो रोग से छूटकारा, सुखभोग, धन – धान्य का समागम और स्त्री – पुत्रादि का सुख होता है।

गुरू प्रत्यन्तर में सूर्य की सूक्ष्मदशा का फल

वातपित्तप्रकोपश्च श्लेष्मोद्रेकस्तु दारूणः।
रसव्याधिकृतं शूलं गुरोः सूक्ष्मगते रवौ।।

गुरू के प्रत्यन्तर में सूर्य की सूक्ष्म दशा हो तो वात – पित्त का प्रकोप एवं कफ और रस – विकार से शूल रोग होता है।

गुरू प्रत्यन्तर में चन्द्रमा की सूक्ष्मदशा का फल

छत्रचामरसंयुक्तं वैभवं पुत्रसम्पदः।
नेत्रकुक्षिगता पीडा गुरोः सूक्ष्मगते विधौ।।

गुरू के प्रत्यन्तर में चन्द्रमा की सूक्ष्म दशा हो तो छत्र, चामरयुत ऐश्वर्य, पुत्रोत्पत्ति एवं नेत्र तथा कुक्षि में पीड़ा होती है।

गुरू प्रत्यन्तर में मंगल की सूक्ष्मदशा का फल

स्त्रीजनाच्च विषोत्पत्तिर्बन्धनं च रूजोभयम्।
देशान्तरगमो भ्रान्तिर्गुरोः सूक्ष्मगते कुजे।।

गुरू के प्रत्यन्तर में मंगल की सूक्ष्म दशा हो तो स्त्री द्वारा विष का प्रयोग, बन्धन, रोगभय, दशान्तर में भ्रमण और बुद्धिभ्रम हो जाता है।

गुरू प्रत्यन्तर में राहु की सूक्ष्मदशा का फल

व्याधिभिः परिभूतिः स्याच्चौरैरपहृतं धनम्।
सर्पवृश्चिकभीतिश्च गुरोः सूक्ष्मगतेऽप्यगौ।।

गुरू के प्रत्यन्तर में राहु की सूक्ष्मदशा हो तो रोगोत्पत्ति, चोर से धन का अपहरण एवं सर्प, बिच्छू आदि जन्तुओं से भय रहता है।

शनि के दशा में शनि के अन्तर में, शनि के प्रत्यन्तर में शनि सूक्ष्मदशा फल –

शनि प्रत्यन्तर में शनि के सूक्ष्म दशा फल –

धनहानिर्महाव्याधिः वात – पीडा – कुलक्षयः।
भिन्नाहारी महादुःखी निजसूक्ष्मगते शनौ।।

शनि के प्रत्यन्तर में शनि की ही सूक्ष्म दशा हो तो धनहानि, महाव्याधि, वात से पीड़ा, कुलनाश, पृथक् भोजन और दुःख होता है।

शनि प्रत्यन्तर में बुध की सूक्ष्म दशा फल –

वाणिज्यवृत्तेर्लाभश्च विद्याविभवमेव च।
स्त्रीलाभश्च महीप्राप्तिः शनेः सूक्ष्मगते बुधे।।

शनि के प्रत्यन्तर में बुध की सूक्ष्म दशा हो तो व्यापार से लाभ, विद्या और ऐश्वर्य की प्राप्ति एवं स्त्री तथा भूमि का लाभ होता है।

शनि प्रत्यन्तर में केतु की सूक्ष्म दशा फल

चौरोपद्रव कुष्ठादिवृतिक्षय विगुम्फनम्।
सर्वांगपीडनं व्याधिः शनेः सूक्ष्मगते ध्वजे।।

शनि के प्रत्यन्तर में केतु की सूक्ष्म दशा हो तो चोरों का उपद्रव, कुष्ठादि रोग का भय, जीविका का नाश, गुम्फन और समस्त अंगों में पीड़ा होती है।

शनि प्रत्यन्तर में शुक्र की सूक्ष्म दशा फल –

ऐश्वर्यमायुधाभ्यासः पुत्रलाभोऽभिषेचनम्।
आरोग्यं धनकामौ च शनेः सूक्ष्मगते भृगौ।।

शनि के प्रत्यन्तर में शुक्र की सूक्ष्म दशा हो तो ऐश्वर्यलाभ, शस्त्राभयास, पुत्रोत्पत्ति, अभिषेक, आरोग्य एवं धन और मनोकामना की सिद्धि होती है।

शनि प्रत्यन्तर में सूर्य की सूक्ष्म दशा फल

राजतेजोऽधिकारत्वं स्वगृहे जायते कलिः।
किंचित्पीडा स्वदेहोत्था शनेः सूक्ष्मगते रवौ।।

शनि के प्रत्यन्तर में सूर्य की सूक्ष्म दशा हो तो राजा से वैरभाव, अपने गृह में झगड़ा और अपने शरीर में भी कुछ पीड़ा होती है।

शनि प्रत्यन्तर में चन्द्रमा की सूक्ष्म दशा फल

स्फीतबुद्धिर्मरारम्भो मन्दतेजा बहुव्ययः।
स्त्रीपुत्रैश्च समं सौख्यं शनेः सूक्ष्मगते विधौ ।।

शनि की प्रत्यनतर में चन्द्रमा की सूक्ष्म दशा हो तो बुद्धि में अधिक निर्मलता, बड़े कार्य का प्रारम्भ, छवि में न्यूनता, अधिक खर्च एवं स्त्री - पुत्र से सुख होता है।

शनि प्रत्यन्तर में मंगल की सूक्ष्म दशा फल

तेजोहानिर्महोद्वेगो वह्निमान्द्यं भ्रमः कलिः।
वातपित्तकृता पीडा शनेः सूक्ष्मगते कुजे ।।

शनि के प्रत्यनतर में मंगल की सूक्ष्म दशा हो तो कान्ति की हानि, उद्वेग, अग्निमन्दता, भ्रम, कलह और वात – पित्तजन्य रोगों से पीड़ा होती है।

शनि प्रत्यन्तर में राहु की सूक्ष्म दशा फल

पितृमातृविनाशश्च मनोदुःखं गुरू – व्ययम्।
सर्वत्र विफलत्वं च शनेः सूक्ष्मगतेऽप्यहौ ।।

शनि के प्रत्यन्तर में राहु की सूक्ष्म दशा हो तो पितृ – मातृ – वियोग, मानसिक दुःख, अधिक व्यय एवं सभी स्थलों से विफलता की प्राप्ति होती है।

शनि प्रत्यन्तर में गुरू की सूक्ष्म दशा फल

सन्मुद्राभोगसम्ममानं धनधान्यविवर्द्धनम्।
छत्रचामरसम्प्राप्तिः शनेः सूक्ष्मगते गुरौ ।।

शनि के प्रत्यनतर में गुरू की सूक्ष्म दशा हो तो सुन्दर मुद्रा का भोग, सम्मान, धन – धान्यादि सम्पत्ति का लाभ और सबसे प्रीति होती है।

बुध के दशा में बुध के अन्तर में, बुध के प्रत्यन्तर में बुध सूक्ष्मदशा फल –

बुध प्रत्यन्तर में बुध की सूक्ष्म दशा फल –

सौभाग्यं राजसम्मानं धनधान्यादिसम्पदः।
सर्वेषां प्रियदर्शी च निजसूक्ष्मगते बुधे ।।

बुध के प्रत्यन्तर में बुध की सूक्ष्म दशा हो तो सौभाग्य, राजा से सम्मान, धन – धान्यादि सम्पत्ति का लाभ और सबसे प्रीति होती है।

बुध प्रत्यन्तर में केतु की सूक्ष्म दशा फल

बालग्रहोऽग्निभीस्ताप: स्त्रीगदोद्भवदोषभाक्।

कुमार्गी कुत्सिताशी च बौधे सूक्ष्मगते ध्वजे।।

बुध के प्रत्यन्तर में केतु की सूक्ष्म दशा हो तो बालग्रह का दोष, अग्निभय, सन्ताप, स्त्री को रोग, कुमार्ग में प्रवेश और कुभोजन प्राप्त होता है।

बुध प्रत्यन्तर में शुक्र की सूक्ष्म दशा फल

वाहनं धनसम्पत्तिर्जलजान्नार्थसम्भव:।

शुभकीर्तिर्महाभोगो बौधे सूक्ष्मगते भृगौ।।

बुध के प्रत्यन्तर में शुक्र की सूक्ष्म दशा हो तो वाहन, धन, सम्पत्ति, जल से उत्पन्न अन्न और धन की प्राप्ति, सुन्दर यश और महाभोग की प्राप्ति होती है।

बुध प्रत्यन्तर में सूर्य की सूक्ष्म दशा फल

ताडनं नृपवैषम्यं बुद्धिस्खलनरोगभाक्।

हानिर्जनापवादं च बौधे सूक्ष्मगते रवौ।।

बुध के प्रत्यन्तर में सूर्य की सूक्ष्म दशा हो तो ताडन, राजा से विषमता, चंचल बुद्धि, रोग, धन – हानि और लोक में अपयश होता है।

बुध प्रत्यन्तर में चन्द्रमा की सूक्ष्म दशा फल

सुभग: स्थिरबुद्धिश्च राजसम्मानसम्पद:।

सुहृदां गुरूसंचारो बौधे सूक्ष्मगते विधौ।।

बुध के प्रत्यन्तर में चन्द्रमा की सूक्ष्म दशा हो तो सौभाग्य, स्थिर बुद्धि, राजसम्मान, सम्पत्ति, मित्र तथा गुरूजनों का समागम होता है।

बुध प्रत्यन्तर में मंगल की सूक्ष्म दशा फल

अग्निदाहो विषोत्पत्तिर्जडत्वं च दरिद्रता।

विभ्रमश्च महोद्वेगो बौधे सूक्ष्मगते कुजे।।

बुध के प्रत्यन्तर में मंगल की सूक्ष्म दशा हो तो अग्नि से दाह और विषभय, मूर्खता, दरिद्रता, मतिभ्रम एवं उद्वेग होता है।

बुध प्रत्यन्तर में राहु की सूक्ष्म दशा फल

अग्निसर्पनृपाद् भीति: कृच्छ्रादरिपराभव:।

भूतावेशभ्रमाद् भ्रान्तिर्बौधे सूक्ष्मगतेऽप्यहौ।।

बुध के प्रत्यन्तर में राहु की सूक्ष्म दशा हो तो अग्नि, सर्प और राजा से भय, अधिक परिश्रम से शत्रु पराजित एवं भूतों से उपद्रव द्वारा मतिभ्रम होता है।

बुध प्रत्यन्तर में गुरू की सूक्ष्म दशा फल

गृहोपकरणं भव्यं दानं भोगादिवैभवम्।
राजप्रसादसम्पत्तिर्बौधे सूक्ष्मगते गुरौ॥

बुध के प्रत्यन्तर में गुरू की सूक्ष्म दशा हो तो सुन्दर गृह का निर्माण, दान में तत्परता, भोग – ऐश्वर्य की वृद्धि एवं राजदरबार से धनलाभ होता है।

बुध प्रत्यन्तर में शनि की सूक्ष्म दशा फल

वाणिज्यवृत्तिलाभश्च विद्याविभवमेव च।
स्त्रीलाभश्च महाव्याप्तिर्बौधे सूक्ष्मगते शनौ॥

बुध के प्रत्यन्तर में शनि की सूक्ष्म दशा हो तो व्यापार से लाभ, विद्या, ऐश्वर्य की वृद्धि, स्त्री लाभ और व्यापकता होती है।

केतु के दशा में केतु के अन्तर में, केतु के प्रत्यन्तर में केतु सूक्ष्मदशा फल –

केतु प्रत्यन्तर में केतु की सूक्ष्म दशा फल –

पुत्रदारादिजं दु:खं गात्रवैषम्यमेव च।
दारिद्रयाद् भिक्षुवृत्तिश्च नैजे सूक्ष्मगते ध्वजे॥

केतु के प्रतयन्तर में केतु की सूक्ष्म दशा हो तो पुत्र – स्त्री से दु:ख, शरीर में विषमता एवं दरिद्रता के कारण भिक्षावृत्ति होती है।

केतु प्रत्यन्तर में शुक्र की सूक्ष्म दशा फल

रोगनाशोऽर्थलाभश्च गुरूविप्रानुवत्सल:।
संगम: स्वजनै: सार्द्धं केतो: सूक्ष्मगतो भृगौ॥

केतु के प्रत्यन्तर में शुक्र की सूक्ष्म दशा हो तो रोग से निवृत्ति, धनलाभ, गुरू और ब्राह्मण में श्रद्धा एवं स्वजनों का संगम होता है।

केतु प्रत्यन्तर में सूर्य की सूक्ष्म दशा फल

युद्धं भूमिविनाशश्च विप्रवास: स्वदेशत:।
सुहृद्विपत्तिरार्तिश्च केतो: सूक्ष्मगते रवौ॥

केतु के प्रत्यन्तर में सूर्य की सूक्ष्म दशा हो तो कलह, भूमि की हानि, देशान्तर में निवास, मित्रों को भी विपत्ति और शत्रुभय होता है।

केतु प्रत्यन्तर में चन्द्र की सूक्ष्म दशा फल

दासीदाससमृद्धिश्च युद्धे लब्धिर्जयस्तथा।
ललिता कीर्तिरूत्पन्ना केतो: सूक्ष्मगते विधौ॥

केतु के प्रत्यन्तर में चन्द्रमा की सूक्ष्म दशा हो तो दास – दासियों की वृद्धि, युद्ध में विजय और लोक में सुन्दर यश प्राप्त होता है।

केतु प्रत्यन्तर में भौम की सूक्ष्म दशा फल

आसने भयमश्वादेश्चौरदुष्टादिपीडनम्।
गुल्मपीडा शिरोरोग: केतो: सूक्ष्मगते कुजे ॥

केतु के प्रत्यन्तर में मंगल की सूक्ष्म दशा हो तो अश्व आदि सवारियों से गिरने का भय, चोरों और दुष्टों से पीड़ा एवं गुल्म तथा मस्तक रोग होता है।

केतु प्रत्यन्तर में राहु सूक्ष्म दशा फल

विनाश: स्त्रीगुरूणां च दुष्टस्त्रीसंगमाल्लघु:।
वमनं रूधिरं पित्तं केतो: सूक्ष्मगतेऽप्यगौ ॥

केतु के प्रत्यन्तर में राहु की सूक्ष्म दशा हो तो स्त्री तथा गुरू आदि मान्य जनों का विनाश, दुष्टा स्त्री के संग के कारण लघुता, वमन, रक्तविकार और पित्त सम्बन्धी रोग होता है।

केतु प्रत्यन्तर में गुरू की सूक्ष्म दशा फल

रिपोर्विरोध: सम्पत्ति: सहसा राजवैभवम्।
पशुक्षेत्रविनाशार्ति: केतो: सूक्ष्मगते गुरौ ॥

केतु के प्रत्यन्तर में गुरू की सूक्ष्म दशा हो तो शत्रु से विरोध, अकस्मात् राजवैभव की प्राप्ति एवं पशु और क्षेत्र की हानि के कारण दु:ख होता है।

केतु प्रत्यन्तर में शनि की सूक्ष्म दशा फल

मृषा पीडा भवेत् क्षुद्रसुखोत्पत्तिश्च लंघनम्।
स्त्रीविरोध: सत्यहानि: केतो: सूक्ष्मगते बुधे ॥

केतु के प्रत्यन्तर में शनि की सूक्ष्म दशा हो तो मिथ्या पीड़ा, स्वल्प सुख, उपवास, स्त्री से विरोध और सत्यता की हानि होती है।

केतु प्रत्यन्तर में बुध की सूक्ष्म दशा फल

नानाविधजनाप्तिश्च विप्रयोगोऽरिपीडनम्।
अर्थसम्पत्समृद्धिश्च केतो: सूक्ष्मगते बुधे ॥

केतु के प्रत्यन्तर में बुध की सूक्ष्म दशा हो तो विपक्षियों का नाश, महान् सुख एवं शिवालय या देवमन्दिर तथा तडाग – कूपादि जलाशय का निर्माण होता है।

शुक्र के दशा में शुक्र के अन्तर में, शुक्र के प्रत्यन्तर में शुक्र सूक्ष्मदशा फल –

शुक्र के प्रत्यन्तर में शुक्र की सूक्ष्म दशा फल –

शत्रुहानिर्महत्सौख्यं शंकरालयनिर्मिति:।

तडागकूपनिर्माणं निजसूक्ष्मगते भृगौ ॥

शुक्र के प्रत्यन्तर में शुक्र की सूक्ष्म दशा हो तो विपक्षियों का नाश, महान सुख एवं शिवालया या देवमन्दिर तथा तडाग कूपादि जलाशय का निर्माण होता है।

शुक्र के प्रत्यन्तर में सूर्य की सूक्ष्म दशा फल

उरस्तापो भ्रमश्चैव गतागतविचेष्टितम्।
क्वचिल्लाभः क्वचिद्धानिर्भृगोः सूक्ष्मगते रवौ ॥

शुक्र के प्रत्यन्तर में सूर्य की सूक्ष्म दश हो तो हृदय में सन्तोष, मतिभ्रम, इधर - उधर घूमना, कभी लाभ एवं कभी हानि होती है।

शुक्र के प्रत्यन्तर में चन्द्रमा की सूक्ष्म दशा फल

आरोग्यं धनसम्पत्तिः कार्यलाभो गतागतैः।
बुद्धिविद्याविवृद्धिः स्याद् भृगोः सूक्ष्मगते विधौ ॥

शुक्र के प्रत्यन्तर में चन्द्रमा की सूक्ष्म दशा हो तो नीरोगता, धन – सम्पत्ति की वृद्धि, गमनागमन से कार्यसिद्धि एवं बुद्धि और विद्या की वृद्धि होती है।

शुक्र के प्रत्यन्तर में भौम की सूक्ष्म दशा फल

जडत्वं रिपुवैषम्यं देशभ्रंशो महद्भयम्।
व्याधिदुःखसमुत्पत्तिर्भृगोः सूक्ष्मगते कुजे ॥

शुक्र के प्रत्यन्तर में मंगल की सूक्ष्म दशा हो तो मूर्खता, शत्रु से विषमता, देशत्याग, भय, रोग और दुःख होता है।

शुक्र के प्रत्यन्तर में राहु की सूक्ष्म दशा फल

राज्याग्निसर्पजा भीतिर्बन्धुनाशो गुरूव्यथा।
स्थानच्युतिर्महाभतिर्भृगोः सूक्ष्मगतेऽप्यहौ ॥

शुक्र के प्रत्यन्तर में राहु की सूक्ष्म दशा हो तो राजा, अग्नि और सर्प से भय, बन्धु – नाश, महारोग, स्थानत्याग और महाभय होता है।

शुक्र के प्रत्यन्तर में गुरू की सूक्ष्म दशा फल

सर्वत्र कार्यलाभश्च क्षेत्रार्थविभवोन्नतिः।
वणिग्वृत्तेर्महालब्धिर्भृगोः सूक्ष्मगते गुरौ ॥

शुक्र के प्रत्यन्तर में गुरू की सूक्ष्म दशा हो तो सभी जगह से लाभ, खेती और धन ऐश्वर्य की उन्नति एवं व्यापार से अधिक लाभ होता है।

शुक्र के प्रत्यन्तर में शनि की सूक्ष्म दशा फल

शत्रुपीडा महद्दुखं चतुष्पादविनाशनम्।
स्वगोत्रगुरूहानिः स्याद् भृगोः सूक्ष्मगते शनौ ॥

शुक्र के प्रत्यन्तर में शनि की सूक्ष्म दशा हो तो शत्रु से पीड़ा, महादु:ख, पशुओं की हानि एवं अपने वंश और गुरूजनों की हानि सम्भव होती है।

शुक्र के प्रत्यन्तर में बुध की सूक्ष्म दशा फल

> **बान्धवादिषु सम्पत्तिर्व्यवहारो धनोन्नति:।**
> **पुत्रदारादित: सौख्यं भृगो: सूक्ष्मगते बुधे ।।**

शुक्र के प्रत्यन्तर में बुध की सूक्ष्म दशा हो तो अपने बन्धु बान्धवों में धन की वृद्धि, व्यवहार कुशलता के कारण धनलाभ एवं पुत्र और स्त्री से सुख होता है।

शुक्र के प्रत्यन्तर में केतु की सूक्ष्म दशा फल

> **अग्निरोगो महापीडा मुखनेत्रशिरोव्यथा।**
> **संचितार्थात्मन: पीडा भृगो: सूक्ष्मगते ध्वजे ।।**

शुक्र के प्रत्यन्तर में केतु की सूक्ष्म दशा हो तो अग्निभय, महारोग से पीड़ा, मुख, नेत्र और मस्तक में पीड़ा, संचित धन का नाश और मानसिक सन्ताप होता है।

6.5 सारांश:-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि प्रत्यन्तर दशामान को पृथक् – पृथक् दशावर्ष से गुणाकर 120 का भाग देने पर अलग – अलग सूक्ष्मान्तर्दशा का मान होता है। जैसे सूर्य की महादशा में सूर्य की ही अन्तर्दशा में सूर्य की प्रत्यन्तर्दशा 5।24 दिनादि है, इसको 5 × 60 + 24 = 324 घटयात्मक हुआ, इसमें सूर्य दशा वर्ष 6 से गुणा किया तो 1944 हुआ, इसमें 120 का भाग दिया तो 16।12 घटयादि सूर्य दशा में सूर्यान्तर में में सूर्य प्रत्यन्तर में सूर्य की सूक्ष्म दशा हुई। इसी प्रकार पूर्वोक्त सूर्य की प्रत्यन्तर्दशा 324 को चन्द्र दशावर्ष 10 से गुणाकर 120 का भाग देने से 27।0 घटयादि चन्द्र की सूक्ष्म दशा हुई। इस प्रकार से – 324 × 7/120 = 18/54 घटयादि , 324 × 18/120 = 48/36 घटयादि, 324 × 16/120 = 43/12 घटयादि, 324 × 19/120 = 51/18 घटयादि, 324 × 17/120 = 45/54 घटयादि, 324 × 7/120 = 18/54 घटयादि, 324 × 20/120 = 54/0 घटयादि। विंशोत्तरी दशा,अन्तर्दशा,प्रत्यन्तर्दशा के पश्चात् सूक्ष्मान्तर्दशा का ज्ञान सूक्ष्म फलादेशादि कार्य के लिए अतिआवश्यक है। कभी – कभी प्रचलित महादशाओं में हम ठीक – ठीक फल को कहने में सक्षम नहीं हो पाते, वैसी परिस्थिति में और अधिक सूक्ष्मता के लिए आचार्यों ने अन्तर्दशा, प्रत्यन्तर्दशा एवं उससे भी सूक्ष्म सूक्ष्मान्तर्दशा का विधान और उसके फलों को कहा है। इसके ज्ञान से पाठक फलादेशादि कर्त्तव्य में और सूक्ष्मता प्राप्त करने में सफल हो सकेगें।

6.6 पारिभाषिक शब्दावली

अन्तर्दशा – विंशोत्तरी दशाओं के अन्दर पड़ने वाली दशा अन्तर्दशा कहलाती है।

प्रत्यन्तर्दशा – प्रत्यन्तर्दशा अन्तर्दशा से सूक्ष्म होती है।

सूक्ष्मन्तर्दशा - दशाओं में सबसे सूक्ष्म सूक्ष्मन्तर्दशा होती है।

स्थानत्याग – स्थान का त्याग

पश्चात् – बाद में

जलाशय – जल का स्थान

धनोन्नति – धन का बढ़ना

6.7 बोधप्रश्नों के उत्तर

1. ख
2. क
3. ग
4. ख
5. क

6.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वृहत्पराशरहोराशास्त्र – आचार्य पराशर, चौखम्भा प्रकाशन

ज्योतिष सर्वस्व – सुरेश चन्द्र मिश्र, चौखम्भा प्रकाशन

वृहज्जातक – वराहमिहिर , चौखम्भा प्रकाशन

सचित्र ज्योतिष शिक्षा - हेमांगद ठाकुर

6.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. सूक्ष्म दशा क्या है। सूक्ष्मान्तर्दशा साधन की विधि बतलाते हुए विस्तार से उसका उल्लेख कीजिये।
2. सूक्ष्मान्तर्दशादि में सूर्यादि ग्रहों का होने वाली शुभाशुभ फल का विवेचन कीजिये।